Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाक्षिक

सारिका

वर्ष:२५; अंक:३४९; १६ से ३१ जनवरी '८४

080585

JAN-DEC
चन्दे से प्राप्त संख्या
प्राप्त दिनांक
1984

टाइम्स आफ इंडिया प्रकाशन
३.५० रुपया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरोध...

इसलिए कि बच्चा होने के पहले आपको प्यार और खुशियां प्राप्त करने के अनेक अवसर मिलें

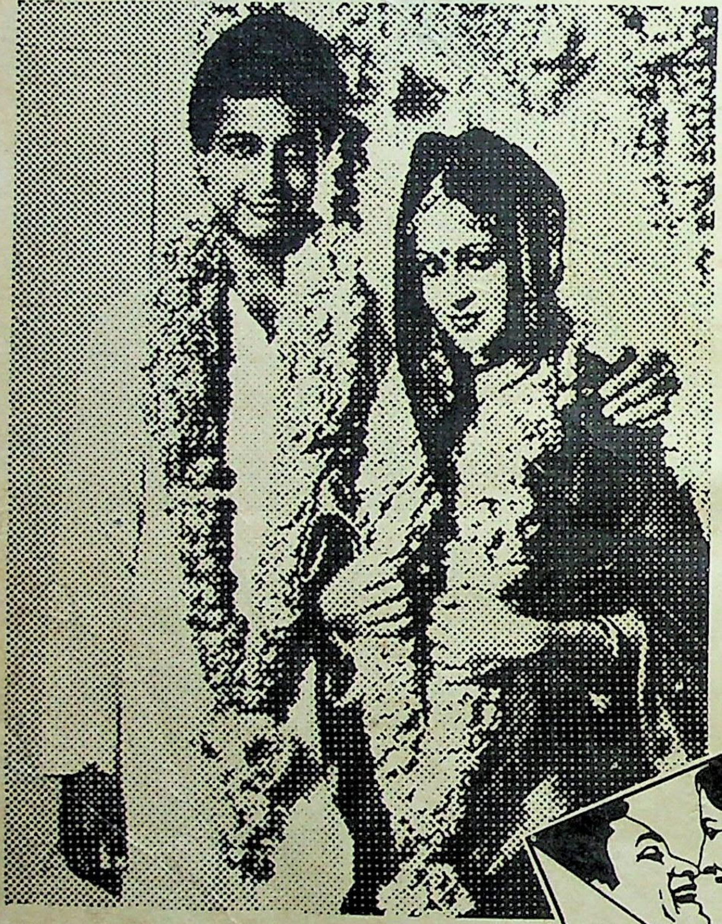

आम तौर पर जब आपको एकसाथ रहने की जरूरत पड़ती है, निरोध आपको एक साथ रहने में सहायता प्रदान करता है। यह आपको प्रथम बच्चे को दुनिया दिखाने की योजना तैयार करने हेतु पर्याप्त समय प्रदान करता है।

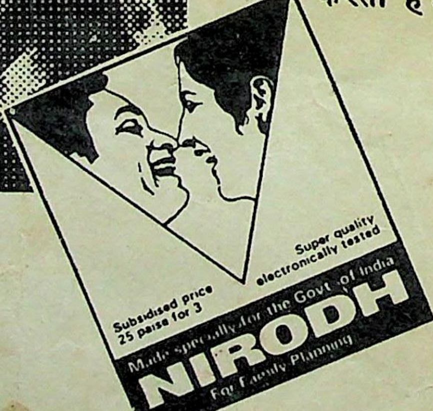

निरोध प्रयोग कीजिए

सुखी और निश्चिन्त वैवाहिक जीवन के लिए—

वितरक : ब्रुक बाण्ड, लिपटन, हिन्दुस्तान लीवर, आई.टी.सी, टाटा आयल मिल्स, यूनियन कारबाइड, आई-डी-पी-एल, स्मिथ स्टैनिस्ट्रीट, इण्डियन ऑयल कॉरपोरेशन, भारत पेट्रोलियम, हिन्दुस्तान पेट्रोलियम और अरसन मैच इण्डस्ट्रीज।

davp. 83/221

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की धर्म-परायण जनता के लिए 'पुस्तक महल की श्रद्धापूर्ण भेंट

देवी-देवताओं की महिमाएं

* हनुमान महिमा (पृष्ठ 288)
* गणेश महिमा (पृष्ठ 288)
* शिव महिमा (पृष्ठ 344)
* दुर्गा महिमा (पृष्ठ 296)
* लक्ष्मी महिमा (पृष्ठ 272)
* विष्णु महिमा (पृष्ठ 352)

1 प्रत्येक पुस्तक के ज्ञानखण्ड में—उस देवी-देवता के पृथ्वी पर अवतरित होने के कारण और परिस्थितियां, उसकी दिव्य शक्ति और दिव्य लीलाओं का प्रामाणिक वर्णन है।

2 इन पुस्तकों के भक्ति खण्ड में उनके महान भक्तों से संबन्धित रोचक कथाएं तथा उनकी भक्ति के चमत्कार वर्णित हैं, जिन्हें पढ़कर आप गद्गद् हो उठेंगे।

3 उपासना खण्ड में—शास्त्रसम्मत विधि-विधान से उनकी पूजा व उपासना करने का सरल ढंग दिया गया है।

4 प्रत्येक पुस्तक के तीर्थ खण्ड में—भारत तथा विश्व के अन्य देशों में स्थापित उनके प्रमुख मंदिरों एवं भव्य मूर्तियों से सम्बन्धित रोचक कथाएं आदि हैं।

5 इनके अतिरिक्त—पूजन से संबंधित मंत्र तथा धूप, दीप नैवेद्य, आरती आदि समर्पित करने के समय के मंत्रादि भी दिए हैं।

* **इस ग्रंथ माला के अन्तर्गत हिन्दू धर्म के प्रमुख देवी-देवताओं का जीवन-दर्शन सरल-सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया है।**
* **ईश्वर के रूपों, आविर्भाव, जीवन-दर्शन, व्यापकता, प्रामाणिकता और उसकी अदृश्य शक्ति को जानने-समझने की जिज्ञासा प्रायः मनुष्यों में बनी रहती है। इन्हीं जिज्ञासाओं का समाधान आपको इस ग्रंथ माला में मिलेगा।** प्रत्येक का मूल्य 12/- डाकखर्च 3/-

हमारे पूज्य तीर्थ

कैलास पर्वत से कन्याकुमारी, कामाख्या से कच्छ तक के संपूर्ण तीर्थों का विश्वकोश !

तीर्थ स्थान हमारे देश के प्राण हैं। भारत भूमि तीर्थों से भरी पड़ी है। यदि आप तीर्थ यात्रा करना चाहते हैं, तो यह पुस्तक आपको, तीर्थों की धार्मिक, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उपयोग में आने वाले साज-सामान, आने-जाने के मार्ग का निर्देश, ठहरने व आसपास के अन्य दर्शनीय स्थलों की सुरुचिपूर्ण विस्तृत वांछित जानकारी प्रदान करेगी और यदि आप तीर्थ यात्रा नहीं कर सकते, तो यह पुस्तक घर पर ही आपको तीर्थों का सुफल प्रदान करेगी। तीर्थ यात्रियों, पर्यटकों एवं धर्म प्रेमियों के लिए समान रूप से उपयोगी !

तीर्थों में से कुछेक की झलक :

* चार धाम कौन से हैं, ये इतने महत्त्वपूर्ण क्यों हैं?
* द्वादश ज्योतिर्लिंग कैसे बने?
* सप्तपुरी यात्रा कितनी सुफल दायक है?
* त्रिस्थलियों का माहात्म्य क्या है?
* पंच सरोवर कितने पावन हैं?
* मातृ गया का विधि-विधान और स्थान ...?
* पितृ गया का विधि-विधान और स्थान ...?
* बावन शक्तिपीठों का जन्म कैसे हुआ?
* जैन तीर्थ एवं सिक्ख तीर्थों की महिमा क्या है?

मंदिरों व मूर्तियों के 180 छायाचित्रों से सुसज्जित

बड़े साइज़ के 208 पृष्ठ : मूल्य 20/- डाकखर्च 4/-

1. कोई एक पुस्तक लेने पर, 1/- मूल्य का सचित्र 2 रंगा 'हनुमान चालीसा' मुफ्त
2. कोई दो पुस्तकें लेने पर, 2/50 मूल्य का सचित्र 2 रंगा 'आरती संग्रह' मुफ्त
3. कोई तीन पुस्तकें लेने पर दोनों मुफ्त तथा डाकखर्च माफ

अपने निकट के बुक स्टाल एवं ए.एच. व्हीलर के रेलवे तथा बस अड्डों पर स्थित बुक स्टालों पर मांग करें या वी. पी. पी. द्वारा मंगाने के लिए लिखें

पुस्तक महल
• खारी बावली, दिल्ली-110006.
• 10 B, नेता जी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Vandana/PM/H-66

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगला अंक

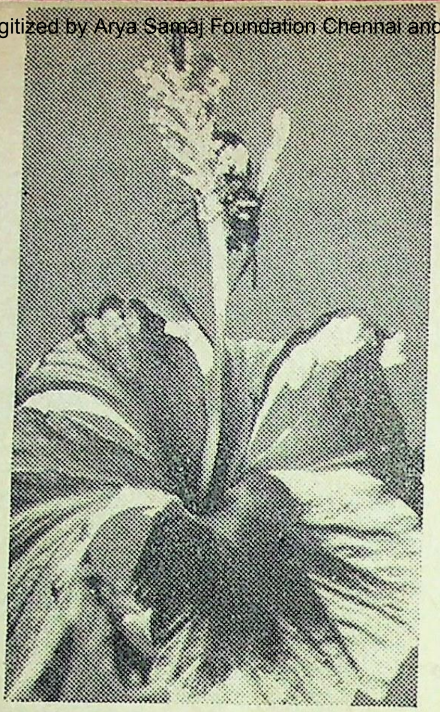

कितने गमों की भीड़ है हर आदमी के साथ...!

—क्या गमों को किसी संख्या में गिना जा सकता है? ... शायद नहीं, पर इतना जरूर हो सकता है कि कुछ खास-खास जख्मों पर उंगली रखकर तय हो जाये कि कुल मिलाकर वे कौन-से मामलात हैं, जो आदमी को गमों की भीड़ में अकेला छोड़ देते हैं! —इस बार गम की इसी जानी-अनजानी दुनिया को अपनी भरपूर कलात्मकता से रेखांकित कर रही हैं—

नवारुण वर्मा, कैलाश नारद, नरेंद्र मौर्य, विश्वनाथ, चंद्रमोहन प्रधान, धीरेंद्र अस्थाना, सुरेंद्र अरोड़ा, एस. एम. चांद की सशक्त एवं जीवंत कहानियां

▣ **दशार्क**
—जैनेंद्र कुमार के धारावाही उपन्यास की अगली विवादास्पद कड़ी.

▣ **तुलसीदास चंदन घिसैं**
—सिद्धांत के संकट! ...के संदर्भ में होने वाली उठक-बैठक, भाग-दौड़ आदि की उलटबांसियों को चंदन में लपेटकर प्रस्तुत कर रहे हैं—हरिशंकर परसाई

▣ **गलियां : जहां इतिहास कैद है**
—इतिहास के अनजाने मगर बहुत जरूरी हादसों की अगली कहानी—बाला दुबे की कलम से

▣ **शरारत**
—चंद्रकांत बक्षी द्वारा हंसाती-तिलमिलाती सामाजिक/राजनैतिक चुटकियां

▣ **शहर के बीच उभरता एक और शहर**
—शहर, जिसके बाशिंदे कहीं भी क्यों न चले जायें, उनकी आंखों में किसी सपने-सा तैरता हुआ... हमेशा उनका पीछा करता रहता है. इस शहर का नाम है—ग्वालियर, जिसमें जिंदगी की हर धड़कन और रहगुजर का बयान कर रहे हैं—हरीश पाठक.

▣ **भरतमुनि के वंशधर**
—'रंगमंच पिछले दस साल से एक जगह कदमताल कर रहा है!' प्रख्यात नाट्यकार एम. के. रैना से सूत्रधार के कुछ खरे-खरे सवाल!

▣ **कथा-सूत्र**
—राकेश वत्स की कलम से.

▣ **मरे सात जन्म**
—हंसराज रहबर की आत्मकथा का एक महत्वपूर्ण अंश

▣ **तस्वीर बोलती है**
—छायांकन : एन. त्यागराजन

आपकी बात, अपनी बात, और भुलाये न बने, पखवारे की पुस्तकें, हलचल, चलते-चलते, लघुकथा, गजल आदि सभी स्थायी स्तंभों साहित—

सारिका

1 फरवरी, 1984

साहित्य के माध्यम से समाजिक मैत्री का पाक्षिक प्रयास

शीघ्र प्रकाश्य

लघुकथा विशेषांक

सारिका : १ मार्च, १९८४

किसी भी शब्द का प्रायः एक ही अर्थ होता है, मगर एहसास अनेक... कभी तेज, तल्ख, तीखा तो कभी हंसता, गुदगुदाता तथा कटाक्ष करता हुआ! ऐसे ही एहसासों को समेटता लघुकथाओं का यह दस्तावेज जहां लघुकथा का औचित्य सिद्ध करेगा, वहां यह भी कि कहानी की समृद्ध परंपरा में लघुकथा का भविष्य क्या है!

• **अपनी प्रति आज ही आरक्षित करवा लें.**

छायांकन—यह चित्र : अनिल सूद, ऊपर का चित्र : ज्ञान दीक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

कहानियों और कथा-जगत की जीवंत पाक्षिकी
वर्ष : 24, अंक : 349, 16 से 31 जनवरी, 1984

कहानियां/उपन्यास अंश

8. चूहा भी हंसता है : अनत रमेश
14. खिड़की : नासिरा शर्मा
24. शेष गांव : सच्चिदानंद धूमकेतु
29. किस्सा एक चोर की मौत का : सुरेश उनियाल
37. समय-चक्र : धीरेंद्र वर्मा
40. दो बूढ़े : प्रियंवद
46. खुशी : हरिपाल त्यागी
50. जंगल में माचिस : गौरीशंकर नागदंश
53. भेड़िया : जसवंतसिंह विरदी
56. सबूत : चंचल
60. सड़क : पूरन मनराल

धारावाही आयोजन

63. दशार्क (दसवीं किस्त) : जैनेंद्र कुमार

लघु रचनाएं

10. उत्तरदायित्व : अरविंद ओझा
12. ग़ज़ल : रघुनाथ प्यासा
13. प्रतिक्रिया : राजेंद्र परदेसी
19. कुआं : सीतेश आलोक
26. लीक से हटकर : विष्णु प्रभाकर
28. ग़ज़ल : विनोद तिवारी
32. पत्नी सुरक्षा समिति बनाओ : सुरेश जैन
39. प्यास : दिनेश बैजल राज
41. ग़ज़ल : हरजीत सिंह
42. चोर : दिविक रमेश
66. एक और बलात्कार : भगवती प्रसाद द्विवेदी

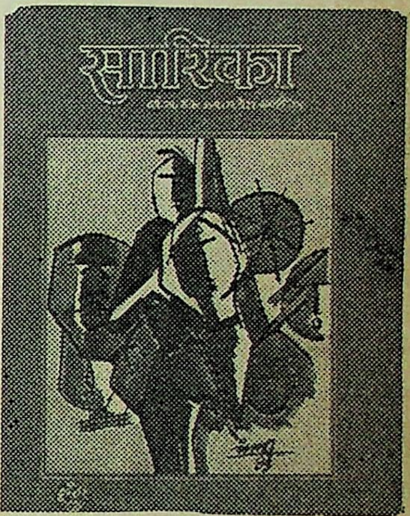

आवरण : चंचल
इस अंक की सज्जा : रवि शर्मा

अन्य आकर्षण

6. आपकी बात
21. तुलसीदास चंदन घिसैं: हरिशंकर परसाई
35. मथुरादास की डायरी : मथुरादास
49. तस्वीर बोलती है : योग जॉय
52. कथासूत्र : राकेश वत्स
55. . . . और भुलाये न बने
62. शरारत : चंद्रकांत बक्शी
68. गलियां : जहां इतिहास कैद है : बाला दुबे
70. पखवारे की पुस्तकें : देवेश ठाकुर, बलराम
72. भरतमुनि के वंशधर : सूत्रधार

सहायक संपादक :
अवधनारायण मुद्गल
उप-संपादक :
रमेश बत्तरा, सुरेश उनियाल, बलराम

संपादकीय पता : 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

पाठकों की सुविधा के लिए

हमें अक्सर पाठकों से शिकायती पत्र मिलते हैं कि उन्हें 'सारिका' अपने बुक स्टॉल पर मिल नहीं पाती, उनके पहुंचने से पहले ही सारी प्रतियां बिक जाती हैं. पाठकों की सुविधा के लिए हम उन्हें सलाह देंगे कि वे अपना चंदा आज ही चेक/ड्राफ्ट/मनीआर्डर के रूप में नीचे दिये गये कूपन के साथ हमें भेजें ताकि उन्हें 'सारिका' डाक से नियमित भिजवायी जा सके.

अब चंदे की रियायती दरें हैं :

वार्षिक : 80 रुपये
अर्धवार्षिक : 41 रुपये

कृपया मुझे/हमें निम्न पते पर एक वर्ष/छह माह के लिए 'सारिका' भेजने की व्यवस्था करें. समुचित राशि संलग्न है.

नाम. . . . .
पता. . . . .
. . . .
हस्ताक्षर. . . . .

चंदा तथा कूपन कृपया इस पते पर भेजें :

सर्कुलेशन मैनेजर,
सारिका, टाइम्स ऑफ इंडिया,
7, बहादुरशाह जफर मार्ग,
नयी दिल्ली-110002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी बात

नष्ट होती सार्थकता

कहानी **'आपरेशन जोनाकी'** वाकई बारूद साबित हुई. पढ़ते-पढ़ते ही मस्तिष्क में शोला कौंधा और एक भयंकर विस्फोट! आधे घंटे तक मस्तिष्क में सन्नाटा छाया रहा, ऐसा लगा जैसे विस्फोट के बाद विध्वंस का नजारा! कहानी गहरे दिल में उतर गयी. यह शोला ठंडा नहीं होना चाहिए, इससे पहले कि दिमाग को झंकृत करने के बाद शांति हो, विस्फोट पर विस्फोट चाहिए, ताकि निरंतरता बनी रहे. अंतराल से सार्थकता नष्ट हो जाती है. संजीव ने वाकई बारूदी कहानी लिखी है. **'अपराध'** और **'ऑपरेशन जोनाकी'** के बाद एक और धमाके का इंतजार है.

▣ **घनश्याम कर्णावत, जयपुर (राज.)**

कौन-सा गुनाह?

'सारिका', अंक 345 के अंतर्गत संजीव की कहानी **'ऑपरेशन जोनाकी'** सत्य के बहुत करीब वर्तमान प्रशासनिक एवं सामाजिक व्यवस्था की दोगली भूमिका पर बारूदी प्रहार है. पिछड़े इलाकों के भूमिहीन मजदूरों में व्याप्त असंतोष, बेकार बेरोजगार युवकों के अंदर दिन-प्रतिदिन बढ़ती हिंसात्मक उत्तेजना के कारणों को गहरे जाकर कहानी रूप देने के लिए संजीव को बधाई.

आजादी के 36 वर्ष बाद भी शासन द्वारा अंतिम आदमी को आम सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए बार-बार की जा रही घोषणाओं के बावजूद क्या वह सुविधा मिली? भूमिहीन खेतिहरों को जो जमीन मिली, क्या उस पर उनको हक प्राप्त हुआ? क्या प्रशासन द्वारा निर्धारित मजदूरी मिल रही है मजदूरों को? क्या पढ़े-लिखे युवकों को रोजगार की गारंटी मिली? यह कुछ ऐसे चंद जलते सवाल हैं, जो पूरे देश के समक्ष मुंह बाये खड़े हैं. जब भी इन प्रश्नों से ग्रस्त आम आदमी हक की मांग करता है, कुचला जाता है. अब यह प्रश्न दूसरा है कि कुचलने का रूप क्या है. क्या कारण है कि कल तक जो आम आदमी डर से सिर नहीं उठाता था, आज उसने उग्र रूप धारण कर लिया है? प्रगति के इस अंधे दौर में अगर पिछड़ा आम आदमी भी आगे आकर प्रगतिशील फ्रेम में अपना चेहरा मढ़ना चाहता है तो कौन-सा गुनाह है?

▣ **शशिभूषण सिंह, पटना (बिहार)**

प्रादेशिक भाषा का पुट

'सारिका' (16 से 30 नवंबर, 1983) पूरी पढ़ गया हूं. यूं तो इस अंक की प्रत्येक रचना अपने-आप में उपलब्धि रचना है, किंतु मैं यहां पर संजीव की कहानी **'आपरेशन जोनाकी'** एवं राकेश वत्स के धारावाहिक **कथासूत्र** की चर्चा करना उपयुक्त समझूंगा. राकेश वत्स ने **कथासूत्र** के माध्यम से एक अच्छी विचार श्रृंखला देने का निर्णय किया लगता है. **'ऑपरेशन जोनाकी'** नक्सलवादियों की पृष्ठभूमि पर लिखी संजीव की पैनी कलम का जीवंत उदाहरण है. अनिमेष दा के माध्यम से जोनाकी ग्राम के नक्सलवादियों, पुलिस की कारगुजारियों व घातों-प्रतिघातों का संजीव ने अपनी पूर्व कहानी **'अपराध'** की परंपरा को बढ़ाते हुए सफल चित्रण किया है. 'बाबा, एराई मजूमदार काकू के छुरी मेरे छीलो' जैसे प्रादेशिक भाषा शैली से युक्त संवादों द्वारा लेखक ने कहानी की प्रामाणिकता को एक ठोस संबल प्रदान किया है. साथ ही अनिमेष दा के मुंह से यह संवाद 'मेरा बेटा सौरभ अगर जिंदा होता तो 11 साल पहले चिन्मय जसा होता और आज सत्येन जैसा.' बुलवाकर एक विशेष प्रदेश के विशिष्ट प्रतिनिधि के दुख को उजागर किया है.

▣ **कृष्णशंकर भटनागर, सहारनपुर**

पहली रचना

अंक में **'तमोली हावी हो रहा है'**, **'ऑपरेशन जोनाकी'** और **'दशार्क'** रचनाएं उत्तम कोटि की एवं संग्रहणीय बन गयी हैं. मैं गिरिराज किशोर, संजीव एवं जैनेंद्र कुमार के प्रति इतनी आकर्षक, सजीव एवं स्तर की रचना लिखने के कारण हृदय से आभारी हूं. **'तमोली हावी हो रहा है'** के लेखक के पास कहने को बहुत कुछ है, कहने का

पलासी का युद्ध और ताजियादार

'सारिका' का यह अंक बहुत ही रोचक, **मनोरंजक, शिक्षाप्रद, एवं उपयोगी रहा. ऐसे तो संपूर्ण अंक ही पठनीय है, परंतु** 'मुझे घर ले चलो', 'बूढ़े', 'आखिरी गवाह' **कहानियां**, 'दानी', 'पहला उपदेश', 'जल्दबाजी', 'सुहागरात का वह प्रतिद्वंद्वी' **लघुरचनाएं तथा** 'गलियां : जहां इतिहास कैद है' **आदि रचनाएं विशेष अच्छी लगीं.**

बाला दुबे द्वारा लिखित 'गलियां : जहां इतिहास कैद है' **रचना में ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन काल में कलकत्ता में रहनेवाले अंग्रेजों का वृत्तांत, उनकी प्रतिद्वंद्विता, वैमनस्य तथा एक दूसरे को नीचा दिखाने की कहानी बहुत ही रोचक रही. मुहर्रम के अवसर पर अंग्रेज अधिकारियों द्वारा हाईकोर्ट के सामने ताजिये के जुलूस में हस्तक्षेप तथा जुलूस द्वारा उसका प्रभावी एवं ज्वालामुखी प्रतिरोध निस्संदेह एक वीरोचित घटना है. यदि इसी प्रकार पलासी के युद्ध में इन ताजियादारों ने मिलकर अंग्रेजों के मुकाबले नवाब सिराजुद्दौला का साथ दिया होता तो इस देश में ब्रिटिश शासन की नींव न पड़ती, परंतु उस समय मुसलमानों के एक वर्ग ने मीर जाफर के नेतृत्व में सिराजुद्दौला के साथ विश्वासघात कर सब प्रकार अंग्रेजों का साथ दिया, उससे भारत में ब्रिटिश शासन की शुरुआत तथा मुस्लिम शासन का पतन प्रारंभ हुआ था.**

▣ शकुनचंद गुप्त विशारद, रायबरेली (उ. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढंग मालूम है और विषय की गहराई में उतरने योग्य क्षमता है. 'ऑपरेशन जोनाकी' जैसी रचनाएं पूंजीवाद, इस्लामीकरण आदि विषयों पर प्रस्तुत करवायी जायें. ऐसी रचनाएं 'सारिका' के लिए सौंदर्य-सुगंध प्रदान करेंगी. जैनेंद्र की 'दशार्क' रचना में कसाव है, गहराई है, तर्क है, आत्मीयता है, आकर्षण है, समाज है, व्यक्ति है, सार्वभौमिक सत्य है, 'आधुनिक दुनिया' के बारे में तीसरी दुनिया के लिए यथार्थ का खुलासा है. रंजना से कौन असहमत हो सकता है?

'आखिरी गवाह' सशक्त-सी दिखनेवाली अशक्त, बौनी रचना है. इसकी संक्षिप्तता अतृप्ति ही पैदा करती है. मधुकर सिंह की 'गिद्ध' स्थान न पाती तो खीझ और नीरस बकवास पाठकों के मन-क्षेत्र में न पनपते. राबिन शॉ पुष्प की कथा 'यातना शिविर' जनेंद्र, गिरिराज किशोर अथवा संजीव की तरह सशक्त नहीं. इसमें यथोचित मनोवैज्ञानिक सरसता का अभाव प्रतीत होता है. महीप सिंह की रचना 'बूढ़े' में गदराया यौवन, चमकता सौंदर्य और हार्दिक प्रेम भी जहां-तहां ही है. 'मझे घर ले चलो' (गोविंद मिश्र) इस अंक के पहले लेखक भले ही हों, लेकिन रचना उस क्रम में कुछ कमजोर है.

▣ **सच्चिदानंद झा, फरसाबाद (हजारीबाग), बिहार**

तस्वीर बोलती है

सारिका, अंक : ३४५

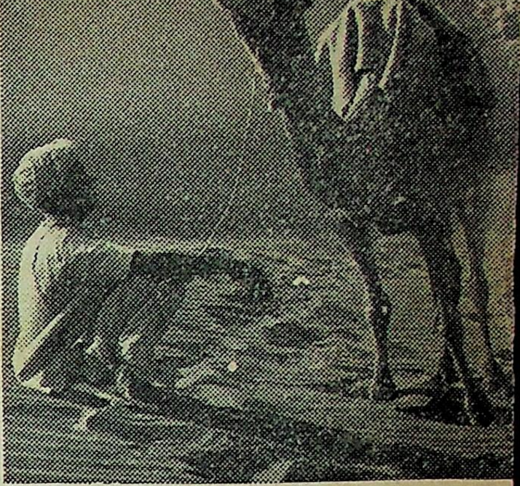

पुरस्कार विजेताओं को बधाई

प्रथम पुरस्कार : ५० रुपये

कौन जाने कब तलक यूं ही चलेगा कारवां,
कब तलक जारी रहेगा, यह फरेबों का कहर.
—चंद्रदेव सिंह

▣ रेणु, द्वारा श्री सी. पी. श्रीवास्तव, आई. टी. आई. डुमरा कोर्ट, सीतामढ़ी (बिहार)

द्वितीय पुरस्कार : ३० रुपये

बिजली, हवा, पानी औ परिंदे सभी आजाद,
यारब! मेरी नकेल ही क्यों दूसरे के हाथ?

▣ ऋचा सिंह, द्वारा डॉ. चंद्रदेव सिंह, 7-एफ, गोपीमंडल लेन, कलकत्ता-2

तृतीय पुरस्कार : २०रुपये

यही हैं मेरे तन, मन, प्राण,
यही हैं ध्यान, यही अभिमान,
धूल की ढेरों में अनजान
छिपे हैं मेरे मधुमय गान.

▣ सुश्री लिली प्रसाद, बक्शी भवन, लोहसिहना रोड, हजारीबाग (बिहार)

प्रशंसित शीर्षक

मुर्दा जिस्मों में भी, जीने की चमक रख देंगे,
अजीब लोग हैं जख्मों पे नमक रख देंगे,
जब भी तू जुल्मो-सितम देख के चिल्ला देगा,
तेरे हाथों पर किसी और का हक रख देंगे.
—माधव कौशिक

▣ सुनील कुमार पांडेय, टीकमगढ़

यह सफर का नहीं अंत, विश्राम रे
दूर है दूर अपना बहुत ग्राम रे,
स्वप्न कितने अभी हैं अधूरे पड़े
जिंदगी में अभी तो बहुत काम रे,
मुस्कराते चलो, गुनगुनाते चलो
आफतों बीच मस्तक उठाते चलो.
—गिरिधर गोपाल

▣ रविशंकर 'रवि', कटनी (म. प्र.)

सिर पे सूरज, पैर नंगे जल रहे हैं
हम डगर अविराम लेकिन चल रहे हैं,
शीत शहरें छू गयीं तो बन गये हिम
हम जो सूरज की तपन से जल रहे हैं,
जी रहे हैं कल्पनाओं के सहारे
जानते हैं हम स्वयं को छल रहे हैं.

▣ मदनलाल दास 'राजू', दरभंगा

युवकों का आक्रोश

संजीव की कहानी **'ऑपरेशन जोनाकी'** सशक्त और भावपूर्ण बन पड़ी है. अनिमेष दा वैसे तो पूरी कहानी पर छाये हैं, पर उनके मानसिक अंतद्वंद्व की सही झलक अंतिम क्षणों में ही मिल पाती है, परंतु सबसे अधिक प्रभावित करता है चिन्मय. वह बहुत कम बोलकर भी बहुत कुछ कह जाता है और लेखक उसे अभिव्यक्त करने में पूर्ण सफल रहा है. चिन्मय का आक्रोश केवल उन जमींदारों के प्रति नहीं है, बल्कि इस शासन व्यवस्था से भी है, जो उन्हें शोषण से बचा तो नहीं पाती, पर अनजाने में उनका साथ देती रहती है. यदि चिन्मय को आज के युवकों के आक्रोश का प्रतीक माना जाये तो गलत नहीं होगा.

▣ **प्रवीणकुमार जैन, बराकर**

पुलिस का रूप

'सारिका' के अंक: 345 में आमतौर पर सारे कहानीकार अच्छे लगे, पर गिरिराज किशोर की **'तमोली हावी हो रहा है'** पुष्प की **'यातना शिविर'** और जैनेंद्र कुमार के **'दशार्क'** का इस अंकवाला अंश विशेष उल्लेखनीय है.

'दशार्क' में समाज में स्त्री की स्थिति का नंगा चित्र तिलमिला देता है, वहीं पुरुष का चित्रण अपने को ज्यादा समझ पाने की प्रेरणा देता है. दरअसल, इस उपन्यास में रंजना के रूप में एक विचित्र 'जैसा न देखा, न सुना' चरित्र की उत्पत्ति हुई है.

संजीव रचित **"ऑपरेशन जोनाकी"** भी पढ़ी. यह कहानी पुलिस के मानसिक अंतर्द्वंद्वों को चित्रित करती है, पर यह चित्रण असली पुलिस का नहीं.

▣ **सुशांत सुमन, बेतिया (प. चंपारण)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवा-लेखन कहानी प्रतियोगिता

चूहा भी हंसता है

◦अनत रमेश

. . . 'सत्य की सदा जीत होती है!' . . . 'अपने दुश्मन से भी प्रेम करो!' . . . 'मेहनत का फल मीठा. . .!' आदि-आदि सूक्तियों को रटने के बाद, हमारे देश का कोई भी बच्चा स्वयं को प्रायः किस स्थिति में पाता है और क्यों मान लेता है कि एक अदद प्रेमिका के बिना, आदमी, आदमी नहीं उल्लू होता है! —बाल मनोविज्ञान के संदर्भ में स्कूल, शिक्षा और अध्यापकीय परिवेश को रेखांकित करती पुरस्कृत कहानी. . .

हर स्कूल में जिस तरह एक मानीटर होता है, उसी तरह एक चूहा भी होता है. क्लास में मानीटर हमेशा सबसे आगे-वाले बेंच पर बैठता है, चूहा सबसे पिछले बेंच पर. मानीटर को पीटने का अधिकार होता है, चूहे को पिटने का. मानीटर का बाप एक अमीर आदमी होता है, चूहे का बाप या तो होता ही नहीं, या होता है तो भी न होने के बराबर!

फिर भी, दूसरी क्लास के चूहों की अपेक्षा रामौतार एक बेहतर चूहा था. उसका बाप दूध बेचता था और दूध की दूकान के अपने ही मजे हैं. कम से कम स्कूल से लौटकर दूसरे चूहों की तरह उसे किसी खेत-कारखाने में नहीं पिलना पड़ता था. दुकान सुबह दस बजे तक बंद हो जाती थी. फिर शाम को पांच बजे दुबारा शुरू होती थी. अब स्कूल के बाद शाम को पांच बजे तक चाहे दूकान में पड़े-पड़े उपन्यास पढ़ते रहो, चाहे बंसल सिनेमा में तीनवाला शो देखो. कुछ भी करने का मन न हो, तो घंटे दो घंटे झपकी ही ले लो. . .या दूकान में ताला मारकर स्टेशन की ओर निकल जाओ और जनता एक्सप्रेस के डिब्बों में खिड़की पर कोहनी टिकाये बैठी गौरांगनाओं के दर्शन कर आओ. यदि किसी ने कृपा की ओर अपनी सुराही पकड़ा दी तो इहलोक भी तर गया, परलोक भी! रोमांटिक उपन्यासों, फिल्मों और स्टेशन की 'एकला-चलो- रे' यात्राओं के परिणामस्वरूप रामौतार उर्फ चूहे ने इस परमसत्य को सहज ही जान लिया कि इश्क किये बगैर आदमी, आदमी नहीं, उल्लू का पट्ठा है!

ऊपरवाला जब देता है, तो छप्पर फाड़कर देता है. इधर रामौतार अपने लिए किसी प्रेमिका की तलाश में था, उधर कालिया मास्टर ने उसके कला प्रेम से प्रभावित होकर उसे विशेष प्रशिक्षण देना शुरू कर दिया. कालिया स्कूल में ड्राइंग पढ़ाता था. फर्नीचर इंचार्ज था. बिल्डिंग इंचार्ज था. कोई भी लड़का प्रिंसीपल के पास जाकर शिकायत करता, "हमारे कमरे में पंखा खराब है." प्रिंसीपल फौरन कहता, "बुलाओ कालिया को." शिकायत आती, "छत चू रही है." आर्डर निकलता, "कालियाजी, ठीक कराकर तुरंत रिपोर्ट दो." गर्ज ये कि स्कूल का हर वह काम जिसे करने से सब गुरेज करते थे, वह कालिया मास्टर के मत्थे मढ़ दिया जाता था.

जाने किस घड़ी में कालिया मास्टर को चूहे में छिपी प्रतिभा दीख गयी. बस, वह रामौतार का गुरू बन गया. नतीजतन रामौतार उसका चेला बन गया. प्रिंसीपल, कालिया मास्टर को हुक्म देता. कालिया, रामौतार को. काम चल निकला. लड़के जो पहले उसे 'चूहा' कहते थे, अब 'चमचा' कहने लगे. कहते हैं, तो कहें. कहनेवाले की जुबान कौन रोक सकता है. वैसे भी जबसे वह सुबह-शाम कालिया मास्टर के घर दूध देने जाने लगा है, लड़कों की ओर से स्थितप्रज्ञ हो गया है. मान-अपमान से परे हो गया है. पढ़ाई से निर्विकार हो गया है. कालिया मास्टर शहर से अपनी पत्नी को ले आया है. दस किलो दूध की बालटी, जो अब तक ढाई मन की लगती थी, फूलों की डाली में बदल गयी है.

स्कूल से घर आकर एक ही धुन सवार रहती है उसे. रंग हो, ब्रश हो, कागज हो. बस, सारा दिन तस्वीरें बनाता है वह. कालिया मास्टर को दिखाता है. कालिया की राय पर अमल करता है. फिर भी रामौतार का मन बार-बार दुर्गा मंदिर की ओर भागता है. मंदिर की छत पर एक कोने में बने कमरे में रहता है कालिया मास्टर. और साथ उसकी पत्नी . . . वीणाजी. कई बार वह दोपहर में जाता है वहां. कालिया मास्टर बुला लेता है. अनेक छोटे-मोटे कामों के लिए. ऐसे में वीणाजी भी उसे कुछ काम बता देती हैं. पलक झपकते ही सारे काम निबटा देता है रामौतार.

स्कूल का इंस्पेक्शन होना था. बहुत सारे चित्र-चार्ट वगैरह बनाने थे. प्रिंसीपल का हुक्म हुआ. कालिया ने काम संभाल लिया. उसी दिन से रामौतार नित्य कालिया के घर आ रहा है. आज कालिया उसे काम बताकर स्कूल गया है.

वीणाजी कालिया की अनुपस्थिति से खुश भी हैं, नाखुश भी. मैट्रिक पास हैं वे. उनकी बहुत इच्छा है कि वे भी एक कन्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठशाला खोल लें. अनेक बार रामौतार के सामने ही इस प्रस्तावित पाठशाला पर चर्चा हुई है दोनों में. पर मास्टरजी हैं कि उन्हें फुर्सत ही नहीं मिलती.

"क्या बड़े होकर तू भी ड्राइंग-मास्टर बनेगा रे?" वीणाजी ने पूछा है उससे. वह अचकचा जाता है. कालिया भी तो ड्राइंग मास्टर है. अगर रामौतार सच कह दे तो बहुत संभव है वीणाजी उसे अपने घर में ही न फटकने दें. उस दिन कह भी तो रही थीं कि कुछ और कर या न कर, पर ड्राइंग-मास्टर न बनियो. पर झूठ कैसे कहे, सच्ची बात तो यही है कि वह ड्राइंग-मास्टर ही बनना चाहता है, पढ़ना-पढ़ाना उसके बस का नहीं है. वह चुपचाप कटोरी में रंग घोलता रहता है.

"अब इन्हें ही देख ले तू. कहने को इनकी और सुधाकर की तनख्वाह बराबर है, पर इज्जत? बच्चे सारा साल उससे ट्यूशन पढ़ते हैं. इम्तहानों के दिनों में खूब खातिर करते हैं. सारे स्कूल में और बाहर भी लोग उसकी इज्जत करते हैं. जानता है क्यों?"

रामौतार जानता है. सुधाकरजी अंग्रेजी के मास्टर हैं. अंग्रेजी जानना कोई हंसी-खेल नहीं है. वह खुद अंग्रेजी के कारण हर बार फेल होते-होते बचा है. वह कोई जवाब नहीं देता. बस, अपने बनाये चित्र में इधर-उधर ब्रश की नोंक छुआ-भर देता है.

"तू तो बड़ा होकर सचमुच बहुत बड़ा आर्टिस्ट बनेगा रे!" वे एकदम पास आ जाती हैं. उसकी कनपटियों के नीचे इंजन दौड़ने लगता है.

वे उसके निकट बैठ जाती हैं. चित्र को डालडा के खाली डिब्बे के सहारे टिकाकर प्रशंसक-दृष्टि से रामौतार की ओर देखती है. ओह, कितनी गहरी आंखें काली...बड़ी प्यारी... बिल्कुल...शर्मिला टैगोर जैसी...

"ठीक है, पर अब दीया-बत्ती का टाइम है. इसे छोड़ दे. फिर कर लेना...चाय पियेगा?" कहती हुई वे रसोई की ओर बढ़ जाती हैं.

जाने क्या बात है, स्कूल में भी जब प्रिंसीपल ने उसकी तारीफ की थी तो हरिओम का ध्यान हो आया था उसे. अब फिर उसी हरिओम का ध्यान आ रहा है. ...स्साला बनिया.

"स्साला दूबिया, आर्टिस्ट बनेगा. छीन लो इसकी फाइल!" हरिओम ने कहा था. बहुत पुरानी बात नहीं है. रामौतार को ड्राइंग में सबसे अधिक नंबर मिले थे. कालिया ने पूरी क्लास के सामने उसकी प्रशंसा की थी. उसी दिन छुट्टी के बाद हरिओम ने उसे कहा था, "ओए चूहे, बिल्कुल ऐसी ही तस्वीरें मेरी फाइल के लिए भी बना देना." रामौतार ने 'हां' कह दिया था. बाद में तीन चित्र हरिओम को दे भी दिये थे. उन्हें देखकर प्रिंसिपल ने हरिओम को शाबाशी ही नहीं दी, बढ़कर कालिया मास्टर को भी हिदायत दी कि वह हरिओम पर विशेष ध्यान दे. ध्यान उस पर सुधाकरजी भी दे रहे थे. जबसे स्कूल में इंस्पेक्शन होने की बात आरंभ हुई थी, वे उसे 'मेरे सपनों का भारत' विषय पर निबंध लिखना सिखा रहे थे. स्कूल की निबंध प्रतियोगिता में यही विषय रखा गया था. प्रथम आनेवाले छात्र को पुरस्कार मिलना था.

चित्रकला प्रतियोगिता में रामौतार का प्रथम स्थान सुनिश्चित था. सारे स्कूल को पता था. पर तभी एक दुर्घटना हो गयी. शाम को बगीची के कुएं पर नहाने निकल गया था वह. वहीं स्कूल के कई दूसरे लड़कों के साथ ताश खेल रहा था हरिओम. रामौतार ने चुपचाप कपड़े उतारे और अंगोछा लपेटकर कुएं की जगत पर पहुंचा. बालटी पानी में डाली ही थी कि हरिओम खेल छोड़कर उसके पास आ गया.

"क्या हाल-चाल है आर्टिस्ट साहब?" उसने कहा.

"ठीक है," रामौतार ने हिम्मत बटोरकर कहा. हरिओम के स्वर की विद्रूपता उससे छिपी न रही थी.

"तो नहाने की तैयारी है?"

"हां."

"तैयारी कैसी चल रही है?"

"कैसी तैयारी?"

"पेंटिंग कंपीटीशन की?"

"ठीक चल रही है." कहते हुए रामौतार बालटी ऊपर खींचने लगा. हरिओम के साथियों ने पत्ते समेट लिये और वे भी कुएं की जगत पर चढ़ आये. हरिओम ने कहा, "मैंने फैसला किया है कि चित्रकला में भी पहले नंबर पर आऊं."

रामौतार चुप रहा.

"ओए चूहे, सुना कि नहीं?"

"ठीक है, पहले नंबर पर ही आना."

"तुझे बुरा तो नहीं लगेगा न?"

"क्यों? मुझे भला क्यों बुरा लगेगा?"

"ठीक है फिर. उस दिन स्कूल से छुट्टी रखना."

"क्या...?" रामौतार के हाथ से रस्सी छूट गयी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालटी घम्म की आवाज के साथ कुएं में जा गिरी!..."क्या कह रहा है हरिओम? अरे, खुद वीणाजी ने कहा है कि प्रथम आने पर अपने हाथ से मुंह मीठा करूंगी, रामौतार!

"ये नहीं हो सकता." रामौतार के मुंह से एक-एक शब्द बमुश्किल बाहर निकला.

"ओए दुधिए की औलाद! तेरा दिमाग ठिकाने है?"

"तोड़ दें गुरू इसके हाथ-पैर? एक लड़के ने आगे बढ़कर हरिओम से पूछा.

रामौतार की आंखें भर आयीं.

"तो ये नहीं हो सकता? ठीक है," कहते हुए हरिओम ने झटके से उसका अंगोछा पकड़ा और खींचकर ये जा और वो जा. "अंगोछा, अंगोछा" लड़के चिल्लाते हुए उसके साथ निकल गये. रामौतार पीछे-पीछे. पर अगले ही क्षण उसे अपनी हास्यास्पद स्थिति का ध्यान आया और वह दोनों हाथ जंघों में धरकर वहीं बैठ गया.

लड़के लौट आये और अंगोछा लहराते हुए उसके इर्द-गिर्द चक्कर काटने लगे. बैठे-बैठे ही रामौतार हाथ फलाकर अंगोछा झपटने की कोशिश करता रहा. लड़के 'ले-लि' कहकर और भी उन्मत्त होने लगे. हरिओम दूर-एक पेड़ के सहारे खड़ा उन्हें उकसा रहा था. अपने नंगेपन के एहसास में रामौतार सचमुच रोने लगा. उसने अंगोछा लेने का प्रयास छोड़ दिया.

हरिओम पास आ गया और रामौतार की ओर देखते हुए उसने लड़कों से अंगोछा ले लिया, "फिर क्या सोचा?"

रामौतार उसकी ओर ताकने लगा.

"ठीक है फिर?"

रामौतार ने नजरें झुका लीं. हरिओम ने अंगोछा उसकी ओर उछाल दिया, "फूट जा अब."

रामौतार ने अंगोछा लपेटा और बिना नहाये लौट आया.

उस दिन स्कूल से लौटकर खाना खाते ही रामौतार दुर्गा मंदिर गया था. मंदिर की सीढ़ियां चढ़कर वह छत पर पहुंचा. फिर छत से गुजरकर कोने में बने मास्टरजी के कमरे में. दरवाजा नित्य की तरह आधा खुला था. अंदर बढ़ते ही साक्षात दुर्गा के दर्शन हो गये उसे. वीणाजी मास्टरजी पर बरस रही थीं, "आपके बस का भी है कुछ? सारी औरतें तैयार हैं. आप उनके मर्दों को राजी कर लें तो फोरन काम बन जाये. पर आपको फुर्सत भी मिले. सारे दिन स्कूल-स्कूल स्कूल...और भी कुछ सूझता है?"...

रामौतार को आया देखकर कालिया मास्टर बहुत खुश हुआ. पर वीणाजी ने मानो उसे देखा तक नहीं, रिकार्ड चालू रहा, "मुझसे अच्छी तो मेरी बहनें ही हैं. दोनों जिज्जा सरकारी नौकरी में ठाठ कर रहे हैं. अकेली मैं ही तीनों बहनों में मैट्रिक कर पायी और बंध गयी तुम्हारे खूंटे से. मैं पूछती हूं तुमने मथुरा की नौकरी छोड़ी ही क्यों? मेरे तो करम फूट गये. कहां ला पटका है इस बेयोंत की जगह में, जहां पानी भी बीस सीढ़ियां चढ़कर लाना पड़ता है."

रामौतार देखता रहा उन्हें. गुस्से में उनकी नाक का अग्रबिंदु सुर्ख हो गया था. कानों में लटकते बुंदे झिलमिल-झिलमिल कर रहे थे. ब्लाउज पेट पर थोड़ा ऊपर को खिसक आया था. वे कमरे की एकमात्र खिड़की के सहारे खड़ी थीं.

"तेरी बहनें क्या करती हैं रे?" अचानक तोपों का मुंह रामौतार की ओर घूम गया.

"कुछ नहीं." हकला गया बेचारा.

"उन्हें हमारे स्कूल में दाखिल करा देना...समझे?"

"जी."

"जी क्या? कल उन्हें दोपहर को साथ लेकर आना. फीस-वीस की चिंता न करना. तुम्हारे घर के हालात मुझे मालूम हैं. तुमसे फीस लेकर पाप की भागी नहीं बनूंगी मैं."

"जी."

"फिर जी. समझे कि नहीं?"

"जी, समझ गया. मास्टर जी ने बिछौने में रुई डलवाने के लिए कहा था. दे दीजिए तो डलवा लाऊं."

"देखा?" वीणाजी ने कालिया मास्टर की ओर देखा, "और एक तुम हो. कितने दिन से कह रही थी और आज कल कर रहे थे. एक ये रामौतार है. क्या लगता है मेरा!"

कालिया मास्टर हंसा. वीणाजी ने उसकी ओर से ध्यान हटा लिया. रामौतार के पास आ गयी, "देख रे रामौतार, तू तो अब नवीं में है. पढ़ना-लिखना बुरी बात है क्या?"... नहीं है न? फिर तू अपनी बहनों को भेज दियो कल से. कितनी बहनें हैं तेरी?"

"जी, तीन."

"ठीक है. तीनों आ जायें कल. अपने अड़ोस-पड़ोस में भी कह दियो. सभी अपनी अपनी लड़कियों को भेज दें."

उतरदायित्व

▣अरविंद ओझा

वह जब छोटा था तब, सी दिया करती थी उसकी मां, बाबूजी की फौजी पतलून से उसका पाजामा और सरज की गरम कमीज से उसकी ढ़ाली कमीज.

फिर जब वह बड़ा होने लगा, तब वैसे ही पहन लिया करता था. मां बस नीचे से मोड़ दिया करती थी कपड़ों को और पेंट में बांध देती थी नाड़ा.

एक दिन बाबूजी रिटायर हो गये. बाबूजी को वर्दी मिलनी बंद हो गयी.

उसकी उमर अट्ठारह से कम थी. बाबूजी बनवा लाये उसकी उमर का सर्टिफिकेट कि वह अट्ठारह साल का हो गया है.

फिर बाबूजी ने शुरू की भागदौड़...और उसे पुलिस में रखवा दिया. पहले कच्चों में, फिर धीरे-धीरे वह हो गया पक्का सिपाही. फिर मिलने लगी उसे वर्दी—लंबी पतलून, कमीज, जूते, पट्टा, टोपी.

अब मां को नहीं करना पड़ता कपड़ों को छोटा-बड़ा. उसके कपड़े फिट आते हैं—बाबूजी को. ▣

● नवल सागर कुआं, बीकानेर–334001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नव वर्ष के उपहार के साथ डाक व्यय में पूरी छूट

आलोचना पुस्तक परिवार के सदस्यों के लिए

नये वर्ष का दुर्लभ उपहार
महाकवि कालिदास – कृत मेघदूत का
आचार्य केशवप्रसाद मिश्र कृत सरस पद्यानुवाद
मूल संस्कृत पाठ सहित, स्तरीय मुद्रण, कलात्मक बहुरंगी आवरण

अगर आप ''आलोचना पुस्तक परिवार'' के सदस्य नहीं हैं तो आपके लिए आलोचना पुस्तक परिवार की सदस्यता भी निःशुल्क

आप सिर्फ यह करें कि ''आलोचना पुस्तक परिवार'' की नीचे दी गई पुस्तक-सूची से 120/- रु. मूल्य की पुस्तकों का आदेश भेज दें। ये पुस्तकें हम आपको आधे मूल्य यानि 60/- रु. की वी. पी. पी. से भेज देंगे, और उसी पैकेट में भेज देंगे उपहार पुस्तक – मेघदूत।
(120/- रु. के आदेश पर डाक-व्यय हम वहन करेंगे और इससे कम के आदेश पर आप)

आलोचना पुस्तक परिवार की सूची

उपन्यास
मबहि नचावत राम गोसाईं/भगवती चरण वर्मा/40 00
पुनर्नवा/आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी/30 00
सत्यभामा/कन्हैयालाल मा मुंशी/25 00
मैला आंचल/फणीश्वरनाथ रेणु/40.00
कड़ियां/भीष्म साहनी/24 00
जिंदगीनामा/कृष्णा सोबती/45.00
दूसरी तरफ/महेन्द्र भल्ला/25 00
एक चिथड़ा सुख/निर्मल वर्मा/28 00
बाबा बटेसरनाथ/नागार्जुन/9.00
सीन 75/राही मासूम रज़ा/18.00
नेताजी कहिन/मनोहर श्याम जोशी/30.00
यथा-प्रस्तावित/गिरिराज किशोर/22 00
धरती धन न अपना/जगदीश चन्द्र/40.00
तत्-सम/राजी-सेठ/35.00
सुबह होती है शाम होती है/प्रतिमा वर्मा/18 00
गाथा शेखचिल्ली/रवीन्द्र वर्मा/16.00
जंगलतन्त्रम्/श्रवणकुमार गोस्वामी/12.00
बैठक की बिल्ली/मीनाक्षी पुरी/8.50
अश्लील/समरेश बसु/12.00
राजा बदल/विमल मित्र/24 00
सम्राट और सुन्दरी/शंकर/30 00
एपार बांग्ला ओपार बांग्ला/शंकर/40 00
कर्करेखा/शशिप्रभा शास्त्री/28.00
उखड़े कदम/विपिनचन्द्र चतुर्वेदी/15.00

कहानी-संग्रह
ठुमरी/फणीश्वरनाथ रेणु/18.00
भटकती राख/भीष्म साहनी/24.00
एक नीच ट्रैजेडी/मृणाल पाण्डे/18.00
बर्फ़ तथा अन्य कहानियां/सत्येन कुमार/20.00
मृत्युंजयी/कैलाश साह/10.00
धांसू/गोविन्द मिश्र/18.00
दुविधा और अन्य कहानियां/30.00
जाने किस बन्दरगाह पर/सतीश जायसवाल/18.00
ऐली! ऐली!/बलवन्त सिंह/ 22.00

कविता
लोग भूल गये हैं/रघुवीर सहाय/22.00
घबराये हुए शब्द/लीलाधर जगूड़ी/20.00
खूंटियों पर टंगे लोग/सर्वेश्वरदयाल सक्सेना/25.00
नागफनी में उलझी सांसे/अभिमन्यु अनत/8 00

नाटक
लाल कनेर/रवीन्द्रनाथ ठाकुर/5.00
दो व्यंग्य नाटक/शरद जोशी/15.00
मृच्छकटिक/शूद्रक/अनु. मोहन राकेश/9 00
रंगनाथ की वापसी/गिरीश रस्तोगी/20 00

आलोचना अनुसन्धान
भाषा और समाज/रामविलास शर्मा/28.00
कामायनी: एक पुनर्विचार/गजानन माधव मुक्तिबोध/30.00
कविता के नये प्रतिमान/डॉ नामवर सिंह/35.00
फिलहाल/अशोक वाजपेयी/35.00

आत्मकथा
हम हशमत/कृष्णा सोबती/35 00
चीड़ों पर चांदनी/निर्मल वर्मा/12.00

हास्य – व्यंग्य
जीप पर सवार इल्लियां/शरद जोशी/9 00
हास्य बत्तीसी/कन्हैया लाल कपूर/12 00
फूल और पत्थर/कृश्न चन्दर/10.00

इसके अलावा राजकमल पेपरबैक्स की किन्हीं 6 पुस्तकों के आदेश पर भी आप उपहार-पुस्तक और डाक-व्यय की फ्री सुविधा प्राप्त कर सकेंगे, लेकिन पेपरबैक्स की पुस्तकें मुद्रित मूल्य पर ही दी जायेंगी, न कि आधे मूल्य पर।

राजकमल पेपरबैक्स

रागदरबारी/श्रीलाल शुक्ल/18.00
वे दिन/निर्मल वर्मा/11.00
मित्रो मरजानी/कृष्णा सोबती/6 00
कुरु कुरु स्वाहा/मनोहर श्याम जोशी/13 00
प्रतिनिधि व्यंग्य/हरिशंकर परसाई/10.00
दूसरी परम्परा की खोज/ डॉ. नामवर सिंह/10.00
प्रतिनिधि कविताएं/अमृता प्रीतम/10.00
सुहाग के नूपुर/अमृतलाल नागर/12 00
बसन्ती/भीष्म साहनी/10 00
अजनबी/आल्बेयर कामू/6 00
प्रतिनिधि कहानियां/भगवतीचरण वर्मा/10 00

यदि आप मिली-जुली पुस्तकें मंगवाते हैं तो राजकमल पेपरबैक्स की पुस्तकों का मुद्रित मूल्य तथा ''आलोचना पुस्तक परिवार'' की पुस्तकों का आधा मूल्य मिलकर 60/- रुपये अवश्य होना चाहिये।

उपहार के लिए अपना आदेश यथाशीघ्र भेजें

राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
8 नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली - 110 002 फोन : 274718/274463 तार : प्रकाशक
शाखा : साइंस कालिज के सामने, पटना-800 006 फोन : 52280 तार : हिन्दी बुक्स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जी अच्छा."

तीन ये, वीणाजी मन में ही हिसाब लगाने लगीं. फिर पलटकर कालिया मास्टर की तरफ देखकर बोलीं, "हरिओम ने कितनी लड़कियां बताई थीं?"

"सारी. . .मुहल्ले की सारी लड़कियां."

"सारी तो कह रहा था. पर ये भी तो कहा था कि. . .कि. . . कितनी लड़कियां थीं जो अब तक तैयार हो गयी हैं?"

"तुम्हें ही तो बता रहा था. मुझे ध्यान नहीं है."

"बस, जाने कहां रहता है तुम्हारा ध्यान? जब से स्कूल में इंस्पेक्शन की बात शुरू हुई है, तुम्हें कुछ ध्यान ही नहीं रहता. सुधाकरजी होते तो . . ."

कालिया मास्टर के चेहरे से हंसी उतर गयी. टीन के आयताकार टुकड़े पर खड़िया से लक्ष्मीबाई कन्या पाठशाला लिखा हुआ था. अब वह अक्षरों पर रोगन फेर रहा था. लक्ष्मीबाई के 'ई' में मात्रा लगाकर उसने ब्रश रख दिया और उठ खड़ा हुआ. 'सुधारकर जी होते तो. . .' ये तीन शब्द उसके दिमाग में चमगादड़ की तरह चक्कर काटने लगे. 'सुधाकरजी होते तो. . .' ऐसी की तैसी इस सुधाकर की. साले ने क्या दिमाग घुमाया है इसका. ख़ुद तो अपनी बीवी को छोड़ आया है गांव में. . .अब दूसरों की गृहस्थी बरबाद करने पर तुला हुआ है. . .

"तेरी मां को इतनी भी फुर्सत नहीं मिलती कि तेरा उघड़ा हुआ यह कालर ही सिल दे!" वीणाजी ने कहा. वे रसोई की सफाई कर रही थीं. स्टूल पर खड़े होकर आलमारी के सबसे ऊंचे खाने में डिब्बे उसे पकड़ा रही थीं. जब भी वे सीधी खड़ी होकर अपने हाथ डिब्बा पकड़ने के लिए उठातीं, रामौतार उन्हें देखता रह जाता. कहीं ऐसे देखते हुए वे उसे देख लें तो? उसने भरसक अपने-आपको रोका. एक हाथ से स्टूल थामे दूसरे से डिब्बा पकड़ते हुए रामौतार की नजर बार-बार उनकी बगल में पसीने से भीगे ब्लाउज पर पड़ती है. कहीं कालिया किसी काम से भीतर आ जाये. . . और उसके मन में उठते ज्वार को देख ले तो?. . . अपने दिल की धड़कन को काबू में करने के प्रयास करता रहा रामौतार. वे डिब्बे पकड़ाती रहीं. वह पकड़ता रहा.

"आज सारा-स्कूल सजा दिया गया है." वीणाजी ने इंस्पेक्शन की बाबत पूछा तो रामौतार ने कहा.

"फिर ये अब तक वहां क्या कर रहे हैं?'

रामौतार जवाब देने के बजाय कुछ सोचने लगा. चित्रकला प्रतियोगिता में उसने डरते-डरते हिस्सा लिया था. प्रथम स्थान भी प्राप्त किया. हरिओम ने खुद बाद में आकर मुबारकबाद दी थी· पर बाद में एक दूसरी गड़बड़ हो गयी चित्र प्रतियोगिता में शामिल सारे सुंदर चित्रों को सुधाकरजी ने स्कूल में एक स्थान पर एकत्र किया था. साथ ही अनेक लड़कों से कविताएं चुटकुले-कहानी वगैरह इकटठे कर रामौतार से सुंदर लिखाई में लिखवाया था. प्रिंसीपल रूम के बाहर बुलेटिन-बोर्ड पर लगवाया था. इस बोर्ड को तरह-तरह से सजाया था रामौतार ने. बहुत मेहनत की थी अपनी बढ़िया सी कई और तस्वीरें भी टांग दी थीं वहां. पर आज सुधाकर जी ने बोर्ड पर मोटे अक्षरों में लिखवाया था, भित्ती-पत्रिका. नीचे लिखा गया, संयोजक : हरिओम. उसके भी नीचे छोटे छोटे अक्षरों में लिखा गया, सहायक: रामौतार.

भित्ती-पत्रिका पर हरिओम का नाम देखकर दरक गया रामौतार. बहुत सारी बातें स्पष्ट हो गयीं हैं आज. हरिओम का बाप स्कूल की मैनेजमेंट का प्रधान है. प्रिंसीपल खुद हरिओम को स्कूल के बाद पढ़ाता है. रामौतार ने पहले सोचा था कि वह कालिया मास्टर से इस अन्याय के विरुद्ध कहेगा, पर कोई लाभ नहीं है. वीणाजी ने बताया था एक दिन. जाने कहां से वे अकेली ही लौट रहीं थीं कि हरिओम ने अपने साथियों के साथ घेर लिया था उन्हें. अश्लील फब्तियां कसी थीं. लौटकर उन्होंने जब कालिया को बताया, तो उल्टे उसने ही डांटकर

गज़ल

▣ रघुनाथ प्यासा

हर शहर आज किसी बेवा का घर लगता है,
हरेक घर कोई मोहताज जफर लगता है.

आसमां कौवों औ गिद्धों से ढंका जाता है,
होने वाला है कोई फिर से गदर लगता है.

झूठ रग-रग में रम गया जुबान के जरिये,
आदमी जिस्म की बोतल में जहर लगता है.

सत्य से कोई बड़ा झूठ नहीं हो सकता,
सत्य इतिहास के पन्नों की खबर लगता है.

जहां भी देखो वहीं टूटता मिलेगा तुम्हें,
आदमी आज की गजलों की बहर लगता है.

किस कदर बंध गया है खून गलत बांधों में,
जिसको होना था समंदर वो नहर लगता है

ये मेरा मुल्क कभी कृष्ण के बचपन-सा था,
आज ये बूढ़े सुदामा की कमर लगता है.

▣ अनत रमेश

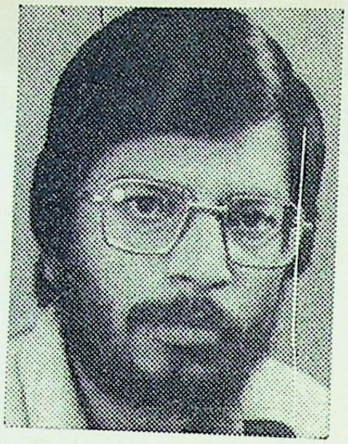

जन्म : 1948, दिल्ली.
सन् 74 में किसी तरह बी.ए. करने के बाद अब तक दो अधूरे एम.ए., बचपन से आज तक नौकरी . . . कभी छुटपुट, अब सरकारी. कुछ कहानियां, कविताएं और व्यंग्य रचनाएं प्रकाशित.
--'छोटी मछली बड़ी मछली' कहानी संग्रह शीघ्र प्रकाश्य.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा कि यूं अकेले जाने की क्या जरूरत थी.

"सुना है तुम्हारे सुधाकरजी की तरक्की होनेवाली है." वीणाजी ने साड़ी का ढीला हो आया पल्लू दुबारा बगल में खोंसते हुए कहा.

रामौतार ने स्टूल छोड़ दिया. वे नीचे उतर आयीं.

"पता नहीं."

"इंस्पेक्शन के बाद उनकी प्रमोशन निश्चित है. वे खुद ही बता रहे थे."

रामौतार ने सुधाकरजी को ही पकड़ा था. उनके सामने अपना दुखड़ा कह सुनाया, "काम तो सारा मैंने किया है और आपने नाम हरिओम का लिखा दिया." वे एक फीकी हंसी हंसे, "तू भी एक ही बुद्धू है रामौतार, बाप के साथ सुबह-शाम दूध का पानी करते हुए तेरी अक्ल भी वैसी ही हो गयी है. अरे, नाम में क्या रखा है! याद नहीं, शेक्सपीयर ने कहा है, वाट इज देयर इन ए नेम. गीता में भी कृष्ण भगवान ने कहा है, फल की इच्छा मत कर. कर्म करता जा. कर्मण्येवाधिकारस्ते..."

रामौतार ने मन ही मन शेक्सपीयर और श्रीकृष्ण को गाली दी पर भित्ती-पत्रिका के आगे से गुजरते हुए उसकी आंखें छलछला आयीं. वीणाजी ने उसे कहा था, 'तेरा नाम खूब चमकेगा एक दिन...' चमकेगा खाक. उसने आंखें बंद कर लीं... 'वीणाजी, आपको कुछ नहीं पता. मुझे माफ करना.'

"ये कह रहे थे कि इंस्पेक्टर साहब तुम्हें ईनाम भी देंगे."

रामौतार ने वीणाजी की ओर देखा. कितनी सुंदर हैं वे.

"तुझे तो आज खुश होना चाहिए. थक गया है क्या?" वीणाजी ने हाथ को झाड़न फर्श पर फेंक दी, "अभी चाय बनाऊंगी तेरे लिए. ये तो लगता है आज स्कूल में ही सोयेंगे."

घर लौटकर रामौतार से खाना नहीं खाया गया. तेल की ढिबरी बुझाकर वह बिछौने पर लेट गया. चेहरे गुजरने लगे आंखों में. वीणाजी आ जाती हैं, तू तो बहुत अच्छा कलाकार है रे. उन्हें एक ओर धकेलते हुए हरिओम सामने आ जाता है. मुस्कराता है. सुधाकरजी समझा रहे हैं, नाम में क्या रखा है बेवकूफ. कालिया मास्टर धारीदार पाजामा ऊपर चढ़ाकर पिंडलियां खुजला रहा है. रामौतार स्कूल के मैदान में खड़ा है अकेला. पूरे स्कूल में सन्नाटा है. अचानक हर दिशा से आती लड़कों की भीड़ 'चूहा-चूहा' कहकर उसे घेरने लगती है. शोर निकट आता जा रहा है...

बिछौना छोड़कर उठ बैठा वह. पास ही रखे घड़े से दो घूंट पानी पिया. फिर नंगे पांव ही घर से बाहर निकल आया. तेजी से चलता हुआ वह स्कूल के पिछवाड़े पहुंच गया. फिर दीवार फांदकर भीतर कूद आया. मैदान पार कर कमरों की ओर बढ़ गया. भित्ती-पत्रिका के सामने रुककर रामौतार ने पल-भर के लिए आंखें बंद कीं. फिर आनन-फानन में सारे चित्र फाड़ डाले उसने. सारे चार्ट फाड़ डाले. हरिओम के नाम पर थूका. एक वहशीपन छा गया उस पर. खाली कमरों में भूत-सा गुजर गया वह. जो भी तस्वीर-चार्ट उसे दिखाई दिये, वे भी जो बहुत ऊपर दीवार पर टंगे थे, सभी को बांस की एक खपच्ची की सहायता से फाड़ता चला गया. फिर भूत की तरह निकल गया बाहर. उलटे पांव. किसी को आहट नहीं दी. घर लौट आया.

सुबह हुई. स्कूल लगा. रामौतार सज-संवरकर स्कूल पहुंचा. सनसनी फैली थी वहां. सारे मास्टर इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे थे. स्कूल को बचे-खुचे पुराने चित्रों से सजाया जा रहा था. कई लड़कों को केवल शक में ही काफी सजा दी जा चुकी थी. प्रिंसीपल चौकीदार पर बरस रहा था. 'मूर्ख...' रामौतार मन ही मन उस पर हंसा और बेधड़क उसके पास चला गया.

रामौतार को देखते ही प्रिंसीपल ने चौकीदार को छोड़ दिया और उसकी ओर झपटा. उसकी बाजू पकड़कर लगभग घसीटते हुए वह अपने कमरे में घुस गया. फिर बोला, "रामौतार बेटा! इंस्पेक्टर साहबान के आने में अभी दो घंटे बाकी हैं. तबतक झटपट दो चार नये चार्ट तो बना दे. जो सूक्तियां वगैरह लिखनी हैं, वे नोट कर फौरन जैसे 'सत्य की सदा विजय होती है'... 'अपने दुश्मन से भी प्रेम करो'... 'मेहनत का फल मीठा...'

रामौतार हंसा. ठहाका मारकर हंसा. हंसते-हंसते दोहरा हो गया. "रामौतार...रामौतार..." प्रिंसीपल ने उसे हैरत से टोका. पर उसकी हंसी नहीं रुकी. वह हंस रहा था. हंसे जा रहा था. आज स्कूल में पहली बार हंस रहा था रामौतार. उसकी हंसी थम ही नहीं रही है. सारी दुनिया उसे हंसता देखकर भौंचक है पर वह हंसे ही जा रहा है, हा-हा-हो □

● बी-22/जी-4, दिलशाद गार्डन, दिल्ली—110032.

प्रतिक्रिया ◘ राजेंद्र परदेसी

अभी वह दफ्तर में बैठा ही था कि चपरासी बोला, "साहब! बड़े साहब का टेलीफोन है."

टेलीफोन पर पिघलते हुए उसने कहा, "नमस्ते सर! मैं वर्मा बोल रहा हूं."

"नमस्ते! तुम अपनी रिपोर्ट भिजवाते क्यों नहीं? ...रिमाइंडर आया है. तुम्हें प्रमोशन नहीं चाहिए क्या?"

"नहीं सर. ऐसी बात नहीं है. हमने तो परसों ही फार्म भरकर आपके पास भिजवा दिया था सर."

"अच्छा ठीक है. मैं अभी दिखवा लेता हूं. और सुनो, तुमने चरणदास का पेमेंट क्यों रुकवा दिया है?"

"सर! वह तो बिल्कुल बेकार आदमी है. अपना तो जायेगा ही.. हम सभी को ले डूबेगा."

"क्या हुआ?"

"सर! उसने सिमेंट की जगह खाली बालू ही भेज दिया है. एक बरसात भी दीवाल चल नहीं पायेगी. इसीलिए उसके खिलाफ रिपोर्ट भेज रहा हूं सर."

"भाई, वह अपना खास आदमी है. जरा फिर से देख लो. उन बोरियों में सिमेंट है. और सुनो, शाम को लौटते समय इधर से अपना सी. आर. देखते जाना."

● सहायक अभियंता, हरनाथ महाशय बिल्डिंग, निकट त्रिपाठी चित्र मंदिर, गांधी नगर, बस्ती (उ. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिड़की

• नासिरा शर्मा

बुढ़ापे का इश्क, मशहूर है कि बदनामी लाता है... और वह लाया! – इश्क-मुश्क और आंदोलनों में पनपते शिक्षा जगत में व्याप्त विसंगतियों तथा पढ़ाई और नौकरी के अंतर्विरोधी अंधेरों में रोशनी की तलाश करती कहानी..

वह हमारी क्लास का चांद थीं, मगर हमारे लिए पीव से भरा ऐसा दाग जो नासूर बनकर रिसता रहता है. यह उनका दुलार का नाम था, जो कभी तनहाई के संवेदनशील क्षणों में हमारे प्रोफेसर ने भावना से अतिरेक होकर मन का सारा मधु, सारा प्रेम इस शब्द में उड़ेल उन्हें पुकारा होगा.

थीं भी वह चांद, चांद की तरह, बरसों पुरानी, पीले चेहरे पर चर्खा कातती बुढ़िया की जगह पीले दाने और बेशुमार धब्बे जो शायद चांद के भौतिक भूगोल का मानचित्र था. यह हुलिया तो उनका तब होता था जब उनका पेट खराब होता था, अगर पेट खराब न होता तो दाने की जगह उनके गंदुमी चेहरे पर काले-काले मस्से किसी के भी पिलपिले दिलवाले सीने पर घूंसा मारने की क्षमता रखते थे. आगे की बात हम छोड़ते हैं. हमारे ऊंट छाप प्रोफसर ही क्या कम थे घायल होने के लिए? बड़े-बड़े पर, लंबा ताड़ जैसा कद जो हर एक के आगे दोहरा हो कोरनिश बजा लाने में माहिर था. ऊंट के थूथनवाले होंठ, जिन पर जाने इश्क की गर्मी और आहों की सोजिश का करिश्मा था या जिंदगी में कुछ न कर सकने की तृष्णा का असर, जो हमेशा उन पर पपड़ी जमी रहती थी, तिस पर पान की लाल धड़ी, फरहाद के ताजे बहे खून की तरह उबड़-खाबड़ जमीन रूपी होंठों पर बल खाती फरियाद की शक्ल में अजीब गुल खिलाती थी.

गर्ज कि दोनों लैला-मजनूं थे, एक-दूसरे के नर्वस सिस्टम का स्विच बने हुए, एक-दूसरे को बड़ी चालाकी से ठग रहे थे. उनके पास उनकी पतिव्रता पत्नी थीं, बच्चे थे. इस कुंवा बाला की तलाश किसी बैंक बैलेंस मोटरवाले गबरू जवान की थी. उसके इंतजार में तब तक इस साठे-पाठे के साथ समन काट रही थीं और वह भागते भूत की लंगोटी ही सही, समझकर अपनी जिंदगी भर की घुटती कुंठाओं की गिरह इस-चंचल-चपल चंद्र षोडषी से खुलवा रहे थे जो उनके दिल में ज्वार की लंबी-लंबी लपटें उठाती थीं. संक्षेप में उनकी सौदा-बाजारी और आपसी मोल-भाव ने न केवल क्लास का बल्कि

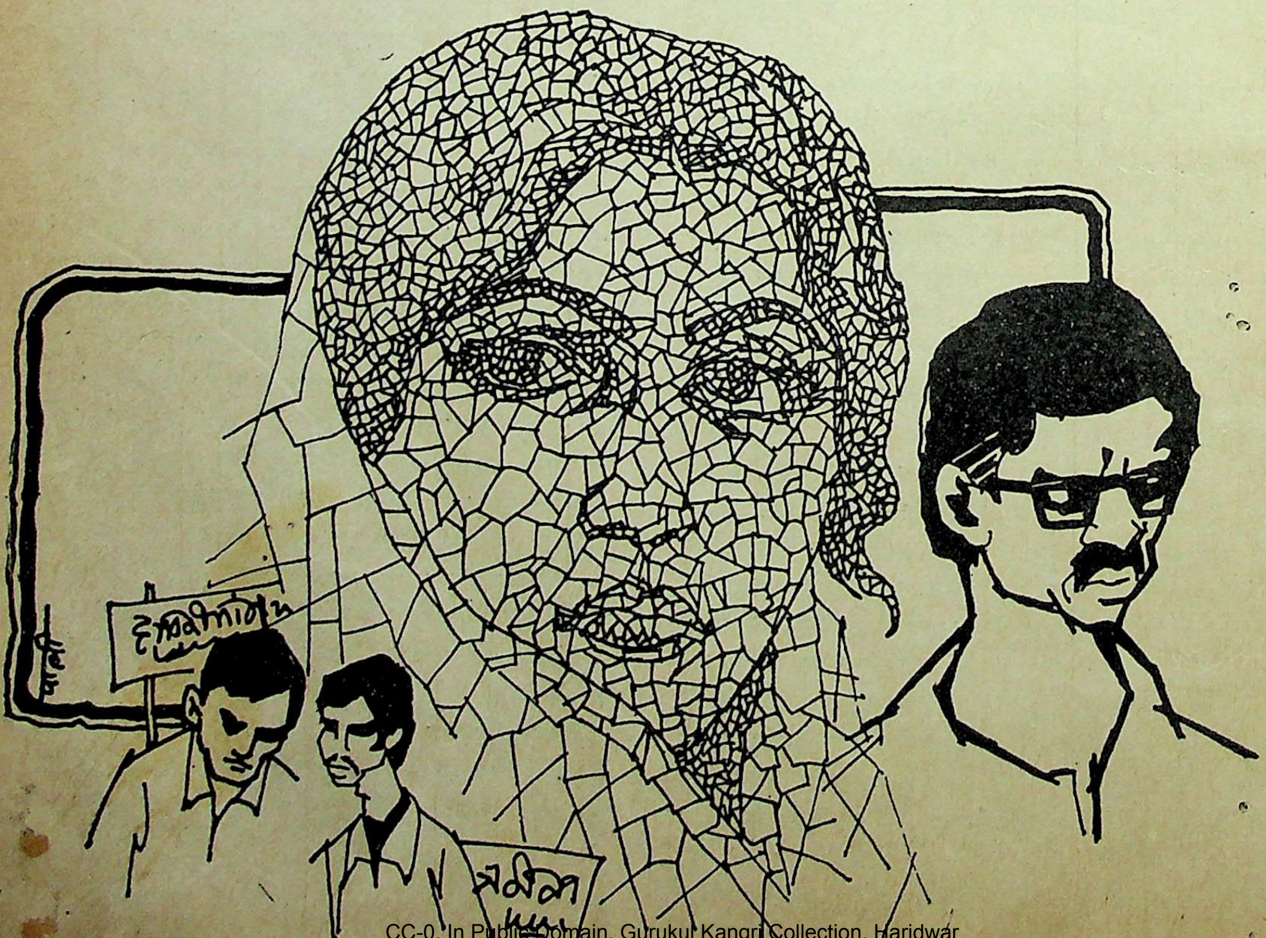

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरे विभाग का वातावरण दूषित कर रखा था. हम कौन थे, जो हमारी कोई सुनता, हम सारे विद्यार्थी सड़क की खाक और धूल थे जिस पर चांदबीबी अपनी तौबा शिकन जवानी के ढीले-ढाले अंजर-पंजर को पटक-पटककर, मटक-मटककर घसीटती थीं और हम उनके अंग-अंग के खुलकर बिखर जाने के भय से दम साधे रहते थे.

क्लास में वह मैना की तरह फुदकती, इस डाल से उस डाल पर कूदती, नैनों के कटीले बाण छोड़ती जो प्रोफेसर साहब के अधेड़ मगर ढाल जैसे सीने को घायल कर जाते. वासना के लपलपाते शोलों को प्रोफेसर साहब की आंखों में सांप की जीभ की तरह फुंकार मारता देख, हम दहल जाते थे. कोर्स के समाप्त न होने के कारण हम सब अधमरे रहते और वह बिना पढ़े ही फर्स्ट आ रही थी. गर्ज यह कि वह ढलती जवानी में रामपुर की झलझलाती छुरी की तरह तेज और नुकीली थी और हम सब भरी जवानी में गुट्ठल छुरी की तरह बेकार.

मार्च का अंत था, मासिक परीक्षाएं चल रही थीं, हमारी जानें हलक में अटकी थीं और पैर के नीचे से जमीन गायब थी, पाठ्यक्रम देखते तो कोर्स की लंबी बलखायी शैतान की आंत को देखकर हमारे होश उड़ जाते.

परीक्षा सर पर थी, फाइनल इयर, कोर्स समाप्त न हुआ था. क्या आयेगा क्या नहीं आयेगा, उसका पूर्ण ज्ञान हमें नहीं था. प्रोफेसर साहब हमेशा की तरह गायब रहते. कभी-कभी दूज के चांद की तरह झलक दिखाते और फिर बादलों में छुप जाते. जब उनके विश्वविद्यालय में आने का समय होता था, तब वह हमारे जाने का होता.

आज भी वही हुआ, रास्ते में मिल गये, टोकते हुए बोले, "अगरचे मैं बहुत दूर से आता हूं और आप लोगों की वजह से आ रहा हूं, इसलिए पढ़ाने को हर समय तैयार रहता हूं, मगर आप लोगों को जल्दी है. और हो भी क्यों न, यहीं होस्टल में तो रहते हैं. मैं मीलों लंबा सफर करता हुआ दो-तीन बस बदलता हुआ आता हूं तो भी मुझे जल्दी नहीं है."

"नहीं सर, यह बात नहीं है, हम तो सुबह दस बजे से आये हुए हैं. . .बात यह है, मैस में दो बजे के बाद खाना नहीं मिलता है और फिर हमें अपनी जेब से. . ." हम घुटते-कुढ़ते केवल विनम्र होकर इतना ही कहते.

"खैर! जाते-जाते कुछ सवाल लिख लें, दिन खराब तो न होगा, हां, यह बताये देता हूं कल करके जरूर लाइएगा वरना. . ." यह वाक्य यूं कहते जैसे आज तक जो दिया है उसे हमेशा चेक किया ही तो है!

हम सब लिखने लगे, बड़े-बड़े शोध प्रश्न जिन्हें अब तक न हमने डिस्कस किया था न पढ़ा था. असलम ने गला साफ किया, "सर. . .यह. . ."

"मैं किताबों का नाम दे रहा हूं, पढ़िए और आराम से लिखकर हफ्ते भर बाद दे दीजिए. मैं क्या करूं, दुनिया का इकलौता शौक पढ़ना-पढ़ाना है मगर इस चेयरमैनशिप के कारण नहीं कर पा रहा हूं. कंबली को छोड़ना चाहता हूं मगर जब कंबली मुझे छोड़े तब न?"

क्या कहते हम कि आपने ऐड़ी-चोटी का जोर लगाया है सर, सारे दिन चप्पल सटकाने, खाने-पिलाने के बाद तो आपको चेयरमैनशिप नसीब हुई है.

अभी हमने चंद पंक्तियां ही लिखी थीं कि सोना उर्फ चांद बीबी को प्यास लग गयी. जब तक प्रोफेसर साहब नरेश को भगाते कोल्ड ड्रिंक के लिए और नरेश घबराहट में कालीन के धागों में उलझता-गिरता अपने फर्स्ट फ्लोर पर पहुंचता, तब तक वह गैलरी में लगे पानी के कूलर से अपनी प्यास बुझाने चली गयी. जब वह लौटी तो आधा दरवाजा खोलकर इस अदा से साईड पोज मारा कि प्रोफेसर साहब की घिग्घी बंध गयी और हमारे छक्के छूट गये. होंठ अभी गीले थे, उनसे मदिरा टपक रही थी. एक अदा से उन्होंने सिर घुमाकर पानी की बूंदों को आंचल से पोंछा और बदन लचकाकर फूलों की नसों पर चलने जैसा भ्रम देकर वह कुर्सी पर बैठ गयी. प्रोफेसर साहब की व्याकुल उंगलियां स्पर्श के लिए तड़पीं मगर जालिम समाज की सख्त दीवारों को सामने बैठा देखकर मुठ्ठियों में बंध गयी, संताप कुछ कम हुआ. कोल्ड ड्रिंक आ गया था सब उसके ठंडे घूंट गुटक रहे थे.

थोड़ी देर बाद खाली शीशी उठाते छोकरे से उन्होंने छोले लाने को कहा, यह इशारा हमें था कि अब फूट जाओ. हम कॉपी-कलम संभालते हुए, बोतल में बचे तरल पदार्थ को जबर्दस्ती बड़ा घूंट भर खड़े हो गये और बरबस आती हुई डकारों को गले में दबाते बेवकूफों की तरह बाहर निकल आये. गैलरी पार करते हुए सुरेश को खयाल आया कि वह पेन प्रोफेसर साहब से लेना भूल गया है जो उन्होंने हस्ताक्षर के लिए मांगा था. कलम इंपोर्टेड था, उसे डर था कि कहीं वह चांद को सप्रेम भेंट न कर दें. हम सब बेखयाली में सुरेश के साथ लौटे, जल्दी किसी को न थी क्योंकि अब खाना खाने जाना तो कैंटीन ही था. सुरेश ने दस्तक के साथ ही हैंडिल घुमा दिया, चलती-मूवी स्टिल हो गयी दोनों के हाथ छोटी-सी कटोरी में छोले उठाने में फंसे हुए थे. सुरेश के कदम उखड़ गये और हमारी अंतड़ियां पेट में ऐंठ गयीं.

"आओ आओ, लो चाय लो," अपने आगे की जूठी चाय आगे बढ़ाते वह बेहतरह घबराये हुए बोले, मगर हमारी सह-पाठिनी मिस सोना उर्फ चांद बीबी जीती हुई बाजी की तरह अकड़ी भटूरे नोच रही थीं.

'जी मेरा पेन. . ." सुरेश ने शर्मिंदगी से कहा.

"लो. . .लो. . ." झेंपते हुए उन्होंने कहा.

हम लोग जले-भुने लौट आये. सुरेश का मन पेन पाकर हल्का हो गया था.

"बाई गॉड, हद हो गयी है," असमल ने रूमाल से गर्दन का पसीना पोंछते हुए कहा.

"क्यों! इसलिए कि हमारे शौक हमारे बुजुर्ग फरमा रहे हैं?" कमाल ने चुटकी ली.

"यार! लड़कियां हर जगह मजे में रहती हैं. फूटा तो हमारा भाग्य है जो न पतली कमर रखते हैं, न तिरछी नजर. बरछी चलायें कैसे और किस पर?" नरेश ने कटुता से कहा.

"मैडम पर चलाइए न, अबकी नंबर कम दिये हैं," कुसुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने चिढ़कर कहा.

"कुसुम जी, आप क्यों दुखी हैं हथियार तो..." सुरेंद्र सिंह ने अपनी मूंछों को उमेठते हुए कहा...

"शट-अप!" कुसुम चीख पड़ी, "तमीज से बात करना वरना..."

"यार, काहे को घटियापन पर उतर रहे हो, आदमी पहचान कर बातें की जाती हैं." डेविड बोला.

"चलो, खत्म करो."

रेहाना और कुसुम, इन तीनों से अलग होकर भुनभुनाती हुई कुछ फासले पर चलने लगीं. मूड सबका खराब था. मन में द्वेष, ईर्ष्या का तूफान उठ रहा था. सब कुछ जानने के बाद भी वे बेबस थे. कुछ करने से, स्थिति के बिगड़ने का भय उन्हें दबोचने लगता था सो सामान्य वार्तालाप भी वह प्रोफेसर साहब से न कर पाते थे.

सोना उर्फ चांद उनकी खिड़की थीं जिससे झांककर वह पूरे विभाग क्या, पूरी यूनिवर्सिटी का लंगड़ाते हुए नजारा करते थे और उसी नजारे के अनुसार व्यवहार. इसलिए बड़े आराम से मुखौटे बदलते थे, कहीं पर जनवादी तो कहीं पर धार्मिक गर्ज. कि हर चोले में वह वही नजर आते जो नजर आना चाहते थे.

विभाग के जमादार से लेकर लेक्चरर तक सोना से डरते थे. सोना की जबान मेरठ की कैंची से अधिक तेज थी. वास्तव में वह ऐसा ट्रंप कार्ड थी कि जिसके सिर पर गिरती; वह बाजी हार जाता. सो सब ही सोना से बातचीत करते हुए जरा सचेत रहते थे. दोपहर में जब लंच के लिए निकल जाते, तब यह दोनों खाली कमरों, सुनसान गैलरी और तनहाई से जमकर फायदा उठाते थे. लंच के साथ रिपोर्टिंग होती और उसी के साथ फैसले भी हो जाते थे. फिर आफत का पहाड़ लोगों पर टूटता, किसी टीचर को डांट पड़ती, किसी विद्यार्थी के छात्रवृत्ति के फार्म पर हस्ताक्षर न करते, किसी का कागज दबा लेते, छुट्टी की अर्जी रद्द कर देते, पोस्ट लौटा देते, मीटिंग की इत्तला न देते और अहम फैसले कर लेते, सुखद सहवास के बाद, शेर की तरह दहाड़ते हुए कछार से निकलते और शेरनी द्वारा किये गये शिकार को खूब नोच-नोचकर भंभोड़-भंभोड़ कर खाते थे.

परीक्षा फल निकला, सोना की फर्स्ट पोजीशन थी सो उसे स्कॉलरशिप मिल गया और वह छह मास के लिए विदेश चली गयी, हममें से केवल मैंने, असलम और सुरेश ने एम. फिल. ज्वाईन की, बाकी काम की तलाश में फिरने लगे. नरेश, जो हमारी क्लास का सबसे प्रतिभावान छात्र था, अपनी पोजीशन देख ऐसा दुखी हुआ कि हमारे समझाने पर भी उसने पढ़ाई जारी न रख, बैंक में नौकरी कर ली और किताब को कभी भी न छूने की सौगंध खा ली. बाकी सब भी अपने-अपने रास्ते पर निकल गये.

दो वर्ष बाद हम आठों टीचर बनने की अभिलाषा में दम तोड़ते हुए जिधर सींग समाये भाग खड़े हुए, मगर मन पसंद के प्रोफेशन को न पा सकने की कसक मन में थी. कभी-कभी ऐसा रिसती कि मौजूदा सुख का मरहम भी घाव को न भरता. यह दर्द उस समय अधिक ला दवा हो जाता, जब हम कभी साथ बैठते और सोचते कि जो हमारे बीच तफरीह करने आया था, यूनिवर्सिटी ने उसके दामन में सब कुछ डाला, डिविजन, स्कॉलरशिप, सम्मान, सुरक्षा और जो विद्या पाने आये थे, उनकी झोली में केवल अन्याय और निराशा! आखिर क्यों?

सुरेश ने कुछ समय बाद आत्महत्या कर ली, हमें गम हुआ था मगर गम से अधिक क्रोध आया था, आखिर हम सब ही जूझ रहे थे, कौन आराम से बैठा था? मगर घर और डिपार्टमेंट के बीच पिसते हुए जाने कब ऐसी कमजोरी उसके मन में आयी जिसका हमें पता न चल पाया. कभी जबान खोलता जब न? और सोना, वह विदेश घूमने स्कॉलरशिप लेने के बाद एक ब्याहता मर्द से विवाह कर दोबारा विदेश चली गयी. वह आदमी अपने बीबी-बच्चे यहीं गांव में छोड़ गया. दूसरों की किस्मत का सब कुछ अपने माथे पर लिखने की कला सोना को आती है, तभी तो रास्ते में आने वाली हर रुकावट को उखाड़ फेंकती है. सच है, जिंदगी उन्हीं की है जो न जीवन में किसी उसूल के कायल होते हैं न मर्यादा के, बस वह अपने जीने का टैक्स दूसरों से वसूलते और उन्नति करते रहते हैं.

बुढ़ापे का इश्क मशहूर है कि बदनामी लाता है. वह लाया, इश्क और मुश्क तो छिपाये नहीं छिपते हैं. पत्नी का मुंह तो उन्होंने सिल दिया था मगर इधर-उधर होती चेमीगुइयां से कैसे बचते? इनका रेतीला व्यक्तित्व एक ही धक्के में ढह गया. नींव तो कभी पड़ी ही न थी. तूफान का उफान बैठ गया था, समय से जिसको जो लेना था वह ले चुका था. खाली झोली वाले दार्शनिक अंदाज से वातावरण को समझाते रह गये थे. प्रोफेसर साहब ने सिर झुकाकर अपने सफेद बालों में मेंहदी लगाना आरंभ कर दिया था, क्योंकि खिजाब का रंग उड़ चुका था.

मेरे सारे साथी बिखर गये थे. हम सबने साथ ही एम. ए. किया था. दूसरे सब कहीं न कहीं लग गये, मैं केवल पीएच.डी. का काम खत्म करने में व्यस्त रहा. सोचता हूं, नौकरी कर लेनी चाहिए. स्कॉलरशिप से कब तक काम चलेगा मेरा? एक दिन यही बात मैंने किसी से कही थी और मेरे इस विचार की खबर जाने कैसे प्रोफेसर साहब को मिल गयी और उन्होंने मेरा स्कॉलरशिप डॉली को दे दिया. मैं क्या कहता? उनसे लड़ता? क्या कहता कि आपने तीन वर्ष से कोई ड्राफ्ट नहीं देखा है? मुझे तो बस लगा यह लड़कियां काली आंधियां होती हैं जो सबका सब कुछ उड़ा ले जाती हैं फिर स्वयं भी नहीं टिकती हैं वहां. मैं ही खामोशी से अधूरी थीसिस लेकर बाहर आ गया.

आज का इंटरव्यू अच्छा हुआ है, मगर मैं लिया नहीं जाऊंगा, मन में आशंका घुमड़ती है. वहां पर दो लड़कियां भी तो आयी थीं न? मेरा लिया जाना असंभव था. थका लौट आता हूं. कहकहे कानों में गूंजने लगते हैं, लगता है आवाज जानी-पहचानी है. कौन हंसता था इस तरह से? दिल घबरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा है. रमेश के घर चलता हूं मगर वहां भी तो मन नहीं लगता. न कमाल के यहां, न किसी और के यहां. उनकी पत्नियां बाहर काम करती हैं. उनकी हंसी में, उठने-बैठने में, मुझे लगता है सोना छुपी है, डॉली छुपी है जो दूसरों का हक छीनती हैं. यह सब भी अपने बॉस को बुद्धू बना रही होंगी. यह सब अपने पतियों से पहले उन्नति करेंगी! मैं नहीं जाता, कहीं नहीं जाता, हर जगह वही औरत...

बहुत दौड़-धूप करके एक ऑफिस में नौकरी मिल गयी, बहुत कहने पर भी मैंने विवाह नहीं किया. हां, एक सेक्रेटरी जरूर कुछ सालों बाद तरक्की के साथ मिल गयी, उसकी मुस्कान भी मुझे जहर लगती थी. कैसे-कैसे मैं उसे डांटता था, लगता था कि हव्वा ही तो थी जिसने आदम को जन्नत से निकलवाया था. यह भी उसी जाति की है, मेरा व्यवहार उसके साथ बड़ा रूखा था मगर जब उसकी आर्थिक दशा का पता चला कि पूरा एक परिवार उसके वेतन के इंतजार में एक छोटे-से शहर में रहता है और वह...उसमें सोना या डॉली वाली कोई बात अभी तक मुझे दिखी भी नहीं थी, न वह उनकी तरह मेज पर चढ़कर प्रोफेसर साहब को मुंह चिढ़ाती थी, न मुझसे नाज व नखरे. वह तो हर डांट पर सर झुका लेती थी. उसकी आंखें भीग जाती थीं. पहली बार मुझे उस लड़की ने सोचने पर मजबूर किया. शाम को जब नरेश के घर पहुंचा तो वहां एक दूसरा दृश्य देखने को मिला. उसकी पत्नी दु:खी थी. वही पुराना किस्सा उसके साथ भी हुआ और पहली बार मुझे लगा कि औरत केवल मर्दों की नहीं बल्कि औरत की भी बहुत बड़ी दुश्मन होती है. मगर यह औरत होती कौन है?

बहुत देर तक सोचता रहता हूं...फिर कुछ दृश्य मानस-पटल पर उभरने लगता है.

बरसों पहले, वह मोहल्ले तो उजड़ गये जहां तबले की थाप और घुंघरुओं की झनक सुनाई पड़ती थी. सीनों को गोलियों से बींधकर बताया गया था कि यह कानूनी जुर्म है. शाम को सारी रंगीनियां उजड़ गयी थीं और उजड़े घर बसने लगे थे. जमींदारी खत्म हो गयी थी. समाज में पनपते गुनाह कम हो गये थे. वर्षों पहले रजिया सुलतान इतिहास की वीर योद्धा, जिसकी जिंदगी उसकी तलवार थी, जिसके हाथों में जनता के दु:ख-सुख की बागडोर थी, उसे खूब पता था औरत का शोषण कहां पर हो रहा है. कहां पर वह जलील हो रही है. तभी तो उसने हुक्म दिया कि सारे 'रेड लाईट ऐरिया' समाप्त कर उन औरतों को बाइज्जत जिंदगी उपलब्ध की जाये, जिसे सुनकर वजीर थोड़ी देर खामोश रहा फिर बोला, 'सुलतान ऐसा हुक्म न दें, इससे हमारी शरीफ बहू-बेटियों की इज्जत खतरे में पड़ जायेगी. उनका जीना दूभर हो जायेगा. कैसा था वह वजीर! निरा खुदगर्ज, मगर नहीं, आज वही तो हुआ है. दरवाजा बंद हो गया है. खिड़की खुल गयी, शरीफ बहू-बेटियों के वेश में...नहीं, क्या उलटा-सीधा मैं सोच रहा हूं. मगर सच्चाई यही है...शायद कभी खिड़की बंद होकर रोशनदान खुल जाये!

अनुभव के साथ ही मेरे विचार बदल रहे थे. मुझे महसूस हुआ कि नयी उन्नति करनेवाला एक वर्ग इसमें शामिल है जो डरता है कि कहीं उनकी उन्नति में दूसरा वर्ग बाधा न बन जाये. फिर कहकहे गूंजने लगे——पहचान लिया इस बार. यह सोना की आवाज थी. मेरे भूत का कड़वापन इसमें निहित था. कुसुम का उतरा चेहरा याद आया. कोल्हू का बैल बनी पूरे परिवार को संभाल रही है. न कीचड़, न गंदगी, एक पहाड़ी नदी की तरह साफ, उज्ज्वल. उतार-चढ़ाव पर गिरती-संभलती वह संघर्ष करती रही है. मन का सारा द्वेष समाप्त हो गया था. लगा, मैंने ही इस बदलते वातावरण को नहीं समझा था. सबकी मान्यताएं, मर्यादाएं अलग होती हैं और कुछ आधुनिकता का गलत अर्थ लेते हैं. इस स्थिति से भागा भी तो नहीं जा सकता. रहना तो समाज की विभिन्न इकाइयों के ही साथ है. भले ही हम उन्हें पसंद न करें. मगर

● व्यंग्य चित्र : नीरद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबको एक पंक्ति में खड़ा कर देना भी अन्याय है. मन में भरा जहर अब धीरे-धीरे समाप्त होने लगा था. ऑफिस में मेरा व्यवहार भी बदल रहा था, जिससे मैं खुश था.

शाम को कमाल के घर के लिए बाहर निकला. रास्ते में सोचता गया कि कैसे कमाल तक यह इच्छा पहुंचाऊं कि मैं शादी के लिए राजी हूं. घरवाले तो मेरे इनकार से उदासीन होकर अब विवाह का किस्सा छेड़ते ही नहीं थे. अब कमाल से ही कुछ कहलाया जा सकता है. मां खुश होंगी.

कमाल के घर में लोगों की भीड़ थी. कमाल घर पर नहीं था. कुछ देर मैं बैठा पत्रिकाओं के पन्ने पलटता रहा, तभी कमाल कमरे में घुसता हुआ बोला, "यार, रशीद! तुम ही इन लोगों को कुछ समझाओ," फिर मुंह दरवाजे की तरफ करके बोला, "आओ तुम लोग अंदर आओ."

कमाल का छोटा भाई और उसके सहपाठी अंदर घुसे.

"क्या बात है भाई?" मैंने पूछा.

"अपने प्रोफेसर साहब के खिलाफ हंगामा करने की ठानी है इन महापुरुषों ने..." कमाल ने कहा, "दरिया में रहकर मगरमच्छ से बैर! मुलायजा फरमायें! इन परकटे इनकलाबियों की बातें सुनिए और उम्र देखिए! दूध के दांत अभी नहीं टूटे और चले हैं टीचरों के दांत खट्टे करने!"

"भाई, तुम्हारे प्रोफेसर तुम्हारे टीचर हुए, उनकी इज्जत करनी चाहिए. यूं बेकार का हंगामा करने से क्या फायदा. इससे तो समय और पढ़ाई, दोनों का नुकसान होगा. होना वही है जो उन्होंने सोचा है. तुम लोग क्यों समय बरबाद कर रहे हो?"

"देखिए, हमें अर्थात इस जवान पीढ़ी पर बहुत सारे आरोप हैं. हम उच्छृंखलता दिखाते हैं, उद्दंड हो गये हैं. यह भी ठीक है कि हमें उनका आदर करना चाहिए, मगर हम अनादर कब कर रहे हैं. उनसे सिर्फ अपना हक मांग रहे हैं. उस विभाग को तबाह होने से बचा रहे हैं, आप नहीं जानते हैं जो अनर्थ वहां हो रहा है!"

"यह कौन-सा आदर है? उलटे-सीधे पोस्टर बना रहे हो! अर्थ-अनर्थ की समझ कबसे आ गयी है?...पढ़ो क्लास में जाओ, यह ठीक नहीं है?" कमाल ने कहा.

"हमने तो कल जुलूस भी निकाला. हंगर स्ट्राइक भी करेंगे. हो सका तो यूनिवर्सिटी बंद भी करेंगे. अथॉरिटीज को हमारी मांगों की तरफ ध्यान देना होगा."

"उसके लिए केवल यही हथियार रह गया है! आतंककारियोंवाला! जाओ सब मिलकर अपने प्रोफेसर से पहले बात करो, समस्या हल हो जायेगी." नरेश भी आ गया था, उसने कहा.

"सुनता कौन है? हमारे प्रोफेसर साहब के पास समय कहां है जो हमसे बात करें? वे तो क्लास भी नहीं लेते हैं, कोर्स पूरा नहीं, जिसे चाहे उठाकर स्कॉलरशिप मिल जाता है, जिसे चाहे बाहर भेज देते हैं. उनका व्यवहार अन्य टीचर्स से भी ठीक नहीं है."

"टीचर्स की लड़ाई तुम क्यों लड़ रहे हो! तुम्हें नंबरों से काम है, जिंदगी पड़ी है लड़ने के लिए. फिर बच्चे थोड़े हो जो पढ़ाया जाये, स्वयं पढ़ो!"

"जब सब कुछ हमें स्वयं ही करना है तो नाम लिखवाने, क्लास में जाने की हिपोक्रेसी किसलिए! घर बैठे रहें..." एक लड़के ने कटुता से कहा.

"फिर नंबरों में खुली धांधली है. हम सैकेंड क्लास लेकर क्या यूनिवर्सिटी जॉब ले सकते हैं? हमसे खराब पढ़नेवाले क्यों अच्छे नंबर लेते हैं? पेपर्स मिलाइए, डिस्कशन रखिए, फिर देखिए असलियत क्या है. हम पढ़ने जाते हैं, मापदंड पढ़ाई होना चाहिए न कि खुशामद और..." कहते-कहते वह रुक गया. सारे लड़के कुछ कहने से झिझक रहे थे जैसे उनके अंदर

लघुकथा

कुआं

▣ सीतेश आलोक

बारह-तेरह साल का वह लड़का लोकल ट्रेन पर कोई फिल्मी भजन सुनाकर भीख मांग रहा था. उसका एक पैर तो घुटने के पास से कटा ही था, दोनों हाथ भी शायद किसी बीमारी से पतले-कमजोर रह गये थे. इतना कुछ छीनकर लगता था जैसे प्रकृति ने उसके गले में कुछ संभावनाएं भर दी थीं. लेकिन संभावना साधन के अभाव में शायद असंभावना ही बनी रहती है.

दो-तीन मिनट बाद ही अगले स्टेशन पर गले में हारमोनियम लटकाकर एक अंधा व्यक्ति चढ़ा. पीछे ही पीछे गले में ढोलक लटकाये एक अंधी स्त्री भी थी. गाड़ी चलते ही उन्होंने हारमोनियम और ढोलक पर सुर-ताल सहित एक दूसरा ही फिल्मी भजन छेड़ दिया. सुरताल की ऊंची दुहरी आवाज में उसकी अकेली आवाज डूब गयी. मैंने दूर से ही देखा, वह चुप हो गया था. मैंने सोचा कि मन ही मन उसके अंदर विद्रोह उमड़ रहा होगा ...वह शायद इन नये गायकों को कोस रहा हो. दूसरे ही क्षण मुझे लगा जैसे उसके होंठ हिल रहे हैं.

अगले स्टेशन पर मुझे उतरना था...और उतरते-उतरते मुझे उस लड़के को भी उतरने में सहायता देनी पड़ी. मैं योंही पूछ बैठा, "इनकी हारमोनियम...ढोलक ने तो आपका मुंह ही बंद कर दिया...आपका तो..."

मेरी बात काटता-सा वह बोला, "तो क्या हुआ साब! किसी पर रोक तो है नईं. और बात ये है साब...कि वो लोग अच्छा गाता है. मेरे को तो जब मिल जाते हैं तो मैं अपना गाना बंद करके उन्हीं का गाना गाकर के सीखने लगता हूं. और कहां सीखेगा साब...तुम्हीं बताओ. फिर...झगड़ा करने से कोई फायदा...?"

मैं संभावना और समझदारी को एक साथ अभाव के गहरे कुएं में डूबता छोड़कर आगे बढ़ गया. □

● के 4/12 मॉडल टाउन, दिल्ली-110009

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ घुट रहा है. लिहाज में बता नहीं रहे हैं. एकदम से कमाल का भाई जमाल बोला, "देखिए भाई साहब, हमें कोई ऐतराज नहीं है कि वह अपनी प्राइवेट लाइफ में क्या करते हैं, परंतु उसके लिए वह हमें कुर्बान न करें!"

कहानी समझ में आ गयी थी. वही एक कहानी थी, बस किरदार बदल गये थे. फर्क इतना था कि इसमें घुटन नहीं, खुली क्रांति की बू आ रही थी.

"हम पर आरोप है कि हम नशा करते हैं, एल. एस. डी. का इस्तेमाल करते हैं, हिप्पी हो गये हैं! ठीक है, पर आपके पास हमें देने के लिए क्या है? आपको बहुत कुछ मिला है. . . . उसका प्रयोग क्या वही है? हर समय विभाग में टैंशन रहता है. अन्याय होता है, आखिर क्यों? वह अध्यापक भी तो हों जिनके चरणों की धूल हम माथे पर लगायें. ये तो कोई और ही हैं पाखंडी, षड्यंत्री, इनके मुंह से यह मुखौटा उतारना है! उन्हें हक नहीं है कि बिना कुछ लिखे प्रोफेसर हो जाये. आपने अपने विद्यार्थी जीवन में क्या इस घुटन को महसूस नहीं किया था? अगर नहीं किया था तो फिर आपको बोलने का हक नहीं है और अगर किया था तो उसके विरुद्ध आपने किया क्या था?" यूनियन का अध्यक्ष जो अभी तक खामोश था एकदम से हमारे सामने प्रश्नों की सूची लेकर आ खड़ा हुआ.

मन कड़वाहट से भर उठा. हम ही नपुंसक थे. . .बेकार की मर्यादा को ओढ़े हुए. नाम से और कुर्सी से कभी कोई कुछ बना है? वास्तव में तो इंसान बड़ा होता है, उसके अंदर की रोशनी. . .जो दूसरों को बहुत कुछ देकर बताती है कि वह क्या है?

"बोलिए न?" वे प्रश्न कर रहे थे, उन मुर्दा विद्यार्थियों से जिन्होंने चूड़ी पहनकर मैदान एक ऐसी गंदगी के हवाले कर दिया था जिसने केवल उन्हें तबाह ही नहीं किया था, बल्कि उस पूरे विभाग में भूसा केवल अपने थोड़े-से फायदे के लिए भरा था. यदि उस समय कुछ करता तो आज उन बहुरूपियों के खिलाफ उठाया गया यह दूसरा कदम होता, संघर्ष आगे बढ़ता. . .वे सिर्फ सिसकते रहे, घुटते रहे, अपना हक लेने के बजाय उन्होंने रास्ता बदल लिया था!

"हमारी गलती हमें बताइए! जवाब दीजिए, हमें इस एम. ए. फाइनल के बाद कहां नौकरी मिल रही है?"

"हम अंधेरे में भटकते कब तक बंद दरवाजों से टकराते रहेंगे?"

"क्या हम केवल अपनी अभिलाषाओं का जनाजा उठाये इधर से उधर भटकते रहेंगे और हमारे हक का मिसयूज दूसरे करेंगे, यह शोषण आखिर कब तक?"

मैंने सबसे अधिक सहा था. अधूरी थीसिस अब भी नासूर बनकर रिस रही थी. इसके बावजूद मैं इन जवानों की तरह अपने को व्यक्त नहीं कर सकता था. बोलना तो था ही, इसलिए मैंने उनसे बहुत हमदर्दी से कहा, "हर जगह यही सब है. कहां-कहां लड़ोगे? किस-किसको सुधारोगे? खुद कुछ समय बाद सुधर जाओगे, यह केवल एक उबाल है, उम्र का तकाजा है. जब जिंदगी को समझ लोगे तो ठंडे पड़ जाओगे. एक दिन फिर अपनी इस उग्रता पर हंसोगे!"

"अभी हम यहां लड़ रहे हैं. जहां जायेंगे लड़ेंगे, लड़ते-लड़ते दम तोड़ देंगे मगर खामोश नहीं रहेंगे, खामोश रहकर हम भ्रष्टाचार को बढ़ावा नहीं देंगे. हो सकता है, हमारी मांगों की जगह हमें रेस्टिकेट भी कर दिया जाये. हमने सब कुछ सोच लिया है." एक लड़की ने बड़ी दृढ़ता से कहा.

"लड़नेवाले अंजाम नहीं देखते हैं, उनका काम संघर्ष करना, युद्ध करना होता है!" अध्यक्ष ने कंधे उचकाकर कहा और चलने को हुआ. उसकी इस बात ने और उस लड़की के इस तेवर ने आग पर तेल का काम किया, हमारा तरल वजूद धू-धू करके जल उठा, हम तीनों ने जलती आंखों से एक-दूसरे की तरफ देखा, लगा एक-दूसरे पर लानत भेज रहे हों. आदत के मुताबिक हमारी आग और नफरत धीरे-धीरे पानी में बदलने लगी. हमारी चढ़ी सांसें समान गति से चलने लगीं. लगा, इन सारे हंगामों से अब तक कुछ नहीं बदला है तो अब कैसे बदल जायेगा!

लड़के-लड़कियों ने तंज भरी मुस्कान से हमें देखा और कमरे से एक-एक करके निकलने लगे. मेरा दम घुटने लगा. मैं जगह से खड़ा हुआ, महसूस हुआ मेरे अंदर का ठहरा पानी सड़ कर अधिक बदबूदार हो गया है. मुर्दा जिस्म बोझ बन गया है. अगर इस मुर्दा बेकफन लाश को, जो वर्षों से मुझे जकड़े हुए है, अपने कंधों से नहीं फेंका तो शायद जिंदगी भर इसके बोझ को ढोना पड़ेगा.

मैंने पास खड़े लड़के के हाथ से एक सफेद शीट ली. उसे मेज पर बिछाया और पिछले कई वर्षों का सारा संताप, सारा जहर, सारा दुःख जो काली घटा की तरह हमेशा मेरे मन पर छाया, मुझे घोटता रहता था, उस पोस्टर पर उतारने लगा. प्रश्न करते लड़कों के चेहरे पर मुस्कान दौड़ आयी जैसे उन्हें खड़े होने की जमीन मिल गयी हो. दर्दों के टांके तोड़ती हुई एक आवाज सीने से आयी——चार फर्स्ट क्लास के बाद तुम एक कंपनी में. . . जहां तुम्हारा काम केवल हस्ताक्षर करना रह गया है! दिल में दर्द की बेशुमार छुरियां चलने लगीं. अपने प्रोफेशन में न जा सकने का दुःख आज फिर ला दवा हो उठा. तीखी आवाज उभरी——वाह चांद! चांद उर्फ सोना, मांगे की रोशनी का गोला, फीका बदरंग, कवियों की फूहड़ भावुकता का प्रतीक. □

● 108, उत्तराखंड, न्यू कैंपस, जवाहरलाल विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली-110057

—चलते-चलते—

कब्रिस्तान के निकट से गुजरता एक व्यक्ति गड्ढे में गिर गया. काफी प्रयत्नों के बावजूद वह नहीं निकल पाया. तभी गड्ढे के निकट से एक शराबी गुजरा. व्यक्ति ने उसे पुकारते हुए कहा, "भाई साहब, मुझे यहां से बाहर निकालिए. यहां मुझे बड़ी ठंड लग रही है." शराबी ने उसे समझाते हुए कहा, "ठंड तो लगेगी ही, तुम्हारे रिश्तेदारों ने तुम पर मिट्टी तो डाली ही नहीं." □

▣ पूर्णिमा डेजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसीदास चंदन घिसैं

040585

विश्व हिंदी नौटंकी

• हरिशंकर परसाई

परसाईजी का चंदन सबसे पहले लग रहा है विश्व हिंदी सम्मेलन को, हिंदीवाले ही हिंदी के लिए कितना कर रहे हैं, प्रस्तुत है, इसका एक जायजा

विश्व हिंदी सम्मेलन, दिल्ली के इंद्रप्रस्थ स्टेडियम के भीतर संपन्न हुआ. सफल होने की जरूरत नहीं थी क्योंकि इससे किसी फल की आशा नहीं थी. मेरा मतलब सार्वजनिक फल से है. प्राइवेट फल कुछ लोगों को मिल चुके होंगे, कुछ को धीरे-धीरे मिलते जायेंगे. छोटे-से कालेज की 'सोशल गैदरिंग' के प्राइवेट रूप से फल मिलते हैं, तो यह तो विराट विश्व हिंदी सम्मेलन था.

महाभारत का वह नेवला इस यज्ञ में भी आया था, जिसका आधा शरीर स्वर्ण का था. युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आये पंडित, पुरोहित आदि प्रशंसा कर रहे थे कि यह महान यज्ञ हुआ. युधिष्ठिर ने अपार पुण्य अर्जित किया. खूब सुस्वादु भोजन कराया. भरपूर दक्षिणा दी. तभी वहां एक नेवला आया. उसका आधा शरीर सोने का था. उसने कहा, "व्यर्थ प्रशंसा करते हो. उस दीन ब्राह्मण के यज्ञ की तुलना में यह यज्ञ तुच्छ है, जिसके पुण्य के स्पर्श से मेरा आधा शरीर स्वर्ण का हो गया. तभी से मैं घूम रहा हूं कि कहीं ऐसे पुण्य के संपर्क में आऊं जिससे मेरा शेष शरीर भी स्वर्ण का हो जाये. इसी आशा से 'धर्मराज' के इस यज्ञ में आया था. परंतु यहां भी मेरा शेष शरीर सोने का नहीं हुआ."

ब्राह्मणों ने जिज्ञासा की कि कौन था वह विप्र और कैसा तप तथा पुण्य था उसका. नेवले ने कहा, "कहीं अकाल पड़ा था. एक ब्राह्मण परिवार कई दिनों का भूखा था. एक दिन वह कुछ अन्न के दाने लाया. उन्हें पीसकर, भूनकर विप्र, उसकी पत्नी और पुत्र खाने को बैठे. इतने में एक भूखा वहां आया. भूखे अतिथि को ब्राह्मण ने अपना भाग दे दिया. वह खा गया फिर भी भूखा रहा. तब स्त्री और पुत्र ने भी उसे अपना-अपना भाग खिला दिया. पूरा परिवार भूखा का भूखा रहा, पर संतुष्ट था. संयोग से मैं वहां से निकला. कुछ आटा भूमि पर गिर गया था. उस पर से मेरे शरीर का जितना अंग निकला, उसके स्पर्श से स्वर्ण का हो गया. यहां बड़ी आशा से आया था. पकवानों की जूठन के ढेर पर लोटता रहा, पर शेष भाग सोने का नहीं हुआ. इस यज्ञ में वैभव है, ताम-झाम है, बड़े-बड़े लोग हैं, मद है, अहंकार है, धन का प्रदर्शन है. परंतु पुण्य नहीं है. तप नहीं है."

स्टेडियम का नाम 'इंद्रप्रस्थ' सुनकर वह नेवला पुनः इसे राजसूय यज्ञ समझकर आया था. यह लगभग डेढ़ करोड़ का यज्ञ था पर उसका शेष शरीर सोने का नहीं हुआ. वह अब किसी भुखमरे हिंदी सेवी के तप और पुण्य की तलाश में भटक रहा है.

मैं तो इस सम्मेलन में गया नहीं. समाचार अखबारों में रोज पढ़ता रहा. सबसे हृदयद्रावक समाचार यह पढ़ा कि स्टेडियम में भीतर हो रहे सम्मेलन में बदइंतजामी की शिकायत करते हुए उपेंद्रनाथ अश्क 'फूट पड़े' या 'फफककर' रोने लगे. अंगरेजी में था 'ब्रोक डाऊन.' हिंदी में था 'फफककर' रो पड़े. 'सावन भादों के रूप' रोने जैसा मुहावरा नहीं था. मैं जानता हूं. . .सभी जानते हैं, अश्कजी बिना योजना के न हंसते हैं, न रोते हैं. उस सम्मेलन में देश के प्रतिनिधि तो थे ही सैकड़ों विदेशी प्रतिनिधि भी बैठे थे. विशेषकर विदेशी प्रतिनिधियों और इंदिरा गांधी के जासूसों के सामने यह कहकर 'फूट पड़ना' कि न ठहरने का ठीक इंतजाम है, न खाने का, यतीमों की तरह भटक रहे हैं—किस योजना के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंतर्गत था? अश्कजी के ठहरने और खाने के बढ़िया ठिकाने दिल्ली में हैं. वे अपने दुख से नहीं रोये होंगे. तो क्या विदेशियों के लिए रोये? अश्कजी किसी दूसरे के दुख पर कभी रोये, ऐसा रिकार्ड साहित्य के अभिलेखागार में कहीं नहीं मिलेगा. अश्कजी प्रयाग के उस्ताद हैं. हिंदी साहित्य सम्मेलन में मामा-भांजे शास्त्रियों के झगड़े में उनका ऐतिहासिक रोल होगा ही. स्टेडियम के बाहर भी एक समांतर सम्मेलन डॉ. जगदीश गुप्त के नेतृत्व में छोटे साइज में हो रहा था. भीतर वाले बड़े सम्मेलन में जिसका उद्घाटन इंदिराजी ने किया, कुब्जा प्रयागी शास्त्रियों का नहीं, बनारसी पांडों का था––सुधाकर पांडे और रत्नाकर पांडे भाईयों का.

'मेरा मन है पापी प्रभुजी, हौं पतितन को टीको.' तो मेरे मन में आया कि स्टेडियम के बाहर के सम्मेलन के प्रतिनिधि योद्धा के रूप में अश्कजी शत्रु सम्मेलन में घुस गये और बदइंतजामी का रोना रोकर आयोजकों को बदनाम किया, धिक्कार का पात्र बनाया. उन्हें इससे मतलब नहीं था कि विदेशियों को वे यह बता रहे हैं कि हम हिंदी के भक्त इस कदर नाकारा हैं. अखबारों में यह भी छपा कि बाद में अश्कजी को बोलने नहीं दिया गया. यह जुल्म हुआ. अश्कजी जब भी भाषण देते हैं, आत्मकथा बोलते हैं. उन्हें 'भारतीय सौंदर्य शास्त्र' पर भाषण करना हो, तो भी वे अपने सौंदर्य पर बोलते हैं. अगर अश्क वास्तव में पीड़ा से रोये तो मैं उनके लिए दुखी हूं.

सम्मेलन से लौटे मेरे मित्र ने बताया, अश्कजी वास्तव में रोये नहीं. 'ब्रेक डाऊन' ज्यादा ठीक है. वे कुछ ऐसा बोले...मैं तो बहुत 'बीमार' पड़ा था. एक के बाद एक तीन तार पहुंचे कि आइये. तो मैं 'बीमारी' में ही यहां आया. मगर यहां न ठहरने की जगह तय, न खाने का इंतजाम. भटक रहे हैं. बेचारे विदेशी हिंदी-प्रेमी कष्ट उठा रहे हैं–हाय! (ब्रेक डाऊन). बाद में बाहर मेरे मित्र ने अश्कजी से कहा–आप इतनी फुर्ती से चल रहे हैं, खट-खट सीढ़ियां उतरते हैं. आप बिलकुल बीमार नहीं हैं. अश्कजी ने कहा, 'अरे यार, कुछ लटके करने ही पड़ते हैं. मैं तो हिंदी का एक 'ग्रीब' लेखक हूं.'

मुझे बताया गया कि विश्व हिंदी सम्मेलन इंदिरा गांधी के इंतजार से शुरू हुआ और उनके जाते ही खत्म हो गया. आधा घंटा माइक पर रत्नाकर पांडे चिल्लाते रहे––अब विश्व नेता हिंदी की समर्थक श्रीमती इंदिरा गांधी पधार रही हैं. जब वे पधार गयीं, तब बड़े भाई सुधाकर पांडे ने माइक ले लिया. उनका ध्यान दो जगह बंटा था–बोलने में और खिसकती धोती संभालने में. उन्होंने इंद्रप्रस्थ स्टेडियम को उठाकर महाभारत और उसके पहले के युग में स्थापित किया–यानी इंदिराजी को चक्रवर्ती बनाया. फिर 'हिंदी को प्रतिष्ठा देने वाली महान नेत्री श्रीमती इंदिराजी' की प्रशंसा में प्रतिभा को उलीचा. सारा वातावरण 'इंदिरा की जय' वाला था, यही रीति है.

सुधाकर पांडे कांग्रेस टिकिट पर राज्यसभा के सदस्य हैं. अपना भविष्य और उज्ज्वल करने का हर एक को अधिकार है. आखिर दिल्ली में एक केंद्रीय मंत्रि-मंडल भी तो है.

बाकी गोष्ठियां सूनी रहीं. लेखकों का डटकर अपमान हुआ. अपना सम्मान कराने भीतर जा रहे जैनेंद्र कुमार को सुरक्षा पुलिस ने रोका तो झटका-झटकी में उनका कुरता फट गया. वे वैसे ही पहुंच गये.

यह साहित्य सम्मेलन नहीं था. भाषा-सम्मेलन था. विचारणीय प्रस्ताव दो थे––(1) हिंदी को राष्ट्र संघ की भाषा बनाना, (2) हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना. कई विश्वविद्यालयों में हिंदी के रिसर्च विभाग हैं. उनमें क्या हो रहा है? अगर वे काफी नहीं हैं तो एक हिंदी विश्वविद्यालय और खोलने से हिंदी का क्या होगा? खोल लो.

रही राष्ट्र संघ में हिंदी की बात. अंतरराष्ट्रीय भाषाएं वे हुईं जिनके बोलनेवालों के साम्राज्य थे. अंग्रेजों का साम्राज्य था, तो अंग्रेजी अंतरराष्ट्रीय भाषा हुई. फिर महाशक्ति अमरीका अंग्रेजी भाषी है. फ्रांसीसियों का साम्राज्य था, तो फ्रैंच अंतरराष्ट्रीय भाषा. लेटिन अमरीका में स्पेन का साम्राज्य था, तो स्पेनिश अंतरराष्ट्रीय भाषा. ये संयुक्त राष्ट्र संघ की मान्य भाषाएं हुईं. कई देश अरबी बोलते हैं, तो अरबी मान्य हुई. रूसी इसलिए मान्य हुई कि रूस महादेश और महाशक्ति है. चीनी भाषा को अमरीका के दबाव से माना गया था. तब 70 करोड़ की आबादी वाला साम्यवादी चीन संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य अमरीका और पश्चिम यूरोप के विरोध के कारण नहीं बनाया गया. कई साल बाद साम्यवादी चीन सदस्य बना.

अब हिंदी. हिंदी बोलने वालों का कोई साम्राज्य नहीं रहा. हिंदी बाहर कैसे गयी? अंगरेजी सरकार जहाजों में भरकर उत्तर प्रदेश तथा बिहार से सस्ते बंधुआ मजदूर अपने उपनिवेशों में ले जाती थी. ये कहलाते थे––'गिरमिटिया' यानी गारा––मिट्टी का काम करने वाले. ये हिंदी ले गये थे. ये अफ्रीकी देशों में ज्यादा हैं. इनकी दम पर हिंदी को कुछ हठी अंतरराष्ट्रीय भाषा मानते हैं. पर मॉरीशस जहां दूसरा विश्व हिंदी सम्मेलन हुआ वहां की भाषा हिंदी नहीं. वहां फ्रैंच और स्थानीय बोली से मिली भाषा चलती है. श्रीकांत वर्मा ने वहां कहा कि हिंदी साम्राज्यवाद विरोधी भाषा होगी. मैं पूछता हूं कि अटल बिहारी बाजपेयी की लच्छेदार हिंदी क्या साम्राज्यवाद विरोधी है? या सत्ता में आने पर होगी? फिर राष्ट्र संघ तथा अन्य विश्व संगठनों में जिन विषयों पर बोलना होता है उन पर बोलने के लिए सामर्थ्य हिंदी भाषा में है? प्रो. स्मेकल और प्रो. चेलीशेव ने ठीक कहा कि पहले अपने देश में तो हिंदी को मान्य भाषा बना लीजिये, फिर उसे अंतरराष्ट्रीय बनाइये. विदेश सेवा में, कूटनीतिक सेवा में तमिल भाषी भी हैं, बंगाली भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं. वे कहेंगे–हम राष्ट्र संघ में बोलें क्या? यह हिंदी भाषा ही हमें नहीं आती. राष्ट्र संघ में हिंदी बोली जायेगी और कई भारतीय प्रतिनिधि अंग्रेजी का 'ईअर फोन' लगाकर हिंदी का अंग्रेजी अनुवाद सुनेंगे. हमने हिंदी को संपन्न करने के दरवाज बंद कर दिये. एक दरवाजा है––उर्दू-फारसी शब्द और मुहावरे लेने का. यह रास्ता बंद. मुसलमानों की भाषा नहीं लेंगे. दूसरी तरफ कहते हैं––उर्दू तो हिंदी की शैली है. अगर ऐसा है तो हिंदी के पाठ्यक्रम में मीर और गालिब पढ़ाइये. यह नहीं करेंगे. खुशी का समाचार है कि सागर विश्वविद्यालय में हिंदी के पाठ्यक्रम में नजीर अफसरावादी को रखा गया है. दूसरा रास्ता है––बोलियों और लोकभाषाओं का. कई सौ सालों के अनुभवों से लोकभाषाओं के शब्द और मुहावरे बने हैं. इन्हें ले लेते तो भाषा समृद्ध होती. मगर शुद्धतावादी गंवारी नहीं आने देंगे. जो शब्द अंग्रेजी के आ गये हैं, आते जा रहे हैं उन्हें हिंदी बना लेना चाहिए. उन्हें अपनी व्याकरण में ढाल लो, लिंग, वचन दे दो. लोग बोलते ही हैं–– ट्रेनें लेट आ रही हैं. अपढ़ आदमी भी बोलते हैं––वाइफ का 'अबार्शन' हो गया. इन्हें कौन रोक सकता है? अगर लोक मुहावरे को स्वीकार लिया जाता तो मजे में कहा जाता –– 'पेट गिर गया!'

मेरे शहर में पहले कालेज का नाम था––स्पेंस ट्रेनिंग कालेज. उसे बदला 'प्रांतीय शिक्षण महाविद्यालय.' इसके उच्चारण में कठिनाई हुई, तो बोलने लगे–प्रा. शि. म.. यह भी जबान में अटकता है. तो अब उसे कहते हैं–पी. एस. एम.. रिक्शेवाले से कहो–प्रांतीय शिक्षण महाविद्यालय जाना है. वह कहेगा–पता नहीं यह जगह कहां है. पर कहो पी. एस. एम. जाना है तो ठीक जगह ले जायेगा.

पहले हिंदी को देश के भीतरी मामलों में तो संपर्क भाषा बना लो. संपर्क भाषा तो यह बोली कई सदियों से पूरे देश के ऐतिहासिक विकास के कारणों से है. झगड़ा मान्यता का है, शासकीय स्तर पर. राजनीति है इसमें.

मगर दूसरी तरफ हम अपनी जड़ों से उखड़ रहे हैं. अंगरेजी के इतने किंडरगार्टन स्कूल. सबेरे लालटाई बांधे, उसी से नाक पोंछते 5-6 बच्चे रिक्शे में स्कूल चले जा रहे हैं. सैकड़ों रिक्शे ऐसे सड़कों पर दिखते हैं. ये किनके बच्चे हैं? आगे ये अंगरेजी के कान्वेंट में जाते हैं. मैं दावे से कहता हूं कि विकट हिंदी भक्तों के जो 'जय और हाय' हिंदी सम्मेलन करते रहते हैं बच्चे भी इन्हीं कान्वेंटों में पढ़ते हैं. हिंदी भक्त दोनों को आगे बढ़ाते हैं–– अंगरेजी से उन्हें और हिंदी से अपने को. दोनों साधना है.

जो अंगरेजी राज के जमाने में नहीं होता था, वह अंगरेजों के जाने के बाद हो रहा है. निहायत दकियानूस, पवित्रतावादी लोगों के बेटा-बेटी के विवाह के निमंत्रण-पत्र यों छपते हैं–– 'मिस्टर एंड मिसेज राजकिशोर पांडे रिक्वेस्ट यू टु ग्रेस––' ये कार्ड हिंदी भाषियों में बंटते हैं. विलायत नहीं भेजे जाते. बंगाली और महाराष्ट्री अपनी भाषा को बहुत प्यार करते हैं, मगर उनके निमंत्रण-पत्र अंगरेजी में छपते हैं.

जो पहले छोटे बनिये थे, वे 'जेसीज' हो गये हैं. मध्यम बनिये 'लायन' हो गये हैं. रोटरी से लेकर जेसीज तक ये सब गलत अंगरेजी बोलते हैं. भद्दी अंगरेजी. मगर हिंदी नहीं बोलेंगे.

अंगरेजी को इस देश से निकालने की बात नहीं कह रहा हूं. अंगरेजी का खूब अध्ययन होना चाहिए. कह यह रहा हूं कि लोग सांस्कृतिक विकृति जन रहे हैं. सूट टाई पहने हैं, अंगरेजी बोलते हैं मगर मानसिकता मध्ययुगीन बल्कि महाभारत कालीन है. लिबास, भाषा, यूरोप की. यह मात्र चमड़ी के ऊपर ओढ़ी आधुनिकता है.

अजब सतहीपन है. एक प्रोफेसर कवि ने रहस्यवादी कविताएं लिखी हैं. वे कवि सम्मेलन में गाकर सुनाते हैं. बैठना उन्हें मंच पर है, गादी पर. कुर्सी पर नहीं. मगर सूट टाई में आये हैं. पेंट को धोती की तरह सिकुड़ाकर कंठ से विरहणी आत्मा की पीड़ा गा रहे हैं. यह दृश्य हास्यास्पद नहीं, दयनीय था. अत्यंत कारुणिक व्यक्तित्व था वह! मंच पर बैठना है तो धोती या पाजामा पहनकर आने से छोटे कवि नहीं हो जाते.

मतलब यह है कि अपनी भाषा से हम उखड़े जा रहे हैं, अपनी संस्कृति से उखड़े जा रहे हैं. पश्चिम के टुच्चे नकलची हो रहे हैं.

हिंदी विश्वभाषा होगी, मगर भारत की भाषा नहीं रहेगी. भारतीय संस्कृति विश्व संस्कृति होगी, पर भारत की संस्कृति नहीं रहेगी.

जहां तक इस सम्मेलन का सवाल है, आनंद कौशल्यायन ने कहा था– 'तप-तप से राज-राज से भोग-भोग से नरक!' □

● व्यंग्यचित्र : प्रेम बी. सक्सेना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेष गांव

◻ सच्चिदानंद 'धूमकेतु'

उस छोटे स्टेशन से पैसेंजर गाड़ी जा चुकी थी लेकिन हरिनारायण ने अपनी चट्टी नहीं उठायी थी. किसी उम्मीद के तहत वह अपनी जगह पर अभी भी बैठा हुआ था.

आज का दिन उसे बेहद मनहूस लग रहा था. सुबह से अभी तक अपना भविष्य जानने के लिए सिर्फ चार ही व्यक्ति उसके पास आये थे. भविष्य बताने वाला तोता पिंजड़े में बैठा हुआ नुकीले चोंच से अपने डैने को सहला रहा था.

यह तोता ही हरिनारायण की एक मात्र पूंजी थी. प्रतिदिन वह अपने गांव से तन्नू के साथ चार मील दूर स्टेशन आ जाता और ग्राहकों की प्रतीक्षा करता रहता. मैली चादर के ऊपर लिफाफे में बंद अच्छे-बुरे फलाफल की पर्चियां बिछी रहतीं. इच्छुक ग्राहक के सामने तोता पिंजड़े से बाहर निकलता और किसी लिफाफे को चोंच में उठा लेता. हरिनारायण लिफाफे से पर्ची निकालकर ग्राहक को पढ़कर सुना दिया करता था. सामने एक तख्ती खूंटे के सहारे टंगी रहती, जिस पर लिखा रहता—'असली हीरामन तोते से अपने भविष्य की गणना करायें. फीस बीस पैसे मात्र.'

उसने जेब से पैसे निकालकर गिनती की. कुल दो रुपये मौजूद थे. तन्नू को बहुत जोरों की भूख महसूस हो रही थी. स्टेशन पर दोनों भाईयों ने सस्ते किस्म के अमरूद खाकर अपनी भूख मिटायी थी.

स्टेशन से प्रायः सभी खोमचेवाले अपने-अपने घरों को जा चुके थे. सिर्फ सामने कड़ू तेल और गुड़ से बनी भेलियां बेचनेवाला एक दूकानदार हरिनारायण की तरह ग्राहकों की बाट जोह रहा था. वह टुनटुनी बजाकर आने-जानेवाले लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करता हुआ भिनकती मक्खियों को अंगोछे से लगातार उड़ा रहा था. ग्राहकों की प्रतीक्षा-करते-करते हरिनारायण अब ऊब चुका था. वह उठने ही वाला था कि स्टेशन पार से गांव के गोस्वामी जी का पहलवान छाप बेटा जिसे गोस्वामीजी दुलार से राजा कहते थे, आता दीख गया. हरिनारायण की चट्टी के सामने खड़ा होकर उसने पूछा, "अब किसकी बाट जोह रहा है रे हरिया? अब तो स्टेशन पर एक चिड़िया भी नहीं है."

"यूं ही बैठा हुआ हूं." कहकर हरिनारायण बिना कोई औपचारिकता दिखाये पर्चियों पर जमी धूल को बेमतलब उड़ाने लगा.

अचानक राजा का चेहरा तमतमा गया. उसने कहा, "रे हरिया! बड़े-छोटे का खयाल तो किया कर! न नमस्कार न बंदगी! लगता है कि दो पैसा कमाकर तू सब कुछ भूल गया!"

हरिनारायण को शायद अपनी गलती महसूस हुई. उसने कहा, "पैसा तो यही कमा रहा हूं कि दो जून खाना भी नहीं जुटा पाता."

उसकी बातें सुनते ही राजा के चेहरे पर अजीब-सी मुस्कुराहट फैल गयी. उसने कहा, "तभी तो कहता हूं बच्चू कि बची हुई पट्टावरी की जमीन मेरे हाथ बेच दे. अच्छी कीमत दूंगा. मरना तो सबको है ही. जब तक जीओ खा-पीकर मौज-मस्ती के साथ जी लो...! अपने बाप की तरह!"

राजा की बातें पूरी भी नहीं हो पायी थीं कि हरिनारायण ने बीच में ही कहा, "नहीं बेचूंगा. किसी कीमत पर जमीन का वह आखिरी टुकड़ा नहीं बेचूंगा. मेरे पुरखों की सारी जमीन तो बापू से आपके पूज्य गोस्वामी जी ने गांजा-भांग पिलाकर औनपौन में लील ही ली, अब उस बित्ते भर जमीन को तो छोड़ दीजिए!"

राजा खलनायक की तरह अपने चेहरे पर मुस्कान

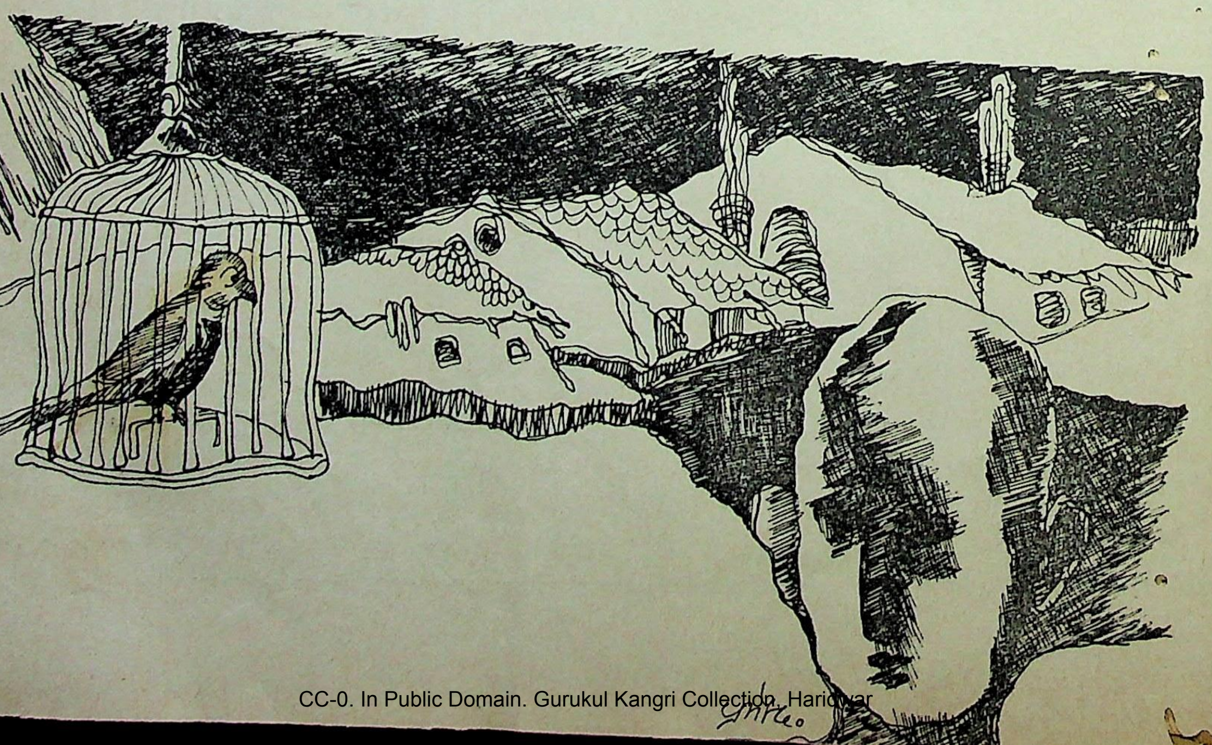

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने धर्म को मानने, अपनी बात को कहने, कानून की हद में रहते अपनें जीविकोपार्जन का हक हमारा संविधान सबको देता है... मगर फिर भी क्यों है ऐसा कि गांव के कुछ परिवार ही इसका पूरा-पूरा लाभ पाते हैं और शेष गांव के लिए नया संविधान भी वे ही ढूढते हैं...? गांवों की क्रूरता और विसंगतियों को उकेरती कहानी--

बिखेरते हुए बोला, "अच्छा भाई, कभी नहीं बोलूंगा. ले, अपने तोते से मेरे भविष्य की गणना करा!"

"ठीक है बैठिए!"

राजा हरिनारायण के सामने बैठ गया.

हरिनारायण ने पर्चियों पर धान के कुछ दाने बिखेरते हुए कहा, "चल सुगना, बाबू के भाग्य के बारे में बता दे."

बोली सुनकर तोता पिंजड़ से बाहर निकला और एक पर्ची चोंच में दबाकर राजा की ओर बढ़ा दी. राजा पर्ची खोलकर पढ़ने लगा, "यह वर्ष आपके लिए अत्यंत ही अनिष्ट-कारक है. पितृ वियोग सहन करना पड़ेगा."

पर्ची पढ़कर अचानक राजा का चेहरा तमतमा गया. गरजता हुआ बोला, "हरिया! मिसरटोली में किसी की ताकत नहीं कि मेरी और मेरे पिताजी की प्रतिष्ठा पर कोई हाथ डाल सके. लेकिन तुम्हें ऐसे मनहूस पक्षी को रखने की सजा दिलाऊंगा. अगर मिसरटोली से तुम्हें कालिख-चूना लगवाकर बाहर नहीं निकलवाया तो मेरे पिता का नाम भी गोस्वामी जी नहीं!"

"मैंने क्या किया बाबू?" कांपते हुए हरिनारायण ने पूछा.

गोस्वामीजी के बेटे ने कोई जवाब नहीं दिया और पैर पटकता हुआ गांव की ओर चल पड़ा. उसके जाते ही हरिनारायण को अजीब-सा भय चारों ओर से घेरता चला जा रहा था. वह आनेवाले भविष्य के बारे में बहुत देर तक सोचता रहा. सोचते-सोचते वह किसी परिचित, चिरपहचानी पीड़ा से बुरी तरह जकड़ गया. ऐसी पीड़ा जिसकी खौफनाक ठंडक उसके बदहवास जिस्म के साथ बचपन से आज तक चिपकी हुई थी. सचमुच ही पूरे परिवार के ऊपर फैली धूप की सोनिल टुकड़ियां पन्नियों की तरह उड़ चुकी थीं और पसरा हुआ था, एकांतिक तल्ख अनुभूतियों का बदजात और बेईमान जाल.

वह बेमन से अपने गांव की ओर चल पड़ा. तन्नू के हाथ में हीरामन तोता पिंजड़े में लटका हुआ था. रह-रहकर उसे राजा की जलती हुई आंखें याद आ रही थीं. उसकी जेब में कुल दो रुपये मौजूद थे. वह सोचने लगा कि इन पैसों से वह कौन-सी चीज खरीदे, जिससे अपनी तथा छोटे भाई तन्नू की भूख मिट सकती हो. अचानक उसने सड़क के किनारे बिकते मकई के बालों को देखा. उसने लपककर मकई के चार बाल खरीद लिये.

घर आकर हरिनारायण निरभ्र नीलाकाश में नीचे लेटकर काले आसमान में उड़ते रात के छोटे पक्षियों को देखता रहा.

तन्नू तो मकई के पके बालों को उड़ाने लगा लेकिन हरिनारायण को वह भी नसीब नहीं हो सका था. ज्योंही खाने के लिए वह दाने छुड़ाने लगा, उसके पेट में भयानक दर्द होने लगा, दुखते पेट में मकई के कठोर दाने ठूसने की उसे हिम्मत नहीं हुई और अपने हिस्से के भुट्टों को तन्नू की ओर बढ़ाता हुआ कहा, "तू ही खा ले! तू मुझसे ज्यादा भूखा है."

तन्नू तो भुट्टे खाकर तुरत सो गया लेकिन वह पेट के दर्द से छटपटाता ही रहा. बगल में सोये मच्छरों से अपनी देह खुजलाते हुए अबोध भाई को गहरी नींद में देखकर उसे गुस्सा भी आ रहा था. एक ओर उसकी जान जा रही थी और तन्नू था जो पेट में ढेर सारा अनाज ठूंसकर निश्चिंत सोया हुआ था. उसकी इच्छा हो रही थी कि वह बगल में सोये छोटे भाई को जगाकर कह दे कि रात भर कमाऊ भाई का पेट सहलाता रहे. लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका. कड़मड़ाती चटाई पर उलटता-पुलटता हरिनारायण जगा हुआ अपने पुरखों के बारे में सोचता रहा.

किसी जमाने में दादा ज्योतिषी थे. जन्म कुंडली बनाने से लेकर हाथ की रेखाएं दिखानेवाले वहां पहुंचते थे. जिज्ञासु व्यक्तियों का जमघट वहां लगा रहता था. अच्छी-खासी आमदनी थी. गांव की बीस बीघे जमीन उनकी थी. बापू दादाजी की इकलौती संतान होने के कारण काफी लाड़-प्यार में पले थे. कम उम्र में ही वे भांग-गांजा पीने लगे थे और कभी-कमार दारू ताड़ी का नशा भी.

दादाजी शाम को बैठक में किताबें पढ़ते रहते और आंगन में बाप मां से नशे के लिए पैसे की तलब करते. मां अच्छे स्वभाव की थी तभी तो दादी के मरने के बाद दादाजी के बक्से की चाबी मां के पास ही रहने लगी थी. आंगन में रोज हंगामा मचा रहता. अंधेरी तलहटी से निकलकर कोई विषधर नाग आंगन को डंसता रहता. उसके बाद प्रतिदिन एक काला भयानक सन्नाटा आंगन में छा जाता था.

कभी-कभी मां भी मोर्चा संभाल लेती थी. हरिनारायण भयाक्रांत हो तमाशा देखता रहता. तन्नू उस समय दो वर्ष का अबोध बालक था.

बापू मां को पीटने लगते. कलाइयों की चूड़ियां टूट जाया करती थीं. फुंफकारते धुंधलके के पार से खून की नन्हीं-नन्हीं बूंदें झिलमिलाने लगतीं. दांत पीसते हुए बापू कहते, "बूढ़े की कमाई पर मालकिन बनी हुई है. मैं सब समझता हूं. जोरू के बिना वह बुड्ढा जिंदा कैसे रहता है!"

मां गरज पड़ती. बापू उसे घूंसे-लात और कभी-कमार डंडे से प्रहार करते. मां का आंचल खून से तर हो जाता.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन दादाजी की खड़ाऊं की आवाज सुनकर वे सामान्य मुद्रा बनाकर खड़े हो जाते और मां पर्दा करती हुई रसोई घर में चली जाती. उन हादसों की कोई भी शिनाख्त वहां मौजूद नहीं हुआ करती.

दादाजी के जाने के बाद बापू पूर्व परिवेश में घिर जाते. बक्स का ताला ईंट से तोड़ा जाता और उन्हें जो भी हाथ लगता, उसे लेकर पिछवाड़े के रास्ते गायब हो जाते थे. फिर तीन-चार दिनों तक उनका कोई पता नहीं चलता था.

दादाजी के मरने के समय वे इसी तरह घर से गायब हो गये थे. दिनभर अग्नि संस्कार हेतु लाश पड़ी रही थी. बहुत ढूंढ़ने के बाद उन्हें पांच मील दूर कस्बे की भट्ठी से बेहोश हालत में उठाकर लाया गया था. होंठों से चूती पान की पीक और भभकते मुंह लेकर ही उन्होंने अग्नि संस्कार की रस्म अदा की थी.

गोस्वामीजी बापू को अधिक से अधिक नशा करने को उकसाते. उनके मुंह पर कहा करते, "तू दुनिया को भोगने के लिए पैदा हुआ है. निश्चय ही उस जन्म का कोई महाराजा रहा होगा."

बापू को नशे के लिए जब जितने पैसों की जरूरत पड़ती, गोस्वामीजी मुक्त मन से दे दिया करते और फिर उनसे जमीन अपने नाम लिखा लिया करते थे. कुछ वर्षों के अंदर दादा की कमायी हुई सारी जमीन गोस्वामी की हो गयी थी. बापू के आचरण से मां पूरी तरह जर्जर बन गयी थी और एक दिन वह परलोक सिधार गयी.

आज न तो हरिनारायण का शराबी बाप जिंदा है और न उसकी अच्छी मां. उसके कंधे पर बच रहा था तन्नू. परवरिश के लिए गोस्वामीजी ने उस ऊसर जमीन का एक टुकड़ा भर छोड़ दिया है. बस, सोचते-सोचते हरिनारायण का सारा शरीर पीड़ा से दुखने लगा. गांव लगभग सो चुका था. तन्नू भी सो रहा था लेकिन उसकी आंखों में नींद नहीं थी. एक तो पेट का दर्द और ऊपर से बीती बातों की थप्पड़ मारती यादें.

अचानक दरवाजे पर गोस्वामीजी की भारी-भरकम आवाज सुनाई पड़ी.

"हरिया! निकल बाहर."

हरिनारायण भयभीत-सा बाहर निकला और उनके सामने अपराधी की तरह खड़ा हो गया.

"तू मुझे मारने चला है. बोल, जवाब दे. कहां है तुम्हारा वह ज्योतिषी तोता, जिसने मेरे मरने की भविष्यवाणी की है!"

"इसमें मेरी क्या गलती है?"

"तुम्हारी नहीं सही. तुम्हारे तोते की तो है. जरा दिखा अपना तोता."

उसने कुछ जवाब नहीं दिया. चुपचाप गोस्वामीजी सहित राजा तथा दूसरे लठियलों को देखने लगा. उससे कोई जवाब न पाकर गोस्वामीजी ने ललकारकर अपने बेटे को कहा, "घर में घुसकर तोते को ले आ. मैं उस पक्षी का एक-एक पंख उखाड़कर फेंक दूंगा."

हरिनारायण उनके पैरों पर गिर पड़ा. गिड़गिड़ाकर बोला, "ऐसा मत कीजिए. इस गरीब का वही एक सहारा है. हम भूखों मर जायेंगे. इस बार माफ कर दीजिए सरकार."

"राजा, देखता क्या है! इसकी देह में अकड़ बहुत हो गयी है. मुझे पता चला है कि मेरे खिलाफ यह गांव के हरिजनों को उकसाता रहता है. जब भूखों मरेगा तो सारी नेतागिरी खत्म हो जायेगी.!"

आदेश पाकर राजा दनदनाता हुआ अंधेरे आंगन में घुस गया और ओलती से लटके हुए तोते को बड़ी बेरहमी से उतारने लगा. तोता टें. . .टें. . .आवाज करता हुआ पिंजड़े के अंदर इधर-उधर बेबस होकर उड़ रहा था. ओसारे पर कड़ू तेल का नन्हा दिया आखिरी सांसें लेता हुआ जल रहा था.

राजा भविष्य बतानेवाली सारी पर्चियों को दीपक के हवाले कर चुका था और वह पिंजड़े को लेकर बाहर निकल पड़ा.

गोस्वामीजी ने पिंजड़े के अंदर हाथ डालकर तोते की गर्दन मरोड़ते हुए कहा, "मेरे मरने की बात इसने बतायी थी. मैं इसे ही यमलोक पहुंचा दे रहा हूं."

देखते ही देखते उस छोटे हादसे ने एक परिवार की जीविका और दो भूखे पेटों की रोटियों को हमेशा के लिए छीन लिया था. उस समय वहां कुछ नहीं बचा था. महज पास के गन्ने

लघुकथा

लीक से हटकर

▣ विष्णु प्रभाकर

एक विचित्र स्वप्न देखा मैंने उस रात.

सदा की तरह परस्पर विरोधी नारों से राजधानी की सड़कें गूंज रही थीं. पक्षी-दल का दावा था कि एशियाड के कारण विदेशों में देश का मान बढ़ा है. मान बढ़ने से साख बढ़ी है. साख बढ़ी है तो ऋण लेने की क्षमता भी बढ़ी है. इसके अतिरिक्त राजधानी की धमनियों में नये रक्त का संचार हुआ है. नये रक्त ने उसे नया रूप दिया है. नयी शक्ति दी है. नये रूप और नयी शक्ति से पर्यटकों का आकर्षण बढ़ेगा और इस आकर्षण का अर्थ है अधिक विदेशी मुद्रा. विदेशी मुद्रा गरीबी दूर करने का अचूक साधन है. इसलिए हमारा यह निश्चित मत है कि एशियाड के कारण देश की छवि निखरी है और गरीबी बिखरी है.

विपक्षी-दल के तूणीर में भी तीरों की कमी नहीं थी. उन्होंने नारा दिया कि एशियाड से छवि निखरी अवश्य है पर देश की नहीं, शासक दल की. प्रजा तो और आहत हुई है क्योंकि उसी के मुंह का कौर छीनकर पांच सितारा होटलों की गगनचुंबी इमारतें बनी हैं. उसकी आहों को दबाने के लिए मधुर मादक संगीत का निर्माण हुआ है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी ठठरी को छिपाने के लिए मखमल के परदे टांगे गये हैं. उसकी लाश से उठनेवाली दुर्गंध को दबाने के लिए नाना प्रकार के सुगंधित द्रव्य तैयार किये गये हैं. उसकी तथाकथित दकियानूसी संस्कृति को व्यर्थ करने के लिए सोविनियरों के बहाने नगर-कन्याओं ने अपने शरीर दांव पर लगाये हैं.

ये परस्पर विरोधी नारे जब इतने उलझ गये कि देश की सांसों की धड़कनों को खतरा पैदा हो गया तब प्रधान मंत्री ने वक्तव्य दिया, "मुझे पता है कि देश में भूख है, गरीबी है भ्रष्टाचार भी है. देश का मनचाहा विकास नहीं हो पा रहा. इन्हीं कमियों को दूर करने के लिए हम सबको, सरकार, विपक्ष और जनता को नयी राहें ढूंढ़नी हैं. कुछ नया करना है. लीक से हटकर करना है. एशियाड का आयोजन करके मैंने वही लीक से हटकर कुछ नया करना चाहा है. कहा भी है—'लीक लीक ना चले शायर सिंह सपूत.' और यह सब करते हुए मैंने अपनी संस्कृति के महान ग्रंथ गीता का इस अमर शिक्षा को ध्यान में रखा है कि 'कर्म करना हमारा अधिकार है, फल की चिंता करना नहीं.' "

इस सारगर्भित भाषण के बाद तालियों की गड़गड़ाहट से जो गूंज उठी उसने देश की सांसों की धड़कन इतनी तेज कर दी कि उन्हें संभालना मुश्किल हो गया.

पर अब न तो सरकार को इसकी चिंता है और न विपक्ष को. □

● 818, कुंडेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-6

के खेत में कुछ फालतू कुत्ते रो रहे थे. उस बीमार गांव के चेहरे पर पुती स्याही आतंक का एक और बदनुमा धब्बा छोड़ गयी थी. . . और गोस्वामीजी के परिवार का वहशीपन थोड़ा और गहरा गया था, लेकिन बचपन से आज तक हरिनारायण की दब्बू बनी आंखों में उस रात अनजाने ही आक्रोश की हल्की सूखी रेखा स्पष्ट दिखाई पड़ रही थी.

सुबह हरिनारायण मरे हुए तोते को लेकर गांव के उन सारे लोगों के दरवाजे पर दिखा आया था जिनकी देह में वर्षों से गोस्वामी का परोक्ष या अपरोक्ष रूप से खूनी नाखून धंसा हुआ था. बावजूद इसके वे कुछ नहीं कर सके. उनके पास हरिनारायण के प्रति सिवा संवेदना व्यक्त करने के, और कुछ नहीं था. लगता था कि चंद परिवारों को ही सृष्टि ने विरासत के तौर पर इस गांव को दे रखा है. शेष गांववाले मूक दर्शक की तरह तमाम अनुत्तरित प्रश्नों को झेलने के लिए विवश हैं. यहां तक कि उसने हरिजन टोली के रामफल को, जो हरिजनों का नहीं, गांव की अन्य छोटी जातियों का भी चौधरी था, उसके दरवाजे पर जाकर उसने पूरी रामकहानी सुना दी थी. रामफल चुपचाप सुनता रहा था. उसकी चुप्पी देखकर हरिनारायण ने कहा था, "चौधरी, आप तो पूरे तीन-चार टोले के सरगना हैं. आपका बेटा डाक्टर बन चुका है. कब तक आप गांव के ऊपर हो रहे अत्याचार और ज़ुल्म के विरुद्ध अपनी ज़ुबान बंद किये रहेंगे?" रामफल शून्य आकाश की ओर उदास आंखों से देखता हुआ बोला., "बांध के अंदर रुका हुआ पानी बहुत ही निर्बल और शांत दिखाई देता है; और जब बांध तोड़कर आगे बढ़ता है तो रास्ते में पड़नेवाले बड़े-बड़े पेड़ों को भी पलक झपकते उखाड़ फेंकता है. समय बड़ा ही बलवान होता है. धीरज रखो."

गांव के लिए बहुत ही अचंभे की बात थी. जब ब्राह्मण टोले के लोगों ने सुना कि हरिनारायण ब्राह्मण होकर रामफल दुसाध के दरवाजे पर टोले के बच्चों को पढ़ाता है और उसी की हांडी में खाता भी है. लोग-बाग छिः. . .छिः. . .करने लगे थे. कुछ लोगों ने हरिनारायण को जाति से निकाल देने की योजना भी बना दी थी लेकिन गोस्वामी के चेहरे पर एक अजीब-सी बेचैनी झांकने लगी थी. उस दिन तो वे रामफल के दरवाजे पर बिला-वजह चले भी आये थे और हरिनारायण से दो कदम आगे बढ़कर उन्होंने हरिजन टोलीवालों को दिखा भी दिया था. उसके दरवाजे पर बिछी चौकी पर गोस्वामी-जी जैसे कर्मकांडी पंडित पसर गये थे और बड़ी संजीदगी से उसके घर-परिवार की बातें पूछने लगे थे. यह दृश्य देखकर रामफल सहित टोले के लोग गदगद हो उठे थे लेकिन उनसे आंखें बचाकर हरिनारायण की ओर देखते हुए उन्होंने गुस्से से कहा था, "हरिया! तुमने समस्त ब्राह्मण जाति के मुंह पर तमाचा मारा है. अभी भी समय है. तुम अपने में सुधार लाओ."

हरिनारायण बोला, "मैं अपने लोगों के बीच हूं, अपने परिचित लोगों के साथ हूं. आपके टोले में जन्म लेकर भी मैं अपने को अपरिचित महसूस करता रहा."

गोस्वामीजी आग्नेय नेत्रों से हरिनारायण को देखते हुए अपने टोले की ओर चले गये थे. रामफल उन्हें दूर तक पहुंचा आया था.

जाड़े की मरमरी धूप खत्म हो चुकी थी. गांव के अधिकांश परिवारों ने जाड़े की हड्डियां हिलाती ठंडक को पुआल और आग के सहारे बिता दिया था. गरमी और बरसात तो वे किसी तरह झेल लेते लेकिन प्रत्येक जाड़ा उनके लिए बहुत ही कष्टकर होता.

फागुन महीने की खुनखुनाहट हवा में उतर चुकी थी और देखते ही देखते होली का गुलाबी पर्व आ गया था. उस वर्ष रामफल सहित टोले के और लोग भी काफी खुश दिखाई पड़ रहे थे. रामफल का बेटा प्रह्लाद डाक्टरी की परीक्षा पास कर गांव आया हुआ था. होली के तुरंत बाद ही उसे अपनी नियुक्ति की जगह पर जाना था.

ब्राह्मण और बबुआन टोले के युवक प्रह्लाद से भीतर ही भीतर जलते रहते थे. उन्हें यह कतई पसंद नहीं था कि दुसाध-वंश में पैदा हो कर कोई भी युवक गांव का सबसे अधिक पढ़ा-लिखा समझा जाये.

खासकर प्रह्लाद के डाक्टर बन जाने की खबर से तो गोस्वामीजी को अपच की बीमारी जैसी हो गयी थी. उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन अपने दरवाजे पर धूप तापते हुए राजा से कहा था, "प्रह्लाद डाक्टर नहीं बना है बल्कि पूरे हरिजन और पिछड़ी जातियों की आंखें बनने जा रहा है. आज तक वे सभी अंधे बने हुए थे. अब उन्हें रामफल के बेटे के रूप में आंखें मिल गयी हैं."

उनकी बातें पूरी भी नहीं हो पायी थीं कि राजा ने कहा, "हम उन आंखों को हमेशा के लिए अंधा बना देंगे."

वहां बैठे किसी ने भी उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया था. बात आयी-गयी हो गयी.

सुबह से ही पूरा गांव रंग-गुलाल में डूबा हुआ था. गांव के धनी-मानी घरों में अलावा गरीब परिवारों में भी खुशियां मनायी जा रही थीं. रंग-गुलाल खेलने से लेकर जगह-जगह ढोलक पर गाये जा रहे फाग से गांव का आकाश गूंज उठा था. सभी टोलेवाले ढोलक-झांझ बजाते हुए गाते-नाचते एक दूसरे टोले की ओर आ-जा रहे थे.

ब्राह्मण टोले के युवक भी मस्ती में गाते-बजाते रामफल के दरवाजे पर जा रहे थे. यह गांव के इतिहास के लिए अभूतपूर्व बात थी. आज तक वे लोग कभी हरिजन टोले की ओर रंग खेलने नहीं गये थे.

वे लोग रामफल के दरवाजे पर जाकर टिक गये और लगे होली गाने. रामफल ने जब उन युवकों को अपने दरवाजे पर देखा तो उसे आश्चर्य के साथ-साथ अपने तथा अपने डाक्टर बेटे पर गर्व होने लगा. लेकिन हरिनारायण के चेहरे पर किसी अप्रत्याशित हादसे की अनपहचानी लकीर फैल हुई थी.

वह आंगन में चला गया और प्रह्लाद से फुसफुसाकर बोला, "बाहर मत जाना. ये लोग सभी गेहुंवन सांप के ही त बच्चे हैं. इनसे अच्छी बातों की उम्मीद नहीं की जा सकती."

वे दोनों बातें ही कर रहे थे कि दरवाजे से राजा की आवाज सुनाई पड़ी, "अरे भाई डाक्टर! अब तो बाह निकलो. रंग गुलाल के डर से कब तक छिपे रहोगे? आज होल का दिन है."

प्रह्लाद असमंजस की हालत में हरिनारायण के साम खड़ा था. एक ओर गांव के सभी संभ्रांत परिवारों के युव उसे रंग-गुलाल लेने के लिए आमंत्रित कर रहे थे तो दूस ओर हरिनारायण उसे बाहर निकलने से मना कर रहा था

अचानक आंगन में आकर रामफल ने कहा, "बेटा, बाह उनके हाथ से अबीर ले लो. आखिर वे गांव के मानिंद लोग के लड़के हैं."

प्रह्लाद को बाहर निकलना पड़ा. उसे देखते ही राज सहित कुछ युवक मुट्ठियों में गुलाल लेकर उसकी ओर लप पड़े और उसकी पेशानी और आंखों में भरपूर गुलाल मल दिय

प्रह्लाद के मुंह से एक भयंकर चीख निकली जो ढोल की आवाज में गुम होकर रह गयी.

वह अपनी हथेलियों से आंखें मलता हुआ चीख रहा था "मेरी आंखें बुरी तरह जल रही हैं. बापू, कुछ दिखाई नह पड़ रहा है. मैं अंधा हो गया. लगता है गुलाल के साथ उ लोगों ने मेरी आंखों में तेजाब डाल दिया है. मुझे बचाओ. . मुझे. . ." कहकर प्रह्लाद बेहोश होकर जमीन पर लुढ़ पड़ा. होली खेलनेवाले युवकों की टोली मस्ती में ढोल बजाती, गाती-नाचती अपने टोले की ओर लौट पड़ी.

देखते ही देखते सब कुछ खत्म हो गया था. प्रह्लाद की वर्ष की मेहनत, रामफल की एकमात्र पूंजी, पूरे हरिज और पिछड़ी जातियों की आंखें गांव के कुछ दरिंदों ने हमेश के लिए छीन लीं थीं. प्रह्लाद पूरी तरह अंधा बन चुका था.

आज भी आप अंधे प्रह्लाद को देख सकते हैं. वह गां ही में रहता है. कालेज जीवन की बीती हुई बातें और भविष्य के सपनों को जब प्रह्लाद याद करता है तो अनायास ह उसकी अंधी आंखें चूने लगती हैं. ज्योतिविहीन आंखों से सिर्फ आंसू के गरम-गरम कतरे ढुलकते रहते हैं. उसके साथ साथ रामफल को भी उन अंधी आंखों में उम्मीद की को किरण दिखाई नहीं देती लेकिन हरिनारायण ने अपना हौसल नहीं छोड़ा है. वह रामफल को धैर्य बंधाते हुए कहता है "चौधरी! वह दिन दूर नहीं जब निर्दोष प्रह्लाद की आंखें से निकली आग पूरे दरिंदों को जलाकर राख कर देगी जिन्होंने गांव की आंखों की ज्योति छीनने की हमेशा कोशिश की है. उस दिन इन अंधी आंखों से गरम कतरे नहीं, आग के शोले निकलेंगे! . . .आग के भयानक शोले! उस दिन किसी अंधी आंख से बेबसी के आंसू नहीं, आग का दरिया बहेगा. □

● जिला परिवहन अधिकारी, हजारीबाग–82531

ग़ज़ल

▣ विनोद तिवारी

बाबूजी, बोलो, गरीब का दुनिया में रखवाला कौन?
हमदर्दी की भूख नहीं है, देगा हमें निवाला कौन?

बाबूजी, हमने 'कोरट' में हलफ उठाकर सच बोला
पर बिन पैसे कानूनों का देता वहां हवाला कौन?

बाबूजी, बेटी मजूर की घास काटने गयी रही
किस-किससे अब कहे बेचारी, कर बैठा मुंह काला कौन?

बाबूजी, यह उजला सूरज भी कितना अन्यायी है
हर घर जाकर नहीं पूछता, लेगा यहां उजाला कौन?

बाबूजी, बस न्याव-धरम से कह दो है रोटी किसकी
मेहनत या पैसा, दोनों में, है असली हक वाला कौन?

बाबूजी, अपने सब बैरी सावन-भादों चैत-बसाख
वरना यूं मौसम-बे-मौसम देता देस-निकाला कौन?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किस्सा एक चोर की मौत का

• सुरेश उनियाल

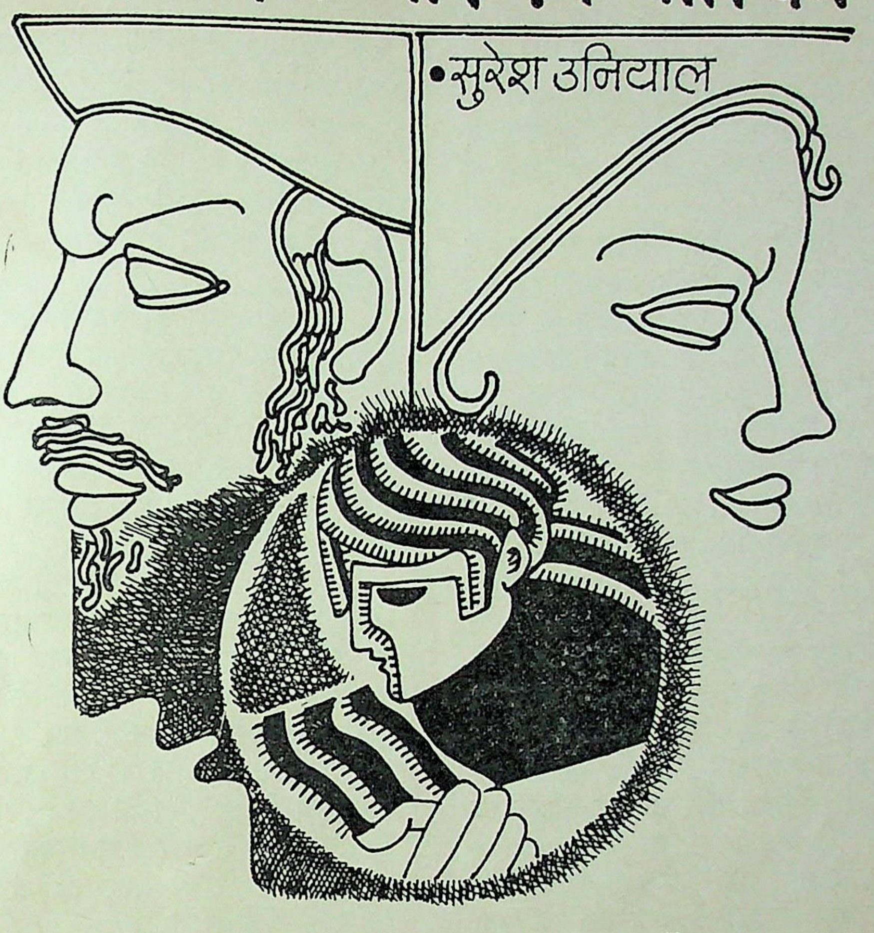

• चित्रांकन : हरिप्रकाश त्यागी

कौन था वह चोर और क्यों जा रहा था खुद-ब-खुद और अपनी मर्जी से मौत की तरफ? वे कौन लोग थे जो चोर और मौत के बीच आकर अपनी कई-कई मौतें जी रहे थे. प्रस्तुत है राजनीतिक पतनशीलता पर एक व्यंग्यात्मक दृष्टि.

वह एक चोर था. वैसा ही चोर, जैसे आमतौर पर चोर होते हैं. चोरी उसका फुल टाइम जॉब था. चोरी के अलावा वह और कुछ नहीं करता था. सही बात तो यह है कि वह चोरी के अलावा और कुछ करना जानता भी नहीं था. और न उसे कभी कुछ करने की जरूरत ही पड़ी थी.

चोरी करने का उसका अपना एक तरीका था. यों ही किसी घर में वह नहीं घुस जाता था. बल्कि पहले वह घर का चुनाव करता था. एक-दो दिन घर की निगरानी करके जान लेता था कि कौन लोग वहां रहते हैं और कौन-कौन वहां आते-जाते हैं, घर के लोग किस समय निकलते हैं और सबसे बड़ी बात कि वहां माल कितना मिल सकता है.

अपना यह सर्वेक्षण पूरा करने के बाद वह चोरी के लिए दिन और समय तय करता था. महीने के शुरू के दिन उसे अधिक सूट करते थे जब घर के लोग खरीदारी करने निकलते थे. इतवार की शाम तो सोने में सुहागे का काम करती थी, जब सारी सड़कें और गलियां खाली रहती थीं और लोग टी. वी. पर फिल्म देखने में व्यस्त रहते थे. ऐसे में भला किसे खबर रहती कि पड़ोस के घर में क्या हो रहा है.

महीने में वह केवल चार-पांच चोरियां ही करता था. इतने भर से उसका काम चल जाता था. लेकिन इसमें अब उसे कठिनाई होने लगी थी. एक तो लोग अब रुपया-पैसा और जेवर आदि घर में रखते ही नहीं थे. बर्तन और कपड़ों के अलावा उसे कुछ और मिल नहीं पाता था. इधर चोरी के माल वाले बाजार में दूकानदारों ने चीजों के भाव घटा दिये थे. उनका कहना था कि पुलिस की सख्ती बढ़ गयी है, महीना अब ज्यादा देना पड़ता है, इसलिए वे चीजों की कीमत ज्यादा नहीं दे सकते.

उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि इस सब का हल क्या है. अब तो घर भी उसे धोखा देने लगे थे. जिन घरों को देखकर लगता था कि काफी माल हाथ आयेगा, वहां उसके अनुमान से कहीं कम मिलता था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहां चला गया है सारा माल? अगर लोगों के पास नहीं है तो किसके पास है?

"ये हमारे शासक ही हमारा सारा माल हड़प रहे हैं और हमें कंगाल बनाये दे रहे हैं!" इन शब्दों को सुनते ही उसके कान चौकन्ने हो गये. एक बहुत बड़े मैदान में विपक्ष के एक बहुत बड़े नेता भाषण दे रहे थे. उनकी आवाज को लाउड स्पीकरों से एक बड़ी भीड़ को बांटा जा रहा था. वह उस मैदान के बगलवाली सड़क से गुजर रहा था, तभी ये शब्द उसके कानों में पड़े थे.

जिसकी बात को इतने सारे लोग गंभीरता से सुन रहे थे और तालियां बजा रहे थे, जरूर वह ठीक कह रहा होगा. इसका मतलब यह है कि यदि वह शासक पार्टी के किसी बड़े नेता के घर पर चोरी करेगा तो काफी माल हाथ आयेगा.

बस यही वह क्षण था जिसने उसके मौत के परवाने पर हस्ताक्षर कर दिये थे. उसने यह तय कर लिया था कि अगली चोरी किसी बड़े नेता के ही घर पर करेगा. इसके लिए उसने सबसे बड़े नेता का चुनाव कर लिया. क्योंकि जितना बड़ा नेता, उतना अधिक माल.

वह नेता बहुत ही लोकप्रिय था. उसके दर्शनों के लिए लोगों की भीड़ लगी रहती थी. वह एक निश्चित समय में सिर्फ एक घंटे के लिए लोगों को दर्शन देता था. उसी एक घंटे का लाभ उठाता हुआ चोर भी रोज उस विराट चारदीवारी के भीतर चला जाता था, जिसकी ओर अन्यथा झांकने पर भी दसियों पुलिसवालों की निगाह उठ जाती थी.

पर वहां भी लॉन से आगे वह कभी नहीं पहुंच पाया. लॉन में ही लोग लाइन बनाकर बैठते थे, एक रस्सी के पार. दूसरी ओर वह नेता आता था, मुस्कराते हुए उनकी ओर देखता था और फिर वापस चला जाता था.

एक दिन मौका देखकर वह चोर लॉन से बरामदे में और बरामदे से गलियारे में आने में सफल हो गया. यहां आकर वह चकरा गया था कि क्या करे.

जैसे कि मैं पहले बता चुका हूं, वह योजना बनाकर चोरी करने का आदी था. वह पहले यह भी अंदाजा लगा लेता था कि माल किस कमरे में मिल सकता है. घर में घुसने के बाद भी वह बड़े विश्वास के साथ और बिना किसी जल्दबाजी के माल समेटता और चलता बनता. पर यहां सब गड़बड़ हो गया था. अभी तक वह यह नहीं जान पाया था कि कौन-सा कमरा किसका है, रसोईघर कहां है, नकदी-जेवर वगैरह किस कमरे में मिल सकते हैं. असल में तो वह यह भी नहीं जान पाया था कि उस घर में रहते कौन-कौन हैं. इतने बड़े मकान में घुसने का यह उसका पहला अवसर था और वह पूरी तरह से चकराया हुआ था.

एक तो वह यही तय नहीं कर पा रहा था कि किस कमरे में घुसे और दूसरे यह खतरा बराबर बना हुआ था कि उसे कभी भी देखा और पकड़ा जा सकता है. उसके हाथ-पांव मुहावरे के अनुसार फूलने लगे थे.

तभी उसे कोई पदचाप आती सुनाई दी. उसने झपटते हुए सबसे नजदीकी दरवाजे को खोला और अंदर घुस गया. यह एक सोने का कमरा था. एक कोने में बड़ी-सी अलमारी थी. पदचाप दरवाजे के पास आकर रुक गयी थी. वह लपककर अलमारी में घुस गया. स्थिति बिल्कुल फिल्मोंवाली हो गयी थी. उस बेचारे को यह भी पता नहीं था कि यह कमरा उस बड़े नेता की लड़की के सोने का कमरा है और वही उस पदचाप के रूप में उसे सुनाई दे रही है. नेता की लड़की कमरे में आयी. चोर के पसीने छूटने लगे. पदचाप अलमारी के पास आ गयी थी और अलमारी का हैंडल उसने पकड़ लिया था.

दरअसल नेता की लड़की पिछले एक घंटे से एक ही ड्रेस पहने हुए थी. बदलने का समय ही नहीं मिल पाया था और इस बात से वह बहुत परेशान थी. पहले तो गल्ला व्यापारियों का एक शिष्टमंडल आया था और फिर उसे अपने पिता के साथ, दर्शनों के लिए आयी जनता के सामने जाना था. ऐसा पहली बार हुआ था कि लगातार दो अवसरों पर वह एक ही ड्रेस में गयी हो.

चोर की समझ में कुछ नहीं आ रहा था. बल्कि कहें कि कुछ समझने की उसे फुरसत ही नहीं थी. वह तो बस इतना जान गया था कि अब वह पकड़ा जायेगा और फिर इतने बड़े नेता के घर में घुसने की सजा तो फांसी से कम होगी नहीं. इतना सोचते ही वह बेहोश हो गया.

उसके बेहोश होते ही कई काम एक साथ हुए. पहले तो अलमारी का दरवाजा खुला फिर नेता की लड़की के के गले से एक जोर की चीख निकली और फिर दौड़ते-भागते कदम उस कमरे की ओर बढ़े और उस चोर के बेहोश शरीर को थाम लिया.

पाठक महोदय, कहानी के बीच में दखल देने के लिए क्षमा चाहता हूं लेकिन यहां पर एक बात आपको बताना मैं आवश्यक समझता हूं. चोर की मौत के इस किस्से में अब तक जो कुछ घटा है, उसकी जिम्मेदारी पूरी तरह से चोर पर आती है, लेकिन आगे जो घटनाएं घटने जा रही हैं, उन पर चोर का कोई काबू नहीं था. या कहें कि चोर, जो अब बेहोश हुआ तो अनंत काल तक बेहोश रहा और जो कुछ होता रहा उसके लिए और-और लोग ही जिम्मेदार रहे. किसने क्या किया, यह तो आपको वक्त आने पर ही पता लगेगा, मैं आपको वापस वहीं ले चलता हूं, उस बड़े नेता की कोठी पर. इस बार अंदर नहीं, बल्कि बाहर.

एक पत्रकार उस समय वहां से गुजर रहा था. वह थोड़ा परेशान था. सत्ता पार्टी उससे चिढ़ी हुई थी और जिस अखबार के लिए वह काम कर रहा था, वहां से उसे निकाले जाने की नौबत आ गयी थी. उसका रेकार्ड रहा था कि वह सत्ता पार्टी के सारे घोटालों की पोल अपने अखबार में खोलता रहता था. अब वह काफी परेशान था और इस पूरे झगड़ को खत्म कर देना चाहता था. वह नौकरी छोड़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सत्ता पार्टी, विपक्ष तथा नयी पार्टी को लगभग बराबर सीटें मिली थीं. अब सवाल था कि सरकार कौन बनाये. . .चोर की पार्टी जिसे अपना समर्थन देती वही सत्ता में आ सकता था."

ब्लू फिल्में बनाने का काम शुरू करना चाहता था और इसी सिलसिले में जा रहा था. रास्ते में बड़े नेता की कोठी पड़ती थी. उसने दरवाजे की तरफ देखा. एक पुलिस की गाड़ी बाहर निकलती हुई दिखाई दी और एक आदमी भी उस गाड़ी में बैठा दिखाई दिया जिसके हाथों पर हथकड़ियां थीं.

पत्रकार के दिमाग में घंटी बजी. अंदर जरूर कुछ घटा है. क्या घटा है, यह जानना उसके लिए कठिन नहीं था. उस बड़े नेता के घर में इस पत्रकार का एक मुखबिर रहता था.

अपने एक गुप्त सूत्र के जरिये पत्रकार ने उस मुखबिर से उस घटना की जानकारी ली और यह जानकर उसे बहुत निराशा हुई कि पकड़ा जानेवाला कोई साधारण चोर था. पर पकड़ा वह नेता की बेटी के कमरे में गया था. यह जरूर स्टोरी बन सकती है. इश्क का चक्कर बनाया जा सकता है.

अगले दिन उसके अखबार में नेता की बेटी के इश्क का भांडाफोड़ छपा था. यह भी लिखा था कि वे दोनों अक्सर मिलते रहते थे. और नेता को इस बात की जानकारी थी. पर चूंकि इस बार उस आशिक ने नेता से एक बड़ा पद मांगा तो उसके इस लालच पर नेता को गुस्सा आ गया और उसे चोर कहकर पकड़वा दिया.

चूंकि अखबार भी राष्ट्रीय था और नेता भी, इसलिए इस खबर की ओर पूरे राष्ट्र की ही नजरें आकर्षित हुईं. पूरे राष्ट्र में इसकी चर्चा होने लगी.

यह चर्चा विपक्ष के नेता के पास भी पहुंची. इन दिनों विपक्ष की स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी. उसे बड़ी बेताबी से किसी ऐसी घटना या स्कैंडल का इंतजार था जिसे लेकर वह सत्ता पक्ष के नेता को बदनाम कर सकता. यह वह अच्छी तरह से जानता था कि अपनी स्थिति को मजबूत करने का तरीका अब यह नहीं रहा कि खुद अच्छे काम करके प्रकाश में आयें बल्कि अपने विपक्षी को किसी तरह से बदनाम करके अपने को लगातार चर्चा में रखें. इस नीति का पालन करते हुए उसने चटपट एक प्रेस कान्फ्रेंस बुलाकर नेता के घर में चल रहे 'स्कैंडल' की भर्त्सना की और कहा कि जो आदमी अपने घर को ठीक तरह से नहीं संभाल सकता, वह देश को कैसे संभाल सकता है. उसे फौरन इस्तीफा दे देना चाहिए. यदि वह इस्तीफा नहीं देगा तो 'राष्ट्र सभा' में उसके विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव रखा जायेगा.

यह सब इतने कड़े शब्दों में कहा गया और इतने कड़े शब्दों में अगले दिन के अखबार में छपा कि एकबारगी तो उस बड़े नेता को भी अपने पांवों तले धरती खिसकती महसूस होने लगी. उस चोर के घर में घुसने और पकड़ लिये जाने की खबर उसके कानों तक आयी थी और जब पुलिस उसे पकड़कर ले गयी तो उसे लगा कि मामला खत्म हो गया है. उसने इतना भर किया था कि अपनी कोठी पर तैनात सुरक्षा कर्मचारियों के प्रधान को बुलाकर डांट दिया कि वह चोर उसकी लड़की के कमरे में कैसे घुस गया.

पर जब उसने देखा कि अगले दिन यह खबर अखबार में छपी है तो उसने अपने सेक्रेटरी से फौरन उस थाने के अधिकारी को पुछवाया कि यह खबर अखबार को कैसे मिल गयी. उन्होंने अनभिज्ञता जाहिर की.

तीसरे दिन जब विपक्ष के नेता का बयान अखबारों में छपा तो उसे लगा कि सारा मामला गड़बड़ाता जा रहा है और अगर जल्दी ही कुछ न किया गया तो हालत खराब हो सकती है.

अगले ही दिन देश के सारे अखबारों में खबर छपी थी कि उस व्यक्ति को दरअसल देश के बड़े नेता की हत्या की कोशिश करते हुए गिरफ्तार किया गया था. पहली ही पूछताछ में उसने स्वीकार कर लिया है कि विपक्षी नेता के आदेश पर वह इस काम के लिए आया था. उसके पास से एक चाकू तथा एक विदेशी पिस्तौल बरामद हुए हैं. संभव है इसमें कोई विदेशी हाथ हो. जो भी हो, मामला सी. बी. आई. को सौंप दिया गया है.

शुरू में जिन लोगों ने इस ओर अधिक ध्यान न दिया था उन्होंने भी इन खबरों में दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया था. अखबारों में पाठकों के पत्रों के स्तंभ के लिए पत्र लिखने के शौकीन लोगों को पत्र लिखने का एक नया अवसर मिल गया था. उन्होंने भी अपनी तरफ से पक्ष या विपक्ष को लेकर पत्र लिखने और भेजने शुरू कर दिये थे.

कुल मिलाकर आलम यह था कि अखबारों में किसी न किसी रूप में रोज ही उसकी चर्चा हो रही थी. लोग बड़ी दिलचस्पी से अटकलें लगाते थे और आपस में बातचीत और बहस से लेकर लट्ठबाजी तक करने में पीछे नहीं रहते थे. हालांकि लट्ठबाजी करनेवालों की संख्या अधिक नहीं थी फिर भी थी जरूर. क्योंकि लट्ठबाजी की खबरें भी इन दिनों चर्चा में थीं.

इधर रैलियों का चक्कर भी शुरू हो गया. कुछ छुटभैया नेता होते हैं जो और किसी काम के लायक तो होते नहीं, केवल बड़े नेता की चापलूसी करके अपने छोटे-मोटे हित साधने में लगे रहते हैं. वे बड़े नेता के सामने आने का कोई भी मौका चूकना नहीं चाहते. इसी तरह के लोग विपक्षी नेता के चक्कर में रहते क्योंकि उन्हें उम्मीद रहती कि वह भी कभी सत्ता में आयेगा. ये लोग बड़ी संख्या में लोगों को बड़े नेता या विपक्षी नेता के पास ले जाते और उनके प्रति अपना समर्थन व्यक्त करते. नारेबाजी भी जमकर होती.

जिस पत्रकार का जिक्र मैं पहले कर चुका हूं, उसने जब देखा कि उसकी लगायी आग इतनी भड़क गयी है और सत्ता पक्ष की हालत खराब हुई जा रही है तो उसने ब्लू फिल्में बनाने का धंधा शुरू करना फिलहाल मुल्तवी करके इस मामले को और आगे बढ़ाने का निश्चय कर लिया. यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो आप देख ही चुके हैं कि उसकी पत्रकारिता नितांत मौलिक होती थी और उसकी कल्पनाशीलता के आगे कहानीकार भी मात खा जाते थे. लिहाजा उसने उस चोर का बाकायदा एक इंटरव्यू लेकर छाप दिया.

इंटरव्यू में उस चोर ने बताया कि वह दरअसल उस बड़े नेता का दिमाग था. कोई भी बड़ा काम वह नेता उसी की सलाह से किया करता था. देश की तरक्की के लिए जो भी कदम उठाये गये थे, सब उसी की सलाह के कारण थे. लेकिन इधर उस बड़े नेता ने एक बहुत बड़ी कीमत लेकर अपने देश को एक और बड़े देश को बेच दिया है. वह अब उस बड़े देश की उंगलियों पर नाच रहा है. इस बात का विरोध जब उसने किया तो उसे पकड़वा दिया गया. और संभव है मरवा दिया जाये. उसने यह भी स्वीकार किया कि नेता की लड़की के साथ उसके संबंध थे और दरअसल नेता ने उसकी सलाहों के बदले अपनी लड़की उसके हवाले की थी. और निष्कर्षतः कहा गया था कि जो आदमी अपनी बेटी और अपने देश को बेच सकता है, उसे देश का बड़ा नेता बने रहने का अधिकार नहीं है.

इस इंटरव्यू के छपने के बाद तो तूफान-सा ही आ गया. विपक्ष के नेताओं ने इस बात को लेकर जगह-जगह आम सभाएं करनी शुरू कर दीं. चुनाव भी नजदीक आ रहे थे और विपक्षी नेता किसी भी क्षण ढील छोड़कर मामले को हाथ से निकलने नहीं देना चाहते थे.

देश के बुद्धिजीवियों में भी हलचल हुई. उनका एक प्रतिनिधिमंडल देश के बड़े नेता के पास गया और उसे ज्ञापन दिया कि उस गिरफ्तार व्यक्ति पर जेल में किसी तरह की सख्तियां न की जायें और जल्दी-से-जल्दी रिहा किया जाये. उसी प्रतिनिधिमंडल ने अपने ज्ञापन की प्रतियां अखबारों को भेजते हुए यह और जोड़ दिया कि देश-विदेश के बुद्धिजीवियों को इस विषय में मिलकर आवाज उठानी चाहिए.

दुनिया के किसी भी देश में इतना कुछ हो रहा हो और बी.बी. सी. चुप रहे, यह तो हो ही नहीं सकता. बी. बी. सी. ने बाकायदा दुनिया की सारी भाषाओं और क्षेत्रों के अपने प्रसारणों में इन खबरों को चटपटी कवरेज दी.

एमनेस्टी इंटरनेशनल को भी जब यह खबर मिली तो उसने भी तत्काल उसे रिहा करने की मांग सरकार को भेज दी. दुनिया के कई बुद्धिजीवियों ने भी मिलकर ऐसा ही एक बयान जारी किया. कई तथाकथित स्वतंत्रता प्रिय देशों में स्थित इस देश के दूतावासों के सामने प्रदर्शन होने लगे.

गोयाकि मामला पूरी तरह से अंतरराष्ट्रीय हो गया.

बड़े नेता के लिए यह एक कठिन घड़ी थी. उसके पिछलग्गू नेता उसके चारों ओर घिरे, उसके साथ अपने तन-मन के सहयोग का वादा करते हुए अपने-अपने काम निकाल रहे थे. लेकिन ऐसा नहीं था कि सत्ता पार्टी के सारे नेताओं की यही स्थिति हो. कुछ ऐसे लोग भी थे जो असंतुष्ट थे. इन असंतुष्टों का भी एक नेता था. यह असंतुष्ट नेता एक बूढ़ा आदमी था जो हमेशा से ही असंतुष्ट नेता रहता आया था. इन दिनों के बड़े नेता से पहले जो बड़ा नेता था उसके जमाने में भी यह असंतुष्ट नेता असंतुष्ट ही था. तब इसने अब के बड़े नेता को, जो उन दिनों नया-नया राजनीति में आया था, अपना संरक्षण दिया था. फिर हुआ यह कि असंतुष्ट नेता का ध्यान तो पूरी तरह तत्कालीन बड़े नेता को पटकने में लगा रहा और दोनों की लड़ाई में यह नया लौंडा बन गया बड़ा नेता. असंतुष्ट नेता एक बार फिर असंतुष्ट रह गया.

लेकिन अब उसके हाथ में मौका आ गया था बड़े नेता को पटकनी देने का. इस बार उसकी चाल कारगर होगी, इसका उसे विश्वास था. उसने एक दिन अचानक प्रेस कान्फ्रेंस

व्यंग्य रचना

पत्नी सुरक्षा समिति बनाओ!

▣ सुरेश जैन

मैं आजकल भयभीत हूं. इसे यूं भी कह सकता हूं कि काफी समय से मुझे भय की भीत यानि दीवार ने घेर रखा है. काफी समय से इस भय को मैं अकेला झेल रहा हूं. अब बुजुर्गों के कहे मुताबिक इस भय को उगलकर अपना मन हल्का करना चाहता हूं. आप मेरी बात ध्यान से सुनें, कहीं ऐसा न हो कि बीन बजती रहे और पगुराई होती रहे.

सबसे पहले तो आप यह जान लें कि मैं भयभीत क्यों हूं. मैं आदतन डरपोक नहीं हूं, परिस्थितिवश भयभीत हूं. हो सकता है आप भी हों. मेरी अपेक्षा कुछ कम हों लेकिन होंगे जरूर. भय हो या बहादुरी, सब सापेक्ष होती हैं.

भयभीत होने का कारण यह नहीं है कि हमारी काम करने वाली सरकार नागरिक सुरक्षा के लिए पुलिस रखती है. जब मैं सड़क पर, गलियों में पुलिसियों को डंडा बजाते घूमते देखता हूं तो सिर अपने आप गर्व से तन जाता है. नागरिक का कितना सम्मान है. स्वच्छंद विचरता हूं. इसी स्वच्छंदता में जेब साफ हो गयी, मैं घबराया नहीं. सीधा रिपोर्ट लिखाने पहुंचा, बस परेशानी शुरू हो गयी. रिपोर्ट लिखने में हुज्जत हुई, बहरहाल किसी तरह लिखी गयी. एक पुलिस अफसर कहने लगे आपके पास पांच सौ रुपये थे! इस आजाद देश के नागरिक का इतना अपमान! क्या हमारे पास पांच सौ रुपये भी नहीं हो सकते! बड़ा अपमानित महसूस किया. ऐसा करते ही मेरे ज्ञान चक्षु खुल गये. एक वरिष्ठ कवि की गरिष्ठ कविता पंक्ति 'सम्मान सहित हम सब कितने अपमानित हैं!' का अर्थ समझ में आ गया. जरूर उनको आभास हो गया होगा कि आगे चलकर ऐसा होगा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे सबसे अधिक भय है अपनी पत्नी का. पत्नी को साथ लेकर चलना मुझे ऐसा लगता है मानो अपने साथ लालटैन लेकर चल रहा हूं. या फिर अपने विवाहित होने की मुनादी कर रहा हूं. इसलिए पत्नी को साथ नहीं ले जाता. जंजीर खींचे जाने की घटनाओं के बाद तो बिल्कुल नहीं ले जाता. अब जब से सुना कि पति के साथ जाती पत्नी को लोग ले गये तब से तो यह हाल है कि जहां जरूरी हो, वहां भी नहीं ले जाता, डरता हूं कि जाने कहां से कोई आये और मेरी इकलौती पत्नी को लेकर चलता बने. अब तो घर छोड़ना भी सेफ नहीं है.

विवाह के तुरंत बाद हुए समझौते के अनुसार तय हुआ था कि पत्नी बोलेगी और मैं सुनूंगा लेकिन मजबूरिये हालात को क्या कहिए, मुझे भी बोलना पड़ा. डर सामने आया कि कोई मेरी अनुपस्थिति में घर साफ कर गया तो क्या होगा? पत्नी से कहा, "भागवान, मेरी अनुपस्थिति में घर के सब दरवाजे बंद रखना. कोई भी आये दरवाजा मत खोलना. यहां तक कि पुलिसवाले आयें तब भी नहीं, क्या मालूम पुलिस-वर्दी में लुटेरे हों?"

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्रीमतीजी ने मेरा बोलना स्वीकार कर लिया. किसी हद तक निश्चित हुआ.

भय दूर नहीं हुआ. अब भी बना हुआ है. कभी न कभी उसको जाना भी पड़ सकता है. किसी कारण दरवाजा भी खोलना पड़ सकता है. सुबह को काम पर जाते समय जहां यह प्रार्थना करता हूं कि भगवान मेरी डी. टी. सी. की यात्रा सफल करे, वहीं यह भी मनाता हूं कि शाम को वापसी पर पत्नी एक पीस में मिल जाये. अभी तक तो मिल ही रही है! मिलती ही रहेगी, इस बात की कोई गारंटी नहीं.

बंधुओ! यही मेरे भय का कारण है. जो इस ओर से भयमुक्त हों वे किन उपायों से हुए हैं मुझे बता दें. जिनके मन के किसी कोने में भी भय का कुछ अंश है उन्हें चाहिए कि 'पत्नी सुरक्षा समिति' गठन करने में मुझे योग दें ताकि इस मुद्दे पर राष्ट्रीय स्तर पर बहस का आयोजन किया जा सके. □

बुलवायी और सत्ता पार्टी से इस्तीफा देते हुए चोर के नेतृत्व में एक नयी पार्टी के गठन की घोषणा कर दी. विपक्षी पार्टी के भी कई असंतुष्ट लोग उसके साथ आ गये थे. एक विराट जलसे में पार्टी के गठन की घोषणा की गयी.

जल्दी ही देश के हर राज्य और हर जिले में नयी पार्टी की इकाइयों का गठन हो गया.

इन सारी चर्चाओं और परिचर्चाओं के चलते चुनाव के दिन भी पास आ गये. इस नयी पार्टी ने बाकायदा सत्ता तथा विपक्ष की पार्टियों की ही तरह अपना चुनाव घोषणा-पत्र जारी किया. टिकटार्थियों की लाइनें इनके पार्टी मुख्यालय पर भी दिखाई देने लगी थीं.

चुनाव लड़ने में भी इस पार्टी को कोई दिक्कत न हुई. लोगों ने मुक्त हस्त से इनके चुनाव कोष में पैसे दिये. अपनी चुनाव सभाओं में इस नयी पार्टी के नेता अपने नेता पर होने वाले अत्याचारों का बड़ा अश्रुविगलित चित्र खींचते.

सत्ता पार्टी के बड़े नेता के विरुद्ध इस नयी पार्टी के लोगों ने उसी चोर का नामांकन दाखिल करा दिया था. चूंकि चोर की लोकप्रियता को देखते हुए बड़े नेता को अपनी गद्दी हिलती महसूस हुई इसलिए वह चुनाव प्रचार के लिए देश भ्रमण पर न निकल सका और अपने ही चुनाव क्षेत्र में डटा रहा.

चुनाव के परिणाम निकले. चोर बहुत बड़े अंतर से चुनाव जीत गया था.

चुनाव परिणामों में एक खास बात यह थी कि तीनों पार्टियों—सत्ता पार्टी, विपक्ष तथा नयी पार्टी को लगभग बराबर सीटें मिलीं. अब सवाल यह था कि सरकार कौन बनाये. चोर की पार्टी जिसे भी अपना समर्थन देती, वही सत्ता में आ सकता था, इसलिए दोनों नेताओं ने तय किया कि वे चोर से मिलेंगे.

इधर इतना बड़ा चुनाव जीतने पर चोर को छोड़ दिया गया. सरकार ने उसके विरुद्ध सारे केस वापस ले लिये.

जब वह जेल के विशाल दरवाजे से बाहर निकला तो उसके स्वागत के लिए असंतुष्ट नेता के नेतृत्व में उसकी पार्टी के लोग बड़ी संख्या में इकट्ठा थे. उसके निकलते ही बैंड बाजों के शोर ने उसके कान बंद कर दिये. उसकी पार्टी के लोगों ने मालाओं से उसे सिर तक ढक दिया.

उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था. उसे डर था कि एक मुसीबत से निकलकर वह एक दूसरी मुसीबत में तो फंसने नहीं जा रहा है. वह निकल भागना चाहता था पर भीड़ इतनी थी कि निकलना संभव नहीं था. और अगर निकलने की कोशिश में कहीं पकड़ा गया तो उसे भय था कि इतनी भीड़ उसका कचूमर ही निकाल देगी. लिहाजा उसने अपने आप को भीड़ के हवाले कर दिया.

भीड़ उसे लेकर, उसकी अमरता तथा विजय के नारे लगाती हुई नयी पार्टी के मुख्यालय तक आ गयी. वहां पर असंतुष्ट नेता तथा एक-दो और नेताओं के भाषणों के बाद सभा विसर्जित कर दी गयी. कुछ लोगों ने आग्रह किया कि वे अपने नये नेता की तकरीर सुनेंगे लेकिन असंतुष्ट नेता ने उन्हें यह कहकर चुप करा दिया कि हमारे नेता इस समय थके हुए हैं और उन्हें आराम की जरूरत है.

..

उसे सचमुच आराम की जरूरत थी.

जब सब लोग चले गये और असंतुष्ट नेता तथा एक-दो और लोग रह गये तो उसने डरते-डरते पूछा कि माजरा क्या है. जब उसे सारी बातें पता लगीं और उसने यह जाना कि वह इतना बड़ा नेता बन गया है तो वह एक बार फिर बेहोश हो गया.

अगले दिन बड़ा नेता तथा विपक्षी नेता, दोनों उसके पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बातचीत के लिए आये. संयोग देखिए कि दोनों लगभग एक ही समय में उसके कमरे में थे. वह अभी तक बेहोश पड़ा था. असंतुष्ट नेता उसके पास बैठा था. इस मुलाकात की खबर उस पत्रकार को भी मिल गयी थी जिसका जिक्र मैं पहले कर चुका हूं. वह भी दरवाजे से कान लगाये खड़ा हो गया.

दोनों नेताओं ने अपनी-अपनी बातें उससे कहीं और उसने अपने दोनों कानों से उनकी बातें सुनीं. दोनों ने बढ़-बढ़कर उसकी कीमतें तय कीं. वह सुनता रहा. उसके साथ-साथ असंतुष्ट नेता और पत्रकार भी सुनते रहे.

पाठक महोदय, यह मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं कि वह चोर बेहोश है और उस बेहोशी में किये गये किसी भी काम की जिम्मेवारी उसकी नहीं है. जब वह दोनों नेताओं की बात सुनकर अपनी प्रतिक्रिया देता है तो वह भी बेहोशी में ही देता है इसलिए कृपया उसकी बात पर चौंकें नहीं.

हां तो, दोनों नेताओं की बात सुनकर उसने कहा कि सरकार वह स्वयं बनायेगा.

अब चकराने की बारी उन नेताओं की थी. वे चुपचाप कमरे से बाहर आये. असंतुष्ट नेता भी उनके पीछे-पीछे बाहर आ गया. बाहर पत्रकार को देखकर उन्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ, चारों व्यक्तियों ने दरवाजे से बाहर निकलने के बाद एक दूसरे की ओर देखा और अपने-अपने रास्ते चल दिये.

जाते हुए बड़ा नेता सोच रहा था कि इस चोर ने उसका सारा राजनीतिक भविष्य ही चौपट कर दिया है. चुनाव में हारना उसके लिए कोई ज्यादा बड़ी बात नहीं थी, यदि वह सरकार बना लेता तो कहीं से भी उपचुनाव जीतकर आ सकता था. पर अगर कहीं चोर ने उस विपक्षी नेता के साथ मिलकर सरकार बना ली तो उसके लिए सारे रास्ते बंद हो जायेंगे और विपक्षी नेता तथा असंतुष्ट आपस में चाहे जो भी करें, उसे तो फिर से सत्ता में लौटने का मौका नहीं देंगे. कुल मिलाकर अब एक ही रास्ता है. यदि चोर को खत्म कर दिया जाये तो तात्कालिक रूप से असंतुष्ट नेता को कोई बड़ा लालच देकर फिर से अपने कब्जे में लिया जा सकता है. यही एक रास्ता है, उसने सोचा और वापस पलट गया. इससे पहले उसने अपनी जेबों में टटोलकर देख लिया कि उसका विदेशी पिस्तौल अपनी जगह पर रखा है.

विपक्षी नेता का सोचना भी जारी था. यह तो वह सोच रहा था कि चोर अपनी कोई बड़ी कीमत मांगेगा, और इसके लिए वह तैयार होकर भी आया था. पर यहां तो मामला ही उल्टा हो गया था. यह चोर तो बड़ी ऊंची महत्वाकांक्षाओं का आदमी लगता है. अगर कहीं सचमुच चोर ने सरकार बना ली तो फिर उसका अपना क्या होगा. सत्ता में किसी नगण्य स्थिति में आना या फिर से विपक्षी नेता बनना, दोनों ही स्थितियां उसे स्वीकार्य नहीं थीं. वह यह भी जानता था कि यदि चोर बीच में न हो तो असंतुष्ट नेता को अपने फंदे में लेना उसके लिए अधिक मुश्किल न होगा. बड़े नेता के साथ असंतुष्ट नेता की चूंकि लगती है इसलिए बड़े नेता को खत्म करने के लिए असंतुष्ट उससे पूरा सहयोग करेगा. याने उसके और बड़े नेता पद के बीच केवल चोर बैठा है. उसे अपने रास्ते से हटाना जरूरी है, उसने सोचा और जेब में रखे विदेशी पिस्तौल को सहलाते हुए वापस लौट पड़ा.

असंतुष्ट नेता को भी चोर ने आश्चर्य में डाल दिया था. उसका खयाल था कि राजनीति चोर के लिए एक अजनबी चीज है और कोई भी फैसला लेने से पहले चोर उससे जरूर पूछेगा. अपने को बड़ा नेता बनाने की उसने एक बाकायदा योजना बना रखी थी और चोर को उसमें मोहरे के रूप में प्रयोग किया जाना था. पर अब लगता है कि चोर खुद ही सत्ता में आने के सपने देखने लगा है. वह एक बार फिर से असंतुष्ट नेता बनने के लिए तैयार नहीं था. अपनी योजना का विकल्प भी उसके पास था. वह जानता था कि बड़ा नेता और विपक्षी नेता आपस में दुश्मन हैं और एक को बड़ा नेता न बनने देने के लिए दूसरा उसे ही बड़ा नेता बन जाने देगा. तो फिर चोर को बीच में आने का क्या हक है? उसने अपनी योजना पर एक बार फिर गौर किया और अपनी जेब में रखी विदेशी पिस्तौल को जेब के ऊपर से ही टटोलते हुए वापस चल पड़ा.

पत्रकार अलग परेशान था. उसे यही गम खाये जा रहा था कि कहीं चोर को होश आ गया और उसकी सारी झूठ की पोल खुल गयी तो उसका सारा जीवन चौपट हो जायेगा. बड़ा नेता तो उसे छोड़ेगा नहीं. अगर बड़ा नेता सत्ता में आया तो पूरी जिंदगी जेल की चक्की पीसनी पड़ेगी और यदि सत्ता में न आ पाया तो इसी खुंदक में किसी से गोली मरवा देगा. इसलिए चोर को होश में आने से पहले ही दूसरे लोक में पहुंचाना पड़ेगा. यह सोचता हुआ वह भी लौट पड़ा. उसे अपनी जेब में रखे विदेशी पिस्तौल पर पूरा भरोसा था.

चारों लगभग एक साथ अंदर घुसे. वहां चोर बेहोश पड़ा था. इनको देखते ही चोर के चेहरे पर एक अर्थपूर्ण मुस्कान आ गयी. □

● **421 एफ, पॉकेट II, मयूर विहार, दिल्ली-110091**

चलते-चलते

"चैक ठीक से नहीं भरा है, फिफ्टी की स्पैलिंग ठीक कीजिए और आगे 'ओनली' लिखिए, यदि अंग्रेजी ठीक से नहीं आती है तो हिंदी में ही लिखा कीजिए," बैंक के क्लर्क ने चैक ग्राहक को लौटाते हुए कहा.

"अरे भई, लाओ ठीक कर देते हैं, वो असल में अंग्रेजी में लिखने की आदत हो गयी है न!" ग्राहक ने चैक वापस लेते हुए उत्तर दिया. □

▣ सतीश कुमार शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मथुरादास की डायरी

ऋणंकृत्वा चर्बी पिवेत

▣ मथुरादास

अचानक मथुरादास को घी और चर्बी की चिंता सता गयी. . . सो भइये ने 'चार्वाक' से लेकर तमाम शास्त्र के शास्त्र छान मारे. मंत्री जी भी कहीं झूठ बोल सकते हैं भला! घी में चर्बी कहीं नहीं मिली. घी बिलकुल शुद्ध बिक रहा है. बस कुछ असामाजिक तत्त्वों ने इधर गड़बड़ी फैला दी और चर्बी में घी मिला दिया है. सच यह है कि शुद्ध चर्बी नहीं मिल रही है... और पत्रकार लोग उल्टा-सीधा कुछ भी छापे चले जा रहे हैं. . .

मथुरादास को इधर मालूम हुआ जिसे वे सुगंधित घृत मान रहे थे वह तो चरबी थी.

शास्त्रों में कहा है, 'ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत' यानी कर्ज लो और घी खाओ. पता नहीं चार्वाक साहब के जमाने में घी का क्या होता था. चाणक्य ने पच्चीस गुर बताये हैं भ्रष्टाचार के. उनमें भी चर्बी का जिक्र नहीं है. घी का भी नहीं है. घी का जिक्र चार्वाक ने ही किया है और वह भी उधार लाये घी का.

हमारे मुहल्ले में जो किरानी घी बेचता है उसने लिख रखा है— 'आज नकद कल उधार.' मैं अक्सर उधार के चक्कर में कल की प्रतीक्षा करता हूं पर उधार मिलता कभी नहीं. चार्वाक को मिल जाता होगा. मुझे लगता है चार्वाक तो कहते होंगे. . . 'ऋणंकृत्वा घृतं पिवेत' और उनका राशन वाला कहता होगा 'ऋणं-कृत्वा चर्बी पिवेत.' घी उधार देने वाला महारथी मुश्किल से ही मिलेगा.

मैं चर्बी से भयभीत, चर्बी विहीन घी खोज रहा था कि एक मंत्री जी मिल गये. मैंने उनसे कहा, "मान्यवर, आजकल सचमुच धर्मसंकट में पड़ गया हूं. लोगों ने घी में चर्बी मिला दी है."

मंत्री जी ने इसका जोरदार प्रतिवाद किया, बोले, "यह सरासर झूठ है. घी में चर्बी कहीं नहीं मिली. घी बिल्कुल शुद्ध बिक रहा है. बस कुछ असामाजिक तत्वों ने इधर गड़बड़ी फैला दी और चर्बी में घी मिला दिया है. सच यह है कि शुद्ध चर्बी नहीं मिल रही और पत्रकार लोग उल्टा-सीधा कुछ भी छापे चले जा रहे हैं."

आजकल अगर मंत्री सतर्क न हों और समय-समय पर बयान जारी न करें तो भारी अनर्थ की गुंजाइश हो सकती है. आप जानते ही हैं कि इधर विदेशी ताकतें सिर उठा रही हैं. और उधर पड़ोसी देशों से खतरा बढ़ रहा है. देश में विघटनकारी तत्व सक्रिय हैं और हिंसा, तोड़फोड़ और सांप्रदायिकता को बढ़ावा मिल रहा है. विरोधी दल सरकार से सहयोग के बजाय अड़ंगा लगाने की घात में हैं. ऐसे समय में मंत्रियों के बयान से बड़ी राहत मिलती है.

मंत्री जी बोले, "चर्बी की मिलावट तो सरासर झूठ है. स्वयं शंकराचार्य जी ने इसे चखा है. चर्बी होती तो वे फौरन थूक देते."

मैंने भीरु प्राश्निक की तरह सहमते हुए कहा, "किंतु श्रीमन्, चर्बी देश में आयी तो थी."

"ऐं, आयी थी? तो यह जरूर विदेशी ताकतों की साजिश होगी." मंत्री जी ने बलपूर्वक कहा.

मेरा उत्साह थोड़ा बढ़ा. मैंने पूछा, "मगर भगवन् आप तो सरकार हैं, सरकार चला रहे हैं. तनिक यह बताएं कि यह चर्बी आयी थी तो गयी कहां?"

मंत्री जी बोले, "बंधु, पहले तो तुम अपने बयान को सही करो. सरकार मैं नहीं चला रहा बल्कि सरकार मुझे चला रही है. इसके बाद जहां तक तुम्हारे इस सवाल का प्रश्न है कि वह चर्बी गयी कहां तो तुम मेरे शरीर की ओर ही क्यों देख रहे हो, विरोधी दल वालों को क्यों नहीं देखते?"

मथुरादास के ज्ञानकपाट तुरंत खुल गये. चर्बी आयी थी यह भी सच है और अब वह वहां नहीं है, यह भी सच है. फिर गयी कहां? मैंने जनता की तरफ देखा. बाबू बनवारी लाल लंच की रोटियां थामे हंसते साइकिल पर दफ्तर जा रहे थे. वे अपनी साइकिल से ज्यादा ही पंचर लग रहे थे. भूरे अभी मैला कमर पर ढोने के बाद बीड़ी पीने बैठा था. उसकी खांसी गले के बजाय पसलियों की दरार से निकल रही थी. फिर चर्बी गयी कहां? मैंने दोनों पक्षों के नेता देखे. सत्तापक्ष वाला जिस मोटर में बैठा उसका पहिया पंचर हो गया था और विरोधी दल वाला अपना पेट समेटकर जिस रिक्शे पर लदा उसकी कमानी टूट गयी.

वैसे मैं इन दोनों के बजाय व्यापारी की बात पर ज्यादा भरोसा करता हूं. न चर्बी आयी, न खायी गयी. कुछ भी नहीं हुआ. यहां सब ठीक-ठाक है. हम जो कुछ खा रहे हैं वह शुद्ध शाकाहारी है.

मेरे पड़ोसी को यकीन नहीं हो रहा था. वह बराबर चर्बी खाकर धर्म-भ्रष्ट हो चुके होने की रट लगाए था. उसने दो बोतल गंगाजल भी मंगा लिया था और हर पूड़ी या लड्डू पर पहले 'एक बूंद गंगाजल' डालता था फिर खाता था. एक दिन उसने गंगाजल की जो दो बोतलें मंगायीं उनमें से एक में एकनन्हा-सा बटन पड़ा हुआ दिखा. वह बटन उसके नन्हें शिशु पप्पी के स्वेटर का था. ये बटन मेरा पड़ोसी हांगकांग से लाया था. एक दिन एक बटन पप्पू नोचकर निगल गया. पड़ोसी की तमाम हाय-तौबा और डाक्टरों के अथक प्रयास के बावजूद जब पप्पू ने बटन नहीं उगला और आशंका के विपरीत उसका दम भी नहीं घुटा तो डाक्टर ने कहा, "चिंता न करें. अब यह बटन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुबह बाहर आ जायेगा."

मेरे पड़ोसी को बहुत गुस्सा आया. उसने झल्लाकर कहा, "लोग बड़े पापी हो गये हैं. गंगाजल भी गड़बड़ किये दे रहे हैं. प्रदूषण बढ़ता जा रहा है."

मैं अपने पड़ोसी की घबराहट से सहमत नहीं हूं. 1933 में 'सुधा' नाम की पत्रिका में निरालाजी ने एक संपादकीय लिखा था जिसका शीर्षक था. . .'घी में चर्बी.'

यह मथुरादास की गप नहीं है. अगर होगी तो जरूर इसमें निराला रचनावली छापने वालों का हाथ होगा. पर मुझे लगता है रचनावली में बाकी जो भी घपले हों यह उद्धरण सही है. इसमें निरालाजी ने शिकायत की है कि व्यापारी घी में चर्बी मिलाते हैं.

मुझे लगता है यह चर्बी प्रक्षेप निराला-युग में ही नहीं उससे पहले भी होता रहा होगा. शास्त्रों में घृत-कंबल का जिक्र आता है. कहते हैं जमा हुआ घी देवताओं के ऊपर कंबल की तरह लपेटा जाता था. अगर यह घी हरियाणे की डेरी वाला घी होता तो इसे घृत-कंबल के बजाय घृत लोंदा कहा जाता और देवता को उसमें लपेटने के बजाय थोपा जाता होता. घी का कंबल तो चर्बी ही हो सकती है.

यह प्रथा आज भी वर्तमान है. शीतकाल में गरीबों को सरकार के मंत्री कंबल बांटते हैं. घृत कंबल बांटें तो अपने लिए कुछ नहीं बचता. कंबल बांटकर लौटे नेता को ध्यान से देखें तो भेद खुल जायेगा. कंबल तो वह गरीबों को बांट आता है पर अपने बदन पर जो रखता है वह घी नहीं चर्बी ही होता है.

मेरा पड़ोसी कुछ भी कहे मैं सरकार के साथ हूं. बस इतना जरूर चाहता हूं कि चर्बी विदेशों से न आये. विदेशी चर्बी चढ़ती है तो आदमी अपने कुत्ते से अंग्रेजी बोलता है. भारतीय चर्बी एकत्रीकरण का अभियान चलाना चाहिए.

बल्कि मैंने थोड़ी-सी गलत बात कही. स्वदेशी चर्बी का इस्तेमाल तो बहुत दिनों से हो रहा है. अगर यह चर्बी न होती तो देश का स्वास्थ्य रसातल में चला जाता. इस स्वदेशी चर्बी का सबसे बड़ा उत्पादन स्रोत इस देश का आम आदमी है. चर्बी पैदा आम आदमी के बदन पर होती है और उसकी चिकनाई नेता या अफसर जिमींदार के बदन पर दिखाई देती है.

इस प्रक्रिया के पीछे हमारी मानवता-वादी दृष्टि है. चर्बी की कुछ घातक हानियां हैं. मसलन, इससे रक्तचाप भी बढ़ सकता है और चर्बी ज्यादा चढ़े तो दिल का दौरा भी पड़ सकता है. अब सोचिए, अगर रिक्शा चलाने वाले मंगरू को ऐसी कोई बीमारी होगी तो उसे पच्चीस हजार का पेसमेकर लगवाना पड़ जायेगा. इस खर्च की भारी विपत्ति से मंगरू को बचाने के लिए उसकी चर्बी नेता महानसिंह या लाला करोड़ी मल स्वयं ले लेते हैं.

अब देखिए, हम आम आदमी का कितना ध्यान रखते हैं. अगर उसे खेती के लिए चार हजार कर्ज मिले तो हम चैक में से उसे सावधानी और स्नेह बरतते हुए केवल दो हजार देते हैं. बाकी दो हजार स्वयं रख लेते हैं. किसान चार हजार पा जाये तो दो बैल खरीदेगा और खेती में आराम तलब हो जायेगा. उसकी चर्बी बढ़ेगी और उसे दिल का दौरा पड़ेगा. दो हजार पाता है तो हल में एक तरफ बैल होता है दूसरी तरफ वह स्वयं.

अब मान लीजिए, कभी बाढ़ आ गयी. अगर बदन पर चर्बी ज्यादा है तो गांव का आदमी न तो तैर पायेगा न हफ्ते भर पेड़ पर टंगा रहेगा.

बाढ़ के बाद इमदाद पहुंचती है. तहसीलदार पांच सौ रुपया फी आदमी बांटने के लिए निकलता है पर दयालु होकर सौ रुपया फी आदमी बांटता है. जो आदमी हफ्ता भर भूखा पेड़ पर टंगा रहा उसे ज्यादा खिलाकर हम क्या मार डालें?

तो इस तरह मेरा पड़ोसी समझे न समझे इस चर्बीकांड का मानवीय पक्ष मैं समझता हूं इसलिए सरकार का समर्थन करता हूं. □

व्यंग्य चित्र: नीरद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपन्यास अंश

समयचक्र

○ धीरेंद्र वर्मा

चाय पीकर समीर और सरिता जोशी लाज से पश्चिम की ओर वाली चढ़ाई के कच्चे रास्ते पर चल पड़े. सरिता ने बताया कि लगभग डेढ़-दो घंटों की चढ़ाई का रास्ता है और सूर्योदय से पहले ही वे मंदिर तक पहुंच जायेंगे. समीर की घड़ी में साढ़े चार बजे थे और आकाश पर अभी भी अंधेरा छाया हुआ था. अंधेरे में भी आकाश पर नक्षत्रों की रोशनी इतनी तेज थी कि समीर और सरिता को पगडंडी की चढ़ाई चढ़ने में कोई तकलीफ नहीं हो रही थी. निर्जन पहाड़ों पर समीर और सरिता ऊपर की ओर चढ़ते जा रहे थे.

"समीर जी," लगभग पौन घंटे का सफर पूरा होने पर सरिता ने कहा, "बाबूजी ने बताया था कि आध घंटे की चढ़ाई के बाद हमें एक झरना और चाय की दूकान मिलनी चाहिए थी पर अब तो लगभग एक घंटा हम चल चुके हैं पर झरना कहीं नहीं मिला."

"कहीं हम गलत पगडंडी पर तो नहीं चढ़ गये?" समीर ने पूछा.

"तब तो बड़ी मुश्किल हुई," सरिता ने कहा, "अभी तो सूर्योदय में भी लगभग आधे पौने घंटे की देर है और यहां इस निर्जन क्षेत्र में दूर-दूर तक भी किसी से पूछा नहीं जा सकता. अब क्या किया जाये?"

"तुम जो कुछ बता रही हो वह आज से तीस-चालीस वर्षों बाद होगा!" समीर ने अपनी इलैक्ट्रानिक घड़ी सरिता को दिखलाते हुए कहा, जिसकी तारीख और सन् उन्नीस सौ तीस दिखा रही थी! —वर्तमान में अतीत की पृष्ठभूमि को खंगालता रोचक अंश

"देखो सरिता," समीर ने बताया, "आखिर ये पगडंडी कहीं न कहीं तो जाती ही होगी, तो हम लोग इसी पर चलते हैं. उजाला होते-होते कोई न कोई रास्ता बतानेवाला हमें मिल ही जायेगा."

सरिता अब तक काफी थक चुकी थी और कुछ हताश सी हो चली थी. वह धीरे-धीरे समीर के साथ बढ़ने लगी. समीर और सरिता अंधेरे में भी किसी घर या किसी मनुष्य को ढूंढ़ते चल रहे थे पर तभी आसमान बादलों से घिर गया और देखते ही देखते तेज वर्षा होने लगी. समीर और सरिता को एक घने पेड़ के नीचे रुक जाना पड़ा.

"वह देखिए समीरजी, एक छोटा-सा मकान," सरिता चमकती हुई बिजली की ओर देखते हुए बोली, "मैंने अभी-अभी बिजली की चमक में देखा."

"एक झलक-सी मुझे भी दिखी थी", समीर बोला, "मगर कहीं ये भ्रम न हो."

"आइए चलते हैं," सरिता निश्चय के साथ बोली, "थोड़ा भीग ही तो जायेंगे पर वहां से हमें रास्ता पता चल जायेगा और पानी के रुकते ही हम चल पड़ेंगे."

समीर और सरिता बिजली की कौंध की रोशनी के सहारे बरसते पानी में तेजी के साथ चलकर उस छोटे-से मकान तक पहुंच गये. मकान बहुत ही सुंदर और साफ-सुथरा था. समीर, सरिता ने देखा कि मकान का दरवाजा खुला है और उसके अंदर से लालटेन का मद्धिम प्रकाश निकल रहा है. दोनों कमरे के अंदर पहुंचे. कमरे में कोई नहीं था परंतु लालटेन और अंगीठी जल रहे थे. मकान के अंदर जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान रखा था उसको देखकर लग रहा था कि वहां कोई रहता तो है पर कहीं बाहर गया हुआ है.

सरिता ने प्रश्नसूचक दृष्टि से समीर की ओर देखा.

"अंगीठी में थोड़ी लकड़ी और डाल दी जाये और बारिश के रुकने तक तापा जाये," समीर बोला, "इस बीच अगर घर का मालिक आ जाये तो उससे हम क्षमा भी मांग लेंगे और धन्यवाद भी दे देंगे."

सरिता और समीर आग के किनारे बैठकर अपने को सुखाने लगे. बाहर पानी तेज होता जा रहा था और लग रहा था कि तूफान-सा आ गया है. लेकिन उस घर के अंदर सभी कुछ शांत और स्थिर था. समीर और सरिता उस भयंकर तूफान से अपने को बचा हुआ पाकर काफी सुरक्षित महसूस कर रहे थे. बाहर प्रकृति की रौद्र लीला चल रही थी, बादल गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी और मूसलाधार बर्षा हो रही थी और लग ऐसा रहा था कि हवा के तेज झोंकों में सभी कुछ उड़ जायेगा. समय काटने और शायद स्वयं को ढाढ़स बंधाने के उद्देश्य से सरिता ने गुनगुनाना शुरू कर दिया और तीन चार मिनट में गीत के समाप्त होते-होते बारिश भी थम गयी और तूफान भी निकल गया. सरिता और समीर उस छोटे से मकान के बाहर आये जहां सभी कुछ स्थिर था और आकाश अपनी सिंदूरी आभा बिखेरे नये सूरज का इंतजार कर रहा था.

मकान का बाहरी हिस्सा समीर को नितांत अनजाना-सा लगा. सरिता भी आंखें फाड़े अपने चारों ओर देख रही थी. सुबह के अंधेरे में जिस स्थान से चढ़कर वे दोनों ऊपर आये थे वह कहीं नहीं दिख रहा था और उन्होंने अपने को एक पहाड़ की चोटी पर पाया. आकाश पर लालिमा फूट रही थी और पूर्व से इंद्रधनुषी रंग की किरणें पूरे पर्वत प्रदेश पर अपनी आभा बिखेर रही थीं और तभी उन्होंने देखा दूर अंतरिक्ष पर बर्फ से ढंकी विशाल चोटियां. . .

"बहुत ही सुंदर दृश्य है," सरिता ने उदय होते हुए सूर्य को हाथ जोड़ते हुए कहा, "लेकिन हम लोग हैं कहां?"

"मेरे खयाल से हम इस समय नैनीताल की स्नोव्यू चोटी पर हैं." समीर ने अपने चारों ओर देखते हुए कहा.

"स्नोव्यू?" सरिता इधर-उधर दृष्टि डालते हुए बोली, "पर वहां रेस्तरां था, रेस्ट हाऊस था और दूरबीन लगी हुई थी. यहां तो कुछ भी नहीं है."

"तुम जो कुछ बता रही हो वह आज से तीस-चालीस वर्षों बाद होगा. यह तो हमारे समय से बहुत पहले का समय है," समीर ने अपनी इलेक्ट्रानिक घड़ी सरिता को दिखलाते हुए कहा, जिसकी तारीख और सन् उन्नीस सौ तीस दिखा रही थी.

"क्या?" सरिता चौंकीं, "यानी मैं भी अतीत में पहुंच गयी?"

"हां सरिता," समीर ने स्थिति को समझते हुए मुस्कुराते हुआ कहा, "तुम्हारी बहुत इच्छा थी न अतीत में आने की."

"वह देखिए समीरजी," सरिता ने कहा, "वह मंदिर दिख रहा है पहाड़ी पर. इस पगडंडी से वहां पहुंच जायेंगे."

समीर और सरिता एक दूसरे का हाथ लिये हुए कठिन ढलान की कच्ची पगडंडियों के बीच से होते हुए पहाड़ के नीचेवाली घाटी की ओर उतरने लगे. रास्ते में दो-चार पहाड़ी झरने भी मिले, जिन्हें पार करने के लिए बड़े-बड़े पत्थरों के प्राकृतिक पुल भी बने हुए थे. थोड़ी दूर उतरने पर एक कच्ची सड़क मिली जो काफी चौड़ी और साफ-सुथरी थी. सड़क के किनारे पहाड़ी फलों के घने पेड़ लगे थे. फूलों की भीनी-भीनी सुगंध आ रही थी और पेड़ों पर पंछी कलरव कर रहे थे. समीर को लग रहा था कि वह एक सपना देख रहा है.

रास्ते में अनेक स्थानीय लोगों की टोलियां मंदिर से दर्शन करके लौट रही थीं. उन सबों की वेशभूषा किसी पुराने युग की लग रही थी. वे सभी समीर और सरिता को बड़ी ही कौतुकपूर्ण निगाहों से देख रहे थे. कुछ स्त्रियों और बच्चों की टोलियां गीत गाते हुए आ रही थीं. समीर को सभी कुछ अत्यंत अविश्वसनीय और रोचक लग रहा था.

"समीर जी!" सरिता चलते-चलते बोली, "मुझे लग रहा है कि हम किसी दूसरी दुनिया में पहुंच गये हैं क्योंकि ये लोग और इनका व्यवहार हमारी आज की दुनिया से बिल्कुल भिन्न लग रहा है. पर एक बात बताइए, यहां से हम वापस कैसे जायेंगे?"

"वापस?" समीर हंसता हुआ बोला, "इस पर तो मैंने भी ध्यान नहीं दिया. लेकिन सरिता, यहां हम खुद तो आये नहीं हैं, किसी ने हमें बुलाया है और जिसने हमें बुलाया है वही यह भी जानता होगा कि हम वापस कैसे जायेंगे."

समीर और सरिता को सन् उन्नीस सौ तीस का वातावरण अत्यंत मोहक और सुहावना लग रहा था. पहाड़ों की हरियाली की भीनी खुशबू अत्यंत मनभावन लग रही थी. उन्हें सारी धरती अपने युग से अधिक युवा और सुंदर लग रही थी. वे स्वयं को भी अत्यंत भार रहित और प्रफुल्लित पा रहे थे. मंदिर अब काफी नजदीक आ गया था और अनेक छोटे-छोटे दूकानदार छोटी-मोटी वस्तुएं बेच रहे थे.

"कुछ खरीद तो सकते नहीं," समीर ने सरिता को एक चूड़ीवाली की दूकान पर रुकते हुए देखकर धीरे-से कहा, "क्योंकि जो रुपये मेरे पास हैं उसे ये लोग लेंगे नहीं और अगर किसी पुलिसवाले ने देख लिया तो सीधे ब्रिटिश जेलों की हवा खानी पड़ेगी."

"आप घबरायें नहीं," सरिता ने मुस्कुराते हुए कहा, "मैं अपने इन कड़ों को बदलकर कांच की ये चूड़ियां ले लूंगी. वह चूड़ीवाली ललचायी दृष्टि से मेरे ये कड़े देख रही है."

"लेकिन सरिता," समीर बोला, "इसमें कुछ गड़बड़ी न हो जाये."

"मैं यह सब नहीं जानती," सरिता ने कहा, "मुझे ये चूड़ियां पसंद हैं," और इतना कहकर सरिता ने बड़ी ही आसानी से अपने कड़े चूड़ीवाली से बदलकर चूड़ियां ले लीं.

"एक बात बताइए समीरजी," सरिता ने मेले के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे एक झरने के पास हाथ-मुंह धोकर पूछा, "आपको तो सैमुएल स्मिथ ने अतीत में बुलवाया परंतु मैं कैसे अतीत में पहुंच गयी?"

"सैम ने मंत्रशक्ति तथा अपनी इच्छाशक्ति के माध्यम से हमें बुलाया होगा," समीर ने कहा.

"नहीं समीर," सैमुएल स्मिथ ने पीछे से आकर सरिता की शंका का खुद ही समाधान किया, "तुम्हें तो भविष्य से अतीत में मैं ही बुलाता रहा हूं, लेकिन सरिता को बुला पाना मेरे लिए संभव नहीं था. सरिता यहां आना चाहती है, यह तो मैंने तुम्हारी विचार तरंगों से जान लिया था, लेकिन अपनी मानसिक शक्तियों से मैं केवल एक ही व्यक्ति को बुला सकता था. . . सरिता को बुलवाया है सुनीता ने."

समीर और सरिता ने देखा कि सुनीता सैमुएल स्मिथ के पास ही खड़ी मुस्कुरा रही है. समीर एकाएक चौंक पड़ा. सुनीता की मुखाकृति सरिता से इतनी अधिक मिल रही थी कि समीर को लगा कि एक के स्थान पर दो सरिताएं खड़ी हैं.

"हां, मैंने ही तुम्हें बुलाया था," सुनीता बड़े प्यार से सरिता को निहारती हुई बोली, "लेकिन योग और मंत्रों की शक्ति डॉ. सैम की ही है. इन्होंने अपनी त्रिकाल विद्या से मेरी इच्छाशक्ति का प्रयोग किया और मैं तुम दोनों से मिल पायी. कितनी सुंदर लगती हो तुम!"

"यह शिवजी का बड़ा ही प्राचीन मंदिर है," सैम ने सामनेवाले मंदिर की ओर इशारा करते हुए कहा, "जब हेरल्ड राबिन्स और मैरी राबिन्सन नैनीताल में रहते थे तब एक दिन अचानक उन्हें यह मंदिर जीर्ण-शीर्ण हालत में मिला. मैरी को इस भव्य मूर्ति को देखकर बड़ी श्रद्धा हुई और उसने हेरल्ड से जोर देकर इसे पक्का करवाया."

"क्या हेरल्ड को भी भारतीय संस्कृति या धर्म पर विश्वास होने लगा था?" समीर ने पूछा.

"यह तो नहीं कहा जा सकता," सैम ने कहा, "लेकिन उसे कर्म, भाग्य और पुनर्जन्म के सिद्धांतों में विश्वास होने लगा था. उसे अपने द्वारा किये गये अनाचारों पर गहरा दुख होने लगा था. हेरल्ड अपनी पत्नी मैरी को बेहद प्यार करता था और उस में ये परिवर्तन मैरी के कारण ही हुए थे."

काफी देर तक सैम समीर को अपने पूर्वजन्म में हेरल्ड के रूप में बिताये गये जीवन की बातें बताता रहा. उसकी वाणी में दर्द छिपा था, ऐसा समीर ने अनुभव किया.

"समीर," सैम ने अपनी घड़ी देखते हुए कहा, "मृगशिरा नक्षत्र के बीतने में अब बहुत कम समय है. रोहिणी के आते-आते तुम दोनों स्वयं ही अपने समय और युग में पहुंच जाओगे. अब तुम दोनों जाकर पूजा करो."

समीर और सरिता ने महादेवीजी की मूर्ति पर फूल चढ़ाये और आंखें बंद करके स्तुति करते रहे. जब पूजा समाप्त करके समीर और सरिता बाहर आये, तब तक सभी कुछ बदल चुका था. मंदिर का भवन एकाएक पुराना हो गया था, चारों और झाड़ झंखाड़ उग आये थे और उस पूरे इलाके में दूर-दूर तक कोई भी व्यक्ति नजर नहीं आ रहा था. वह मेला, वह भीड़, सभी कुछ, लुप्त हो चुके थे. एकाएक काफी लंबा समय बीत गया था वहां.

"समीर," सरिता दुखी स्वर में बोली, "वह सब कुछ बदल गया. कहां वह चहल-पहल, वह उत्सव, वह मेला, और कहां ये उजाड़ खंड."

समीर भी दुखी था, पर वह चुप ही रहा. □

● चित्रलेखा, महानगर, लखनऊ

(राजपाल एंड संस, दिल्ली द्वारा शीघ्र प्रकाश्य उपन्यास का एक अंश)

लघुकथा

प्यास

▣ दिनेश बैजल राज

गरमी की दोपहर थी. सूरज अंगारे बरसा रहा था. धरती तप रही थी. सड़क के किनारे एक पेड़ की छांव में नट के परिवार ने पड़ाव डाल रखा था. गरमी और प्यास से बेहाल होकर बच्चा पानी मांगने लगा. सिलवर के कटोरे में रखे पानी को बच्चे ने मां से लेकर एक ही सांस में पी लिया. नट की लड़की भी प्यास से परेशान थी. वह दूर सड़क पर लगे चुंगी के नल पर पानी की आस में कटोरा लेकर जा पहुंची, टोंटी घुमायी लेकिन पानी नदारद था. निराश मन से उसने पपड़ाये सूखे होंठों में एकबारगी जीभ फिरायी और एक आह खींचते हुए निढ़ाल-सी वह चारों ओर घूमकर पानी के लिए अपनी दृष्टि घुमाने लगी, मानो रेगिस्तान में कोई प्यासी हिरनी डबडबायी आंखों से पानी को ढूंढ़ रही हो. तारकोल की सड़क पर नंगे पैर लड़खड़ाती वह पास ही किसी हत्थेदार नल या कुएं की तलाश में और आगे चल दी.

मैं अपने मकान की खिड़की से यंत्रवत् उस प्यास की मारी हिरनी को एकटक देखे जा रहा था. निराश मन से जब वह बिना पानी लिए लौटने लगी तो मैं दरवाजे को खोलकर, पानी से भरे हुए जग को अपने हाथों में उठाये उसके वापस वहां से गुजरने का इंतजार करने लगा.

कुछ क्षण पश्चात गुजरते हुए उसने मुझे पानी का जग लिए दरवाजे पर खड़े देखा, तो वह पास आकर आशा मिश्रित गिड़गिड़ाहट के स्वर में बोली, "बाबू! पीने को कुछ पानी. . .!" आगे के शब्द उसके गले में फंसे रहे गये. मैंने बिना कुछ कहे शीघ्र ही उसके कटोरे को पानी से भर दिया. उसने एक ही सांस में भरा कटोरा खाली कर दिया और तृप्ति के बाद कटोरा पुनः मेरे सामने कर दिया. मैंने उसे और पानी दिया. जब वह कटोरा भरकर चलने को हुई तो मैंने उससे पूछा, "इतनी आग में भी तुम नंगे पैरों कैसे चल लेती हो? क्या तुम्हारे पैर नहीं जलते?"

"बाबू! पेट की आग के सामने पैरों की आग महसूस ही नहीं होती." यह कहकर नट लड़की ने खरे शब्दों में एक कटु यथार्थ को उगल दिया था. □

● राज प्रिंटिंग प्रेस, शिकोहाबाद-205135 (उ. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले बूढ़े का मानना था कि जीवन का अर्थ सिर्फ शून्य है... और दूसरे बूढ़े का मानना था कि जीवन नदी की तरह बहता भरा-पूरा है, बहुत कुछ है इसमें. दोनों के पास अपनी-अपनी मान्यता के अकाट्य तर्क थे... प्रस्तुत हैं दोनों के तर्क ...अब आप ही तय कीजिए कि आपकी दृष्टि में जीवन है क्या....?

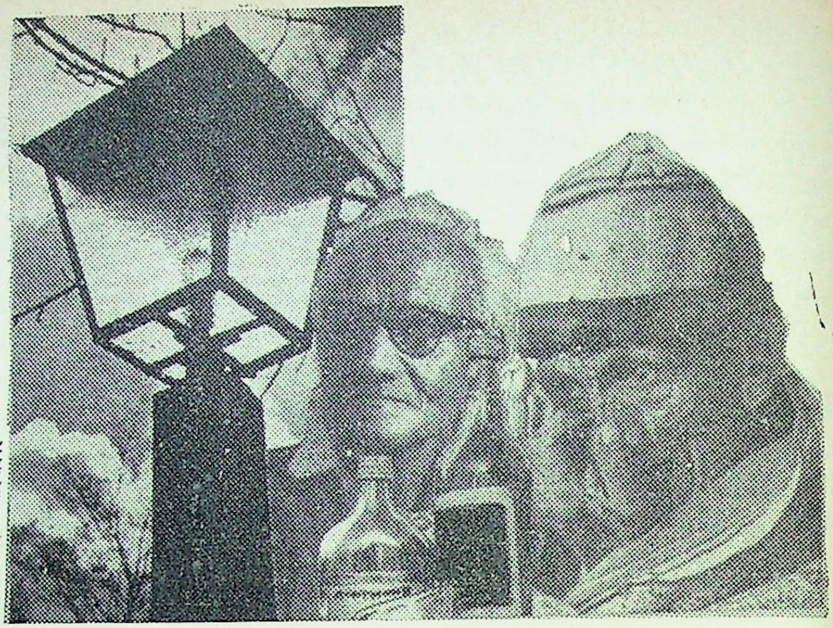
छाया एवं कोलाज : धर्मवीर अपनेर

दो बूढ़े

▫ प्रियंवद

वह एक तूफानी रात की बात है. तूफानी इसलिए कि उस रात पीटर के शराबखाने की टीन की छतें बुरी तरह खड़खड़ा रही थीं. उन पर गिरती तेज पानी की बूंदें और हवा की पागल दौड़ से पूरा शराबखाना कांप रहा था. लकड़ी के खंभों पर टिका छोटी-मोटी लकड़ी की मेज-कुर्सियों से भरा पीटर का शराबखाना शहर से दूर लेकिन शहर के अंदर ही था. ज्यादातर वहां उस सड़क से गुजरने वाले ट्रकों के ड्राइवर ही आते थे. लेकिन जिस रात की बात है उस रात पूरे शराबखाने में सिर्फ दो बूढ़े थे. एक लकड़ी की मेज के दोनों तरफ बैठे हुए. पीटर काउंटर पर बैठा ऊंघ रहा था. उसके होंठ कांप रहे थे. लगता था कि वह कोई प्रार्थना बुदबुदा रहा है. जिससे यह तूफान थम जाये और उसके शराबखाने के गिरने की सारी संभावनाएं खत्म हो जाएं. एक कोने में वेटरनुमा लड़का बैठा बदहवास आंखों से शीशे के बाहर देख रहा था. शायद जिंदगी में पहली बार उसने आसमान से बरसती यह भयानक बारिश देखी थी. दोनों बूढ़ों के गिलास भरे थे. उनमें से एक के मूंछें थीं और शरीर बिल्कुल गठा हुआ था. वह जरूर कभी फौलादी जिस्म का रहा होगा जो अब पिचकने लगा था. दूसरे बूढ़े ने हाथों में दस्ताने पहन रक्खे थे और वह एक कमजोर बूढ़ा था.

"मैं आपकी बात नहीं मानता," दस्तानेवाला बूढ़ा कह रहा था.

"क्या... कौन-सी बात?"

"यही... जीवन के लिए आपका दृष्टिकोण... मैं नहीं मानता कि जीवन का अर्थ सिर्फ शून्य है."

"फिर... फिर क्या मानते हैं आप?" मूंछवाले ने पूछा.

"मैं जीवन को बहुत आस्था के साथ देखता हूं.. भरा-पूरा नदी की तरह बहता... बहुत कुछ है इसमें."

"छोड़िए... मैं जीवन की अर्थहीनता एक मिनट में साबित कर सकता हूं... खुद अपने भोगे हुए जीवन से."

"आप ऐसा नहीं कर पायेंगे." दस्तानेवाला मुस्कराया. "आप यह साबित नहीं कर सकते... आखिर आपने इतनी बड़ी उमर क्या शून्य में बिता दी, बिना इससे कुछ हासिल किये हुए."

"यही है महाशय." मूंछवाला बूढ़ा बोला. "आप अगर चाहें तो मैं आपको अपनी कहानी सुना सकता हूं."

"मैं जरूर चाहूंगा." दस्तानेवाले ने कहा, "यह भयानक तूफान नहीं रुकेगा... यहां कोई और है भी नहीं... मुझे खुशी होगी अगर मैं आपकी कहानी सुनूंगा और फिर यह साबित कर पाऊंगा कि आप गलत हैं."

"अच्छा रुकिए फिर ... मैं जरा एक बोतल और मंगवा लूं." मूंछोंवाले ने लड़के को ठोंका. लड़का उठा और उसने रम की एक आधी बोतल लाकर रख दी और फिर वैसे ही बैठ गया. पीटर ने काउंटर से एक बार सिर उठाकर उनको देखा और फिर वापस कुर्सी में धंस गया.

"मैं जब छोटा था तो गरीब था. मुझे अपने पूरे बचपन की सिर्फ एक बात याद है .. या आप कह सकते हैं कि मैंने सिर्फ उस एक बात को ही याद रक्खा है. जब मैं बड़ा हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना कि आदमी और औरत के बीच फर्क को समझने लगूं, तभी मैंने इस बात को समझा था. मेरा बाप शहर में नौकरी करता था और साल में एक बार घर आता था. मेरी मां गांव के छोटे-मोटे काम करके कुछ कमा लेती थी और कुछ हर महीने बाप भेज देता था. मैंने तभी यह देखा कि मेरा बाप जब भी छुट्टियों में घर आता और फिर जब वापस जाता, उसी के कुछ दिन बाद मेरी मां का पेट फूलने लगता. मैं अपने मां-बाप का पहला लड़का था. उसके बाद दो बच्चे और थे. एक छोटे से कमरे में हम सब रात को सोते थे. हर रात में देखता कि मेरा बाप मेरी मां के बिस्तर में घुसकर उसको नोचता-खसोटता है. बिल्कुल मेरे बिस्तर के पास ही. अजीब-अजीब बेहूदा-सी आवाजों के साथ. मैं चुपचाप दम साधे पड़ा रहता तब. कभी-कभी चुपचाप आंख खोलकर देखता तो अंधेरे में कुछ नहीं दिखता सिवाय मां के नंगे जिस्म के. मेरा पूरा बदन एक लिजलिजाहट से भर जाता. वह पूरा वक्त जब मैं पूरी तरह होश में होता लेकिन बेहोश पड़ा रहता.

"जब मैं थोड़ा और बड़ा हुआ तो एक दिन बाप आया और पता लगा कि अब वह वापस नहीं जायेगा. उसकी नौकरी छूट गयी है. मां उस रात बहुत रोयी थी. . . लेकिन फिर उस रात भी उसी तरह मां और बाप ने. . .

"मैंने उस रात महसूस किया कि यह सब जो मेरे चारों ओर है. मेरा गला घोंट देगा और अब यह रोज होगा. . पहले की तरह दो-चार दिन नहीं. . . हर रात मुझे यह सहना होगा. . . एक काल खंड जो भट्ठी की तरह मुझे सुलगाता है. सुबह होने पर मैं अपनी मां की ओर आंख उठा कर भी नहीं देखता और बाप मुझ किसी भूखे जानवर की तरह लगता. मुझे लगता कि इस तरह मैं पागल हो जाऊंगा. . . और फिर एक दिन मैंने घर ही छोड़ दिया और एक अंग्रेज फौजी के यहां दूर शहर में नौकरी कर ली. दिनभर उसके घर का काम करता. वह खुश रहता मुझसे. सात साल रहा मैं वहां. उसके बाद उसने मुझे फौज में भरती करवा दिया और मैं उसको छोड़कर चला गया. फौज की जिंदगी मुझे कुछ दिन बहुत अच्छी लगी. मैं मेहनत करता, जमकर खाता और सोता. मुझे लगने लगा कि आदमी वाकई बहुत अच्छी चीज है. साथी दोस्त सब बड़े प्यारे लगते. . साथ में शराब पीना-खाना और लड़ाई का अभ्यास करना. दूसरी बड़ी लड़ाई मैं लड़ा, कई मुल्कों में इधर-उधर घूमा. मैं आपको बताता हूं महाशय, मैंने दुनिया की हर शराब और हर तरह की औरत को चखा है और इसी नतीजे पर पहुंचा हूं कि दुनिया की सारी शराबों का नशा एक ही तरह से चढ़ता है और सारी औरतों का स्वाद एक जैसा होता है.

"फिर एक दिन बर्मा के जंगलों में मैं और मेरे करीब सात साथी भटक गये. . . भूख प्यास से निढाल नौ दिन हम जंगलों में सर मारते रहे. . . हमारे पास जो कुछ भी था धीरे-धीरे खत्म हो गया. . . हम सबकी आंखों में एक दहशत और चेहरे पर उदासी थी. . .हम पूरे दिन किसी से बात नहीं करते . . . चुपचाप एक कोने में पड़े रहते. . .फिर चलते, फिर गिरकर कहीं पसर जाते. उसी दिन एक रात जब मैं आंखें मूंदे लेटा था, मैंने अपने पास एक फुसफुसाहट सुनी. . .कोई जानवर जैसे हांफ रहा हो. घबड़ाकर मैं उठ बैठा. देखा तो मेरा एक साथी बिल्कुल बेहोश-सा मेरे पास पड़ा बुदबुदा रहा था. मैं उसके चेहरे पर झुक गया. उसका चेहरा पूरी तरह पीला हो चुका था. उसने मेरे पैर पकड़ लिये, 'मुझे बचा लो वरना वे सब मुझे मार डालेंगे.'

'कौन?' मैंने चकित होकर पूछा.

'यही. . मेरे दोस्त. . . अगर इनको दो दिन खाने को और नहीं मिला तो ये मुझे मारकर मेरा मांस खायेंगे. . .मैं ही सबसे कमजोर हूं और ऐसे भी सबसे पहले मरूंगा.'

"उसकी आंखें बाहर निकली आ रही थीं. आतंक से वह बिल्कुल जम गया था. मेरे पूरे बदन में एक झुरझुरी दौड़ गयी. उसकी बात पर मुझे यकीन नहीं हुआ. मैंने उसको सांत्वना दी और अपने पास सुलाया. सुबह होने पर मैंने देखा वह मुझसे चिपका-चिपका घूम रहा था और मेरे साथियों की आंखों में एक वहशियाना अंदाज था. मुझे यकीन होने लगा कि वह सच कह रहा था. एक घबड़ाये चौकन्ने कुत्ते की तरह वह कांप रहा था. मैंने तय कर लिया कि उसको अकेला नहीं छोड़ूंगा. मेरे साथी शायद इस बात को समझ गये थे. उनमें से दो ने मुझसे वही बात कही जो उसने कही थी. . . मैंने थूक दिया उनके चेहरे पर घृणा से. . .इतना गिर सकते हो तुम!

ग़ज़ल

▣ हरजीत सिंह

रेत बनकर ही वो हर रोज बिखर जाता है
चंद गुस्ताख हवाओं से जो डर जाता है.

इन पहाड़ों से उतरकर ही मिलेगी बस्ती
राज ये जिसको पता है वो उतर जाता है.

बादलों ने जो किया बंद सभी रस्तों को
देखना है कि धुआं उठके किधर जाता है.

लोग सदियों से किनारे पे रुके रहते हैं
कोई होता है जो दरिया के उधर जाता है.

घर की इक नींव को भरने में जिसे उम्र लगे
जब वो दीवार उठाता है तो मर जाता है.

रात वो गश्त पे था कत्ल भी देखा उसने
कुछ भी कहने से मगर अब वो मुकर जाता है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप जीवन की बात करते हैं महाशय. . . वह रात जब वह आदमी बदहवास कुत्ते की तरह मेरे पैरों पर पड़ा था. . मैंने उस रात से ज्यादा गिरा हुआ जीवन को कभी नहीं देखा. दुनिया को किसी भी चीज से ज्यादा गंदा और घृणित. . . और मेरे साथियों का जो विचार था उसने मुझे इंसानियत से विश्वास हटा लेने को मजबूर कर दिया. मैं सोचने लगा था कि जिंदगी में आदमी साथी सब अच्छी चीज हैं लेकिन उस दिन मैंने देखा कि इंसान से ज्यादा खतरनाक और दोगला जानवर दुनिया में कोई नहीं है. आप जीवन में अर्थ की बात करते हैं और मैं कहता हूं कि आपने इस तरह कभी जीवन को उसके घृणिततम रूप में इतने पास से देखा हो तो आप जीवन के एक क्षण का भी विश्वास नहीं करेंगे. रिश्तों की गरमाहट के बाद यह यकीन ही जिंदगी की बड़ी चीज होती है और अफसोस है कि मैंने उसको भी बहुत गंदे और घिनोने रूप में बिल्कुल नंगा देखा. . अपनी मां की तरह. . .

"आप बोर तो नहीं हो रहे हैं?" मूंछोंवाले ने मुस्करा-कर पूछा.

"नहीं. बिल्कुल नहीं. . . बल्कि बेहद दिलचस्पी से सुन रहा हूं मैं." दस्तानेवाला हल्का-सा कांपता हुआ बोला.

"हां," मूंछवाला फिर सीधा होकर बठ गया. प्लेट से उसने मांस का टुकड़ा उठाकर मुंह में रखा, "मेरे अंदर अचानक अपने घर गांव और लोगों के लिए प्यार जाग आया. पूरे सत्रह साल बाद मैं अपने गांव लौटा. मेरा बाप मर चुका था. मां बूढ़ी हो गयी थी और दो छोटे भाई थे जो अब जवान होकर खेतों में काम करते थे. मुझे देखकर मां पागल हो गयी. मेरी छाती पर बुरी तरह घूंसे मार-मारकर गालियां देती रही वह. फिर मुझे चिपकाकर रोते हुए न जाने क्या-क्या सुनाती रही. मैंने देखा कि मैं अपने बचपन की बात बिलकुल नहीं भूला. जितनी देर मां मुझे चिपकाये बड़-बड़ाती रही, मेरी आंखों के सामने वही रात घूमती रही. वैसे मुझे यह देखकर बड़ी राहत थी कि मेरा बाप मर चुका था, दोनों छोटे भाई एक कोने में खड़े मुझे हैरानी से देख रहे थे. शायद वह खुश थे मेरे आने से. शायद उनको उम्मीद थी कि मैं उनके काम में हाथ बटाऊंगा कुछ. उन दोनों की औरतें भी थीं. . . मजबूत और कसे बदन की. और दोनों के बच्चे भी थे, जो मुझे एक तमाशे की तरह देख रहे थे. आस-पास के घरों के लोग भी थे और वे सब मेरे आने से मेरी मां के बुढ़ापे को सुधर गया मान रहे थे. मुझे लगा कि अब मेरा घर. . .मेरे आस-पास बहुत कुछ बदल गया है. मैं फौज में था यह सुनकर सबको बड़ी हैरत हुई. अजीब निगाहों से वे मुझे देख रहे थे. दूसरी बड़ी लड़ाई खत्म हुई थी और अंग्रेजों के जीत जाने से मुझे एक बहादुर और जवान आदमी का सम्मान मिला था. मेरी मां मेरा बदन छू-छू कर सबको दिखाती थी. लोग खुश थे कि उनके गांव में भी एक ऐसा आदमी है जो बहादुरी के साथ लड़ा.

"यह वे दिन थे जब देश में आजादी की बात करीब-करीब पक्की हो गयी थी. उसी में चलते-फिरते जमींदारों के खत्म होने की बात भी थी. हमारे गांव का जमींदार बहुत बड़ा था. आस-पास के दस गांव उसके इलाके में थे. उसके बुलाने पर मैं उसके पास गया. मुझे देखकर उसने बड़ी खुशी जाहिर की. मेरे बाप के बारे में बातें करता रहा कि किस तरह वह उसका वफादार था और उसी तरह मुझे उसका वफादार होना चाहिए. वह मुझे अपने पास काम में रखना चाहता था. मेरे मजबूत जिस्म और फौज में मेरे हाथ से हुए कत्लों को सुनकर ही उसने मुझे बुलाया था. मुझे उसकी नौकरी में कोई खराबी नहीं दिखी. . .बल्कि मुझे गांव में अच्छा-खासा रुआब होता दिखाई दे रहा था. उसने मुझे अपने सौ बीघे की खेती का इंचार्ज बना दिया जहां गांव के आदमी काम करते थे. मैं तैयार हो गया. यह उन दिनों की बात है महाशय जब मैं फौज की अकेली और दरिंदगी से भरी जिंदगी से अलग एक समाज, एक गांव में आया था और मुझे लग रहा था कि एक निश्चित आधार मिलेगा जीवन को! परिवार. . .समाज. . . देश, सामाजिक न्याय. . .सुरक्षा और जीवन का अस्तित्व. इन सब से जुड़ा हुआ मैं एक निश्चित जीवन जी सकूंगा. . .उस समाज में जहां आदमी के होने का महत्त्व होगा. . उसके सुख-दुख का, उसके सपनों का भी. मुझे अचानक लगने लगा था कि जीवन को अगर सही ढंग से जिया जाये तो वह शायद इतना खराब नहीं है. इसके अलावा उन दिनों अपने राज्य की बातें. . गुलामी से दूर एक नया जीवन. . . आदमी को अचानक ऊपर बहुत, ऊपर ले जाने की कल्पना, इन सबका भी असर था. एक नयी दुनिया सामने खुलती दिखाई दे रही थी, जहां जीवन सोने की तरह चमक रहा था.

"मैं जल्दी ही उसके खेतों का काम संभालने की सोचने

लघुकथा

चोर

▣ दिविक रमेश

सुबह कुछ ज्यादा ही जल्दी उठ गया था. जल्दी उठना मेरी आदत में शुमार नहीं है. सोचा थोड़ा टहल ही आऊं. बाहर आया तो देखा मैले-कुचैले कपड़े पहने एक लड़की कूड़ेदान में हाथ मार रही थी. पीठ पर बंधी बोरी में काफी कुछ इकट्ठा भी कर चुकी थी. मैंने थोड़ा डपटते हुए पूछा, "ऐ! क्या कर रही है?" लड़की का हाथ थोड़ा सहमा. पर दूसरे ही क्षण मुंह उठाकर मुझे देखने लगी. काफी तीखे नयन-नक्श थे. उम्र भी सतरह-अठारह जरूर थी. मैंने अपना सवाल दोहराया तो उसने हाथ में दबोचे हुए कुछ कागज के टुकड़े दिखाए और कहा, "ये बटोर रही हूं बाबू."

"हूं! मैं सब समझता हूं. तुम लोग गंदे कागज बटोरने की आड़ में लोगों की चीजें चुराती हो." मैंने बोलते-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलते कनखियों से देखा उसके वक्ष काफी उभरे हुए थे.

"आप तलाशी ले सकते हैं बाबू. हम कोई चोर-उच्चके नहीं हैं. चोर-उच्चके होते तो ये कागज की चिंदियां बटोरते, यूं लोगों के गंद में मुंह न मारते फिरते." उसने लुगड़ी ठीक करते हुए आत्मविश्वास के साथ कहा.

"लेकिन यहां आंगन में कई चीजें पड़ी रहती हैं. लोगों की नींद का फायदा उठाकर तुम उन्हें लेकर चंपत भी तो हो सकती हो. कौन चोर है, कौन साधु है, यह क्या माथे पर लिखा होता है!" मैंने अपनी बात को ऊपर रखने की गरज से कहा. मैं कसम खाकर कह सकता हूं. मैले-कुचैले कपड़ों के बीच से भी उसका गठा हुआ यौवन हिलकोरे मार रहा था. और उससे किसी का भी नजरें हटा पाना मुश्किल होता.

लड़की ने हल्की-सी मुस्कान भरी और तीखी जुबान में कहा, "हां बाबू! माथे पर तो किसके लिखा होता है? फिर भी गौर से देखो तो उसकी नीयत का पता चल ही जाता है."

लड़की रुकी नहीं.

मैं काफी देर तक रुका रहा था—शायद. □

लगा. मुझसे पहले जो वहां काम देखता था वह कुछ दिन मेरे साथ रहा. . . मुझे बताने के लिए. वह अपने साथ एक कोड़ा रखता था और चार लठैत उसके साथ हर वक्त चलते थे. . . उसने मुझे भी सलाह दी कि मुझे अपने साथ कोड़ा रखना चाहिए. बात-बात पर वह आदमियों के ऊपर कोड़ा झटकारता. नंगे बदन, बिल्कुल सूखे जिस्मोंवाले आदमी-औरतें. . .न जाने कहां-कहां से पकड़कर लाये जाते थे. मैं हैरानी से देखता कि जिसको वे लोग पकड़ लाते, फिर वह कहीं नहीं जाता. सारा दिन काम करने के बाद एक बाड़े जैसी जगह में सबको बंद कर दिया जाता. वहीं उनको खाने को दिया जाता. . . इतना कि वे मर न सकें. बावजूद इसके भी लोग मरते थे. उनकी लाश को उठाकर दूर कहीं एक कोने में फेंक दिया जाता. कभी कोई अपनी आवाज ऊंची करता तो उसके बदन पर कोड़े गिरने की आवाजें मीलों दूर सुनाई देतीं. हड्डी से लिपटे सूखे लटके काले गोश्त के पुतले. . . गड्ढों में धंसी आंखें. . कांपते पांव. बेहद कमजोर और हांफते हुए सुबह एक लाइन बनाकर खेतों तक ले जाये जाते और शाम को वैसे ही वापस होते. आदमी के नाम पर जिंदा रहते हुए मांस के जानदार लोथड़े. मैं हैरान हो गया देखकर. यह कौन-सी आजादी आ रही है. . . यह कौन-सा समाज है जहां किसी को आस्था के साथ जीना चाहिए. . . . न्याय, सुरक्षा और आदमी होने का गौरव सब कहां है? एक दूसरे को भूखे जानवरों की तरह नोचते, भभोड़ते इंसानों की यह दुनिया कभी खत्म नहीं होगी. कोई भी आजादी इनको मुक्ति नहीं दे सकती. एक बार फिर मुझे लगा कि जीवन ने मुझे धोखा दिया है. . . बेहद खोखला और वीभत्स जीवन. मैं कभी स्वयं को उन आदमियों की जगह रखकर देखता तो मुझे लगता कि मुझे उसी क्षण मर जाना चाहिए. यह देह. . . यह जीवन का नाम सब अभिशाप है. . . एक शून्य में जीने का अभिशाप बस. मैंने जमींदार की नौकरी छोड़ दी और वह गांव भी. मैं फिर भाग कर वापस शहर आ गया. यहां इसी जगह.

"हां. . . इसके बाद कोई विशेष बात नहीं है. मैं यहां इस शहर में आ गया और छोटी-सी बेकरी की दूकान कर ली. एक मजबूत जवान औरत से शादी भी की. . .इस उम्मीद से कि शाम को घर आने पर बढ़िया गर्म खाना मिलेगा और जिंदगी की जरूरतें भी पूरी होती रहेंगी. वह मुझे बच्चे देगी जो बुढ़ापे में मेरी मदद करेंगे. लेकिन दो साल बाद वह औरत मुझे छोड़कर भाग गयी. वह आखिरी दिन था जब मुझे कोई दुख हुआ. उस दिन के बाद से मैंने जीवन में कुछ भी अपेक्षा करना छोड़ दिया. . . उस दिन के बाद से मुझे कोई दुख भी नहीं हुआ. . . उस दिन के बाद से आज तक मैं बिल्कुल अकेला और सपाट जी रहा हूं. बिना किसी वजह के और बिना किसी सहारे के. आप कह सकते हैं कि मुझे मर जाना चाहिए लेकिन मैं आत्महत्या नहीं कर सकता. . . शायद मैं कायर हूं इसलिए. लेकिन आप यह निश्चित समझ लीजिए कि मैं जीवन को किसी आशा से नहीं जी रहा हूं. . . उसमें से कुछ देखना भी नहीं चाहता. मेरा पूरा यकीन है कि जीवन सिर्फ शून्य है. . . हवा की पतली दीवारों से घिरा एक कमरा जिसमें हम सांस लेते हैं और जिसकी कोई भी दीवार हमें कभी सहारा नहीं दे सकती. मैं अपनी बात यहां पर खत्म करता हूं. . . आप जो चाहें नतीजा निकाल सकते हैं."

"मुझे दुख है आपकी बात सुनकर. . . सचमुच एक बुरा जीवन जिया है आपने. . लेकिन तब भी मैं यह नहीं कहूंगा कि जीवन ऐसा है." दस्तानेवाला मुस्कराया. मूंछवाले ने घूरा उसे.

"मैं सच कह रहा हूं. . . आप नाराज न हों. . .मैं जब अपने जीवन के बारे में सोचता हूं तो बिल्कुल उल्टा है सब. . . मेरे पास रिश्तों की गरमाहट भी है, विश्वास भी और एक मजबूत चट्टान आस्था की जिस पर पांव जमाकर मैं खड़ा हूं. . . इसीलिए मैं आपकी बात आसानी से नहीं मानूंगा. हो सकता है कि आपको मेरी बात समझ में नहीं आ रही हो लेकिन मुझे यकीन है जब मैं आपको अपनी पूरी कहानी सुनाऊंगा तो आप जीवन को दूसरी दृष्टि से भी देखेंगे. . .मेरे जीवन में उतना ज्यादा कुछ नहीं है जो आपके पास था. बहुत छोटी-सी बात है. अगर आप चाहें तो मैं सुना सकता हूं. . .बारिश रुकने से पहले ही मेरी बात खत्म हो जायेगी." दस्तानेवाले ने एक लंबी सांस ली.

"अवश्य." मूंछवाला मुस्कराया.

"पहले मैं आपको दिखाऊं कुछ," दस्तानेवाले ने अपने एक हाथ का दस्ताना खींचा. मूंछवाला एक झटके से सीधा हो गया. उसके पूरे बदन में सुरसुरी दौड़ गयी. उसके हाथ की उंगलियां जगह-जगह से कटी और छोटी थीं. . .सफेद बिल्कुल.

"यह कोढ़ है महाशय." दस्तानेवाले ने फिर अपने हाथ में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

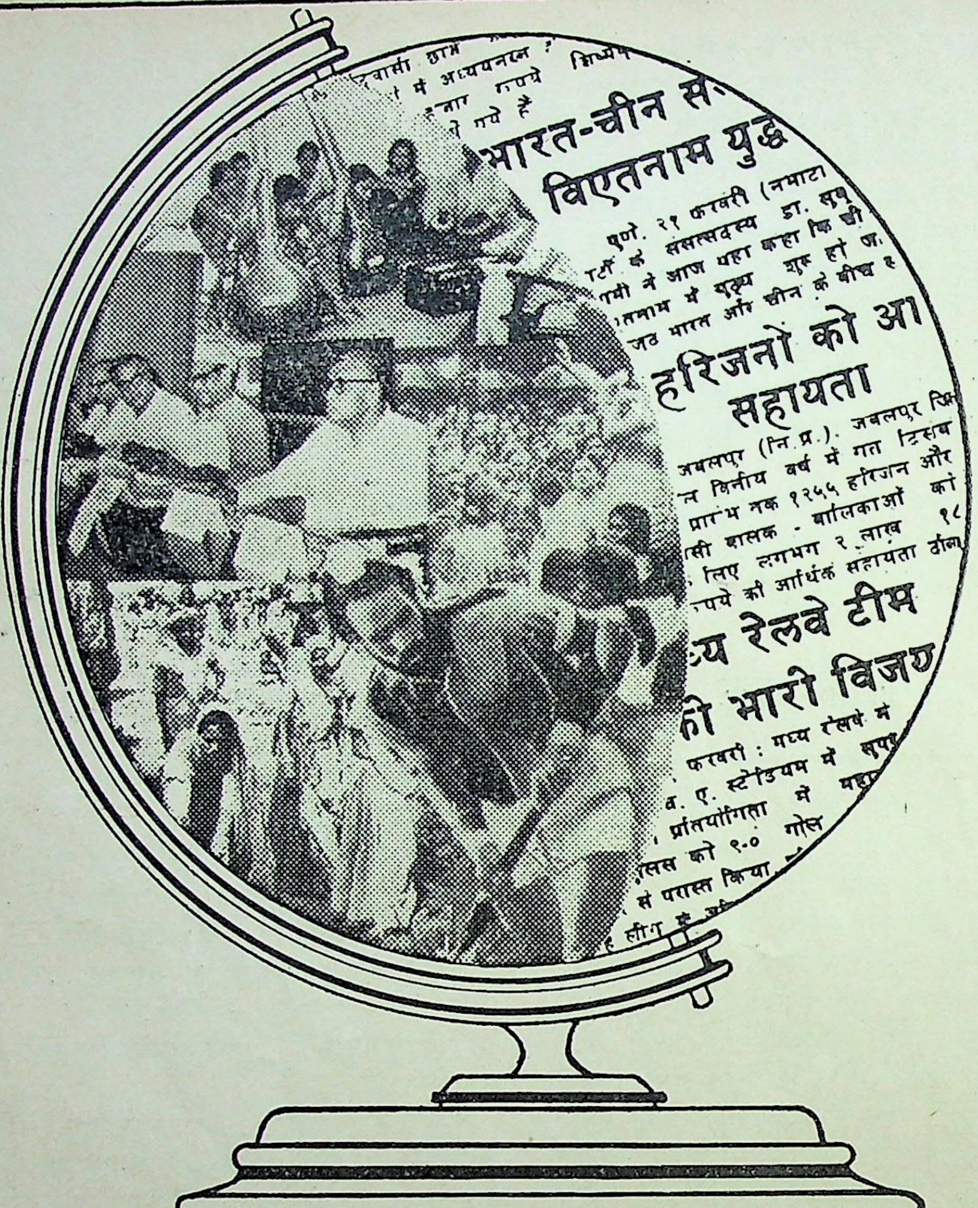

हर सुबह नयी दुनिया ... हर सुबह नये समाचार

राष्ट्रीय चेतना और भारतीय संस्कृति का संदेशवाहक हिन्दी दैनिक सर्वाधिक प्रसारित नवभारत टाइम्स—
देश विदेश के नवीनतम समाचारों और घटनाओं से अवगत रखने का प्रभावशाली साधन है. भारत के लोगों को निकटतम लाने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है
राजनीति, संस्कृति, समाज साहित्य, क्रीड़ा जगत, व्यापार-उद्योग आदि के बारे में तथ्यपूर्ण जानकारी और विश्लेषण प्रदान करता है. सुलझे हुए विचारों तथा सारगर्भित टिप्पणियों द्वारा जनमानस को उद्वेलित करने के साथ-साथ दिशाबोध देता है.
प्रत्येक रविवार को ज्ञानवर्धक, सुरुचिपूर्ण और मनोरंजक सामग्री. महिलाओं, युवाओं एवं बच्चों के लिए चार पृष्ठ का विशेष परिशिष्ट

नवभारत टाइम्स हिन्दी का सबसे लोकप्रिय और निष्पक्ष समाचारपत्र.

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन

TIMES ART

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस्ताना पहन लिया. "लेकिन आप घबड़ायें नहीं. . अब यह सूख चुका है बिल्कुल." मूंछवाले के चेहरे पर फिर धीरे-धीरे एक सहजता लौट आयी.

"यह दिखाना जरूरी था आपको." दस्तानेवाले ने भी रम का एक गिलास और बनाया. "अब सुनाता हूं मैं आपको." उसने धीरे-से एक बार मफलर को अपने कानों पर लपेटकर कसा और धीरे-धीरे बुदबुदाने लगा, "पहले मेरे हाथ में यह नहीं था. . .बहुत मजबूत और गठा हुआ हाथ था मेरा. इस हाथ पर फत्तो बिल्कुल फिदा थी. आप जानना चाहेंगे कि ऐसा क्यों था और फत्तो कौन थी. मैं आपको बिलकुल शुरू से सुनाता हूं सब. मैं इसी शहर के विसातखाने में बड़ा हुआ हूं. यानी नाचने-गानेवाली और रंडियों के मौहल्ले में.

"जीवन जैसा तब था वैसा ही आज. मैं एक बूढ़ी खाला के यहां रहता था. . .अनाथ था. उसी के यहां आने-जाने वालों की खिदमत करता था. . बाहर से सामान ला देता और बखशीश मिल जाती. फत्तो उसी खाला की बहन की लड़की थी. मैं आपको बता नहीं सकता महाशय कि फत्तो कितनी खूबसूरत थी. मेरी खुद समझ में नहीं आता था कि ऐसा क्यों है. एक रात मैंने हिम्मत करके फत्तो को छत पर पकड़ लिया. 'तुम इत्ती खूबसूरत काहे को हो?' कलाई छुड़ाकर भाग गयी थी वह. उसकी चूड़ियों के टूटे टुकड़े आज भी मेरे पास हैं. बस जब फत्तो मिलती उससे यही बात पूछता, 'तुम इत्ती खूबसूरत काहे को हो?' पहले वह हंसती थी मेरी बात पर फिर धीरे-धीरे रोने लगी. आप समझ ही सकते हैं क्यों. वक्त बीतता गया और मैं उसी चबूतरे पर पड़ा रहता. धीरे-धीरे फत्तो ने नाचना-गाना शुरू कर दिया. . .उसका नाम बढ़ने लगा. मैं चाहता था कि फत्तो से शादी कर लूं या भाग जाऊं उसको लेकर. लेकिन फत्तो ऐसा नहीं कर सकती थी. अपनी बूढ़ी खाला को वह छोड़ नहीं सकती थी. . .बहुत एहसान मानती थी उसका. इसके अलावा मैं खुद भी जानता था कि फत्तो को लेकर मैं कहीं भी जाऊंगा उसको सुख नहीं दे पाऊंगा.

"इसी हाथ से मैंने फत्तो की कलाई पकड़ी थी और उन दिनों फत्तो हर रात सोने से पहले मेरे इस हाथ की उंगलियां चूमती थी. मैं आपको बता नहीं सकता कि हम दोनों में कितनी मोहब्बत थी. मैं फत्तो को अपनी गोद में बैठा कर दुलारता.

'आज बता दो तुम इत्ती खूबसूरत काहे को हो?'

'धत्त. . . रोज वही बात.' फत्तो कहती थी.

'एक ठो बच्चा दो हमें.' मैं उसे पुचकारता.

'काहे?' फत्तो पूछती थी.

'अब अच्छा नहीं लगता फत्तो,' मैं उदास हो जाता, 'बस सारी जिंदगी उसको देखकर काट दूंगा.' फत्तो तब एक ही बात कहती, 'यह नहीं होने का. . . इस नरक में फत्तो यह नहीं करने की. . . किसी की आत्मा को जिस्म में बांधकर यहां नहीं सड़ायेगी.'

"मैं उसके दुख को समझता था. मैंने फिर कुछ भी कहना छोड़ दिया. . . लेकिन फत्तो अपना धर्म वैसे ही निभाती . . . हर रात मेरे हाथ की उंगलियां चूमकर. फिर धीरे-धीरे एक दिन मेरे हाथ में धब्बे पड़ने लगे. मैंने देखा कि कोढ़ हो रहा था. . . बहुत इलाज कराया तब. . . लेकिन कुछ नहीं हुआ. फत्तो ने कोई पीर-बाबा, मजार-मंदिर नहीं छोड़ा जहां उसने सर न टेका हो. . .

"आप अभी मेरे हाथ को देखकर कांप गये थे, अब जबकि यह सूख गया है . . . लेकिन जब यह बहता था तब भी फत्तो ने कोई दिन ऐसा नहीं छोड़ा जब उसने मेरी उंगलियां नहीं चूमी हों. उस वक्त आप मेरी उंगलियों की तरफ देख भी नहीं सकते थे. इस कदर बहती थीं. मैं फत्तो को मना करता, कहता, 'मत छुओ यह कोढ़ है.' लेकिन फत्तो कहती वही बात, 'तुमने इन्हीं उंगलियों से फत्तो को जन्नत बख्शी है . . . फत्तो की खुदा हैं यह . . . ' आप जीवन में शून्य की बात करते हैं. मैं आपसे पूछता हूं कि जिसको यह विश्वास मिला हो. . . फत्तो ऐसा. . . क्या वह कभी कह सकता है कि जीवन में कुछ नहीं है. रिश्तों की गरमाहट. . . आस्था और किसी के लिये अपने होने का महत्व. . . जीवन का और इससे बड़ा क्या अर्थ होगा? आप सोच नहीं सकते फत्तो की उन आंखों के बारे में जो हर वक्त पानी भरे कड़ाहे-सी उबलती रहती थीं. मैं बस अपनी बात खत्म करता हूं. फत्तो के अलावा मेरे जीवन में और कोई खास बात नहीं है. खैराती अस्पताल में बूढ़ी होकर फत्तो मरी. मैंने उसे हर क्षण मरते हुए देखा लेकिन जो वह दे गयी वह जिसे मिलता है उसका जीवन सार्थक है. . . उससे बड़ा जीवन का सुख और किसने भोगा है?" दस्तानेवाले ने गिलास खाली करके रख दिया और प्लेट से टुकड़े उठाकर चबाने लगा. मूंछवाला बूढ़ा कुछ गंभीर हो गया था, "सच आपकी कहानी से यह नहीं लगता कि जीवन में कुछ नहीं है. . . आपको तो एक ही जगह सब मिल गया . . . लेकिन मेरी बात. . . जो मैंने भोगा?"

"हां." दस्तानेवाला धीरे से हंसा, "हम शायद किसी नतीजे पर पहुंच सकते हैं और बारिश भी बंद हो गयी है."

मूंछवाले ने सर घुमाकर देखा, बारिश सचमुच बंद हो गयी थी. "हम यह कह सकते हैं कि जीवन का आपका दृष्टिकोण भी सही है और मेरा भी."

"मैं समझा नहीं," मूंछवाले ने कहा.

"इससे यह सिद्ध होता है कि जीवन क्या है इसकी स्वतंत्र परिभाषा नहीं हो सकती. . . जीवन सिर्फ संदर्भों में व्याख्यायित हो सकता है. . . जिसने जैसा भोगा उसके लिए वैसा ही जीवन. . . एक के जीवन का अर्थ दूसरे पर आरोपित नहीं किया जा सकता. सबका अपना जीवन है और सबके जीवन का उतना ही समान महत्व. जो जैसा भोग लेता है उसके लिये जीवन वैसा ही होता है. शायद यही सत्य है."

"शायद यही है." मूंछवाला बुदबुदाया, "आप सही नतीजे पर पहुंचे हैं. . . आज इस तूफानी बरसात में हमने एक खूबसूरत नतीजा निकाल लिया है." मूंछवाले ने हाथ बढ़ाकर दस्तानेवाले से मिलाया, "मैं अब जाना चाहूंगा." □

● 15/269, सिविल लाइंस, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुशी

हरिपाल त्यागी

एक शाम बाजार से होकर घूमते-घामते सुरेंद्र चौधरी घर लौट रहा था. चौराहा पार करते ही बाबा टाल-वाले की दुकान तक आते-आते उसके कदम ठिठक गये. उसकी नजर एक गट्टू पर जाकर ठहर गयी थी.

'निश्चय ही यह किसी पहाड़ी बबूल की गांठ है और किसी कुल्हाड़े के वार से छिटककर यहां इतनी दूर आ पड़ी होगी.' उसने सोचा और गौर से गट्टू को देखने लगा, 'कमाल है! ऐसी नायाब चीज यहां बेकार पड़ी है!'

सुरेंद्र ने वह गट्टू उठा लिया. और इसे चमत्कार ही कहेंगे कि कलाकार के हाथों का स्पर्श पाकर उस बेकार-सी लकड़ी ने खुद को एक सुंदर, कलात्मक शिल्प में बदल डाला.

'आदमी के पास विवेक है और उसकी आंखें खुली हैं तो वह उन वस्तुओं में भी कुछ न कुछ तलाश ही लेता है, जिन्हें बेकार समझकर फेंक दिया जाता है. लेकिन इस तलाश के पीछे जो दृष्टि काम करती है, उसे बाजार से तो खरीदा नहीं जा सकता. सचमुच, प्रकृति भी अपने आप में कितनी अद्भुत है! अद्भुत, कलात्मक और चमत्कारपूर्ण! बस, देखने के लिए चाहिए एक जोड़ा आंख. . .नहीं, एक जोड़ा ही नहीं, तीसरी आंख की भी जरूरत है. ज्ञान-चक्षु के बिना सब कुछ बेकार. . .सूना-सूना!' सुरेंद्र चौधरी सोच रहा था.

तभी उसे एक और कलाकार की याद आयी और याद आयी उसकी वह महान खोज, जिसे उसने 'दी हैड ऑफ बुल' नाम देकर लोगों को अचरज में डाल दिया था. वहां भी तो ऐसी ही सूक्ष्म दृष्टि थी, जिसने साइकिल की गद्दी से हैंडिल को जोड़कर बैल का चेहरा खोज निकाला! दुनिया में शायद ही कोई ऐसा आदमी हो, जिसने कभी साइकिल देखी या बरती न हो. लेकिन उसमें छुपे बैल के चेहरे को सिर्फ 'पिकासो' ही पकड़ पाया था.

कलाकार ने मन ही मन खुद को पिकासो के साथ रख कर देखा और गट्टू को हथेली पर जमा लिया. फिर सभी तरफ से उसे घुमा-फिराकर देखने लगा, 'अदभुत! बस, जरा इस तरफ मामूली काट-छांट की जरूरत है. . .और इधर से थोड़ा छील देने पर तो आकृति सचमुच ही बोलने लगेगी! लेकिन इसका आधार भी खूबसूरत ही होना चाहिए. खूबसूरत और सादा. . .गोल? नहीं, गोल नहीं चलेगा. कुछ न कुछ अनघड़पन तो उसमें भी होना ही चाहिए. . .वार्निश? चलेगा, लेकिन बहुत हलका. . .!'

दुनिया खुशी के पीछे पागलों की तरह दौड़ रही है. दौड़-दौड़कर दुखी हो रही है. कहीं रुकने का नाम तक नहीं लेती, जबकि खुशी यहां सड़क पर पड़ी थी. सुरेंद्र चौधरी ने खुशी को उठाकर पहले हथेली पर जमाया और फिर बगल में दबाकर चलने लगा. सड़क की भीड़भाड़, वाहनों की ठेलपेल और शोर-शराबे से बेखबर, गट्टू को बांह के नीचे दबाये वह घर की तरफ बढ़ रहा था. अतिरिक्त उत्साह के कारण उसके कदम तेज-तेज पड़ रहे थे. उसके जिस्म का हरेक हिस्सा गुनगुनाता-सा नजर आ रहा था. इस तरह खुशी में डूबे आदमी की टक्कर किसी वाहन से हो जाना कोई आश्चर्य की बात न होती. आश्चर्य तो यह था कि वह बिना एक भी रिक्शा से टकराये सही-सलामत घर पहुंच गया!

कमरे में घुसते ही उसने एक बार फिर गट्टू को बगल से निकालकर हथेली पर टिकाया और पत्नी को आवाज लगायी, "गीता! देखो, मैं तुम्हारे लिए क्या लेकर आया हूं. . . अरे भई, मेरा चाकू यहां से किधर चला गया?"

• पिकासो के 'द हैड ऑफ बुल' शिल्प की अनुकृति लेखक द्वारा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रसोई से चाकू लेकर कमरे में आते हुए पत्नी मुस्करायी लेकिन पति के हाथ में एक मुड़ी हुई बेढंगी लकड़ी देखकर उसकी आंखें सिकुड़ गयीं, "ये क्या उठा लाये?"

"तुम कुछ नहीं समझोगी गीता, तुम कुछ भी तो नहीं समझ सकोगी... लाओ, चाकू मुझे पकड़ाओ." उसने पत्नी की तरफ हाथ किया, पर न तो वह उसे मुसकराते देख पाया, न ही आंखें सिकोड़ते.

"आखिर इसका कुछ होगा भी?" नयी दुल्हन के लिए पति को समझ पाना कठिन हो रहा था...आज तो आंख उठाकर देखा तक नहीं. कोई मरता रहे सारा-सारा दिन इंतजार में, पर इन्हें क्या! अपने मौज-मजे में कोई कमी न आ जाये...अब लौटे हैं तो ये गोरखधंधा ले बैठे. हद हो गयी...अभी तो शादी को साल भी नहीं बीता, अभी से ये हाल है इनका तो आगे चलकर...हे भगवान, "क्या यही वह तोहफा है, जिसके लिए मुझे बुलाया जा रहा था?"

"तोहफा...यह शब्द तुम्हारी जबान से मेल नहीं खाता, मेरी रानी! इसका तो यही मतलब हुआ कि तुम्हें किसी की भावनाओं की जरा भी परवाह नहीं. चलो, यह छोड़ भी दें तो भी कला का सम्मान... कम से कम मेरे लिए ही सही...तुम्हें करना चाहिए. क्यों, क्या मैं गलत कह रहा हूं?" सुरेंद्र ने पल भर के लिए गीता पर नजर डाली और फिर लकड़ी छीलने में व्यस्त हो गया, "यह कोई मामूली चीज तो है नहीं, डालिंग! जरा मुझे काम पूरा कर लेने दो, तब देखना...हां, अगर एक-एक कप चाय हो जाये...तब तक मेरा काम भी पूरा हो जायेगा."

पत्नी आश्वस्त होकर उठ खड़ी हुई, "चलो मुंह से कोई तो बोल फूटा. कुछ कहा तो...बेबात की घबराहट भी ठीक नहीं और काम निबटाने पर शायद..." वह मुसकराती हुई रसोई की तरफ चली गयी.

काम कोई ज्यादा नहीं था, चीज ही ऐसी हाथ लगी थी कि विशेष कुछ करना-कराना नहीं पड़ा. गीता चौधरी अभी चाय लेकर लौटी भी नहीं थी कि सुरेंद्र चौधरी ने एक बार फिर उस चीज का निरीक्षण किया, जिसे अब गट्टू नहीं कहा जा सकता था. अपने महान शिल्प को शो-केस में सजाते हुए वह बुदबुदाया, 'ख़ामोश आवाज!' हां, यही नाम इसके लिए फिट बैठेगा. फिर वह दूर हटकर अलग-अलग कोणों से शिल्प को देखने लगा और इसी बीच दोनों हाथों में चाय थामे गीता ने कमरे में प्रवेश किया...

"ये तुम इधर से उधर नाचते-से क्यों घूम रहे हो? देखने के लिए सारी रात पड़ी है, फिर अगला दिन भी आयेगा. लेकिन तब तक चाय बनकर तीन बार ठंडी हो चुकी होगी. आखिर यह लकड़ी कहीं भागी तो नहीं जा रही."

"लकड़ी? कर दी न फिर वही जी जलाने वाली बात! क्या इसे अब भी लकड़ी ही कहा जायेगा?" चाय का घूंट लेते हुए कलाकार कह रहा था, "गीता! तुम भी बस... चलो, छोड़ो...मैं अपनी तरफ से झगड़े की पहल क्यों करूं?"

"आ-हा-हा-हा! पहल तुम क्यों करने लगे! तुम तो सिर्फ स्थितियां पैदा कर देते हो और मुझे मजबूरन...अच्छा, ये

ख़ुशी आखिर है क्या!...क्या इसे अकेले रहकर हासिल किया जा सकता है...! सुरेंद्र चौधरी जिस चीज के जरिए ख़ुशी हासिल करना चाह रहे थे, वही गीता चौधरी के लिए मुसीबत बन गयी थी...और फिर जिस रोज गीता चौधरी को अपनी ख़ुशी हासिल हुई... उस रोज सुरेंद्र चौधरी की ख़ुशी नदारद हो चुकी थी....

बताओ कि मैं करूं क्या? दिन भर इंतजार में बैठी 'बोर' होती रहूं और शाम को जब तुम लौटो तो...यही काम रह गया है न मेरा? खब जलाओ, जी भरकर...क्या इसीलिए.. और तुम्हारे वे वादे? हे भगवान!"

"क्या कह रही हो, गीता? शुक्र मनाओ, डालिंग कि तुम्हारा पति कोई क्लर्क नहीं." सुरेंद्र ने पत्नी को बांहों में समेट लिया और एक बार फिर 'ख़ामोश आवाज' पर नजर गड़ा दी, "तुम तो अभी समझोगी नहीं, लेकिन बाद में जब लोग गली-मुहल्लों में हमारा पता पूछते-ताछते तुमसे मिलने आयेंगे तो क्या तुम्हें गर्व नहीं होगा अपने इसी पति पर? मैं कहता हूं, जरूर होगा. मुझ पर और खुद अपने पर भी...और तब तुम्हारे इसी उदास चेहरे पर ख़ुशी होगी. जानती हो, तब क्या करूंगा मैं? लो, जान लो..."

प्यार पाकर गीता की आंखें छलक आयीं, 'सचमुच, बहुत चाहते हैं मुझे, मैं ही समझने में भूल कर जाती हूं... और क्लर्क भी होते तो भी क्या मुझे गर्व नहीं होता?...'

"हां, अब बोलो, जानेमन! क्या कह रही थीं तुम?... मेरा ध्यान सचमुच ही इस चीज की तरफ था... तुम तो देखो जरा... बोलो, क्या ख्याल है? क्या अब भी तुम्हें यह सिर्फ लकड़ी ही नजर आती है? ... ऐसे नहीं, अरे भई, खड़े होकर जरा गौर से देखो और बताओ."

गीता ने होठों पर हथेली रगड़ी और 'ख़ामोश आवाज' पर निगाह डालने से पहले पति पर निगाह डाली, "अगर कोई हमारा पता पूछते हुए आज ही यहां आ धमके तो?" उसने बात को रहस्य बनाते हुए कहा और आंखों ही आंखों में मुसकराने लगी.

सुरेंद्र कुछ भी नहीं समझ पाया कि गीता किस बात के लिए इतना हंसे जा रही है और उसकी इस बात का मतलब क्या है. किसी को सपना आया है कि हमारे पास एक ऐसी नायाब चीज है, जिसे देखने को वह ललचा उठे और आज ही यहां मिलने चला आये. अपनी महान कलाकृति से नजर हटाकर सुरेंद्र गीता की तरफ देखने लगा.

"लेकिन बात क्या है?" वह बोला, "हूं, अब समझा... असल में तुम मेरी बातों को मजाक में उड़ा देना चाहती हो... लेकिन मैं... मुझे विश्वास है, ऐसा एक दिन जरूर आयेगा... शिल्पकार कोई मामूली आदमी है कि लोग उसे नहीं पूछेंगे?"

"मैं कब कहती हूं कि नहीं पूछेंगे. लेकिन वे पूछते हुए अभी आ जायें तो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो क्या?"

"यही, कहेंगे कि अच्छे कलाकार से मिल रहे हैं, होंठों पर लिपस्टिक लगाये बैठा है!"

रुकी हुई हंसी फिर फूट पड़ी. बार-बार बांह से होंठ रगड़ते हुए सुरेंद्र ने भी पत्नी का साथ दिया. . .

रात में कितनी बार पलंग से उठकर सुरेंद्र ने 'खामोश आवाज' से साक्षात्कार किया—इसका हिसाब कौन लगाता? कहीं कोई खामी न रह जाये, इसलिए बार-बार जरूरी संशोधन करने पड़े. अब जरूरत थी तो बस एक. . .सुंदर, कलात्मक आधार के बिना कलाकृति लड़खड़ाती हुई लग रही थी. किसी ज्यादा बड़ी चीज की जरूरत नहीं थी. शीशम के तने में से निकाली गयी ऐसी कोई भी लकड़ी, जो ज्यादा गोल न हो और न बहुत ऊबड़-खाबड़ कि तमाशा ही खड़ा हो जाये! तने का व्यास किसी भी सूरत में छः इंच से ज्यादा नहीं होना चाहिए और तराशकर निकाले गये टुकड़े की ऊंचाई ज्यादा से ज्यादा एक फुट—बस. . . बस क्यों? जोड़ने को फेविकोल और कीले. . . कीलें? और वो भी बबूल की लकड़ी में? फेविकोल से ही काम चलाना होगा. . . ठीक है, फेविकोल हुआ और. . . ये हुआ ऊपर से वार्निश!

शिल्प के सही-सही रूप की कल्पना में डूबा कलाकार यह भूल गया था कि गीता दो-तीन बार रजाई से मुंह निकालकर उसे सोने के लिए कह चुकी थी और वह 'बस एक मिनट, बस एक मिनट' करते हुए रात के पौने तीन बजा रहा था. आखिर वह कैसा मिनट था, जो खत्म होने का नाम ही नहीं लेता था. गीता ने एक बार फिर बाहर मुंह निकाला, "हद हो गयी है! तुम्हारा यह रतजगा. . . मेरा तो दिमाग ही खराब हो जायेगा. . . ओ माई गॉड!" बत्ती बंद करने के लिए गीता उठने लगी तो उससे पहले ही सुरेंद्र ने स्विच आफ किया और रजाई में घुस गया. . .

लेकिन कल्पनाओं पर गुजर-बसर करने वाले लोग पलंग पर लेटे हुए भी बाज नहीं आते. बल्कि लेटा हुआ आदमी ही ज्यादा सोचता है, बशर्ते उसे नींद न घेर ले. अब सोचने पर पाबंदी लगायी नहीं जा सकती थी लेकिन किसी को क्या पता कि कोई सोने का ढोंग कर रहा था या वैसे ही आंखें बंद किये पड़े-पड़े सपने ले रहा था! असल में, कलाकार अपनी कृति के साथ प्रदर्शनी कक्ष में पहुंच गया था जहां बहुत-से कला-समीक्षकों ने उसे घेर रखा था और वे उससे तरह-तरह के सवाल कर रहे थे और अपनी डायरियों में नोट्स लेते जा रहे थे. . .फिर राष्ट्रपति द्वारा हजारों की राशि का चैक साथ ही सम्मान-पत्र!. . . फिर, फोटोग्राफर और फिर अंत में अखबार . . .

"तुम अपनी इस लकड़ी को यहीं क्यों नहीं उठा लाते, सुरेंद्र? कहो तो मैं उठा लाऊं? फिर आराम से सीने से चिपकाये सो जाना.". . . एक आवाज, जो रजाई में ही घुट कर रह गयी!

. . . इसका मतलब है, गीता सब कुछ समझ रही है कि मैं कुछ सोच रहा हूं! यानी गीता भी अब तक जागती रही है! "तुम सोओगी नहीं, गीता? किसलिए मेरे साथ अपनी नींद खराब करती हो?" शिल्पी ने कहा और सचमुच करवट बदलकर सोने की कोशिश करने लगा. लेकिन अब गीता सोने दे, तब न नींद आये.

कथा का अंत बहुत संक्षेप में हुआ. प्रदर्शनी वगैरह की नौबत ही नहीं आयी. पिछले पांच दिनों में सुरेंद्र आधार की लकड़ी के लिए भटक रहा था. यह कहां का न्याय है कि एक हाड़-मांस से युक्त जिंदा नारी, जिसकी रगों में खून दौड़ता हो, उस तरह पड़ी जलती-फुंकती रहे और ये साहब लौटें भी तो अपनी उसी नारी में समा जायें जो लकड़ी की है और जिसकी जबान खामोश है.

नयी दुल्हन के लिए पति को समझ पाना आसान नहीं था, जबकि विवाहित जीवन के आधे से ज्यादा दिन मायके में बीते हों! मायके की सभी शिक्षाएं बेकार हो चुकी थीं; क्योंकि कलाकार आज पांचवे दिन भी बेलगाम घोड़े की तरह उस काल्पनिक खुशी के लिए भटक रहा था, जो सिर्फ आधार के लिए एक लकड़ी के रूप में उसके दिमाग में थी, लेकिन इतने बड़े शहर में नहीं थी, जो एक बड़े देश की राजधानी है.

. . . नहीं, ये सब नहीं चलेगा. इस तरह तो पूरी गृहस्थी ही चौपट हो जायेगी. . . गीता ने सोचा और झटके के साथ पलंग से उठ खड़ी हुई. अब वह आईने के सामने थी. आंखों के पपोटे सूजे लग रहे थे और उन पर स्याही की हल्की परत छायी थी. बाल उलझे . . .बेतरतीब! माथे की बिंदी मोटी लाल लकीर में बदल गयी थी. उसने आईने में एक हवन्नक नारी को खड़े पाया—क्या ये मैं ही हूं. . . ?"

आईने से हटकर वह शो-केस के पास पहुंची. उसने 'खामोश आवाज' को उंगलियों पर टिकाया और घुमाने लगी. लकड़ी, जो नारी-आकृति में बदल चुकी थी, अब गीता की उंगलियों पर नाच रही थी. फिर उसने नारी की बांह में उंगली फंसायी और 'खामोश आवाज' को आंगन में फेंक दिया और खुद को पलंग पर गिर जाने दिया. . .

आखिर आंसुओं को पोंछ डालने के बाद उसने हाथ-मुंह धोये. फिर आईने के सामने खड़े होकर बाल संवारे, थोड़ा मेक-अप के बाद बिंदी से माथे को सजाया और मुस्करा कर देखा. . . अरे, शाम होने को है! क्यों न चाय ही बना ली जाये. . . तब तक सुरेंद्र भी लौट आयेंगे. . . कुछ सोचकर वह खुशी-खुशी मुसकराते हुए आंगन में आयी और फिर वही चीज उसके हाथ में थी, जिसे उसने मरे हुए चूहे की तरह फेंक दिया था,

लकड़ी को पत्थर पर रखकर चीरते हुए बहुत दिक्कत उठानी पड़ी. एक तो वह जगह-जगह से मुड़ी हुई थी, दूसरे गांठें उसमें बहुत थीं. खपच्चियों को अंगीठी पर जमाकर उसने आग जलायी और इस तरह 'खामोश आवाज' हमेशा के लिए खामोश हो गयी.

चाय का पानी चढ़ाते हुए गीता बहुत खुश नजर आ रही थी—चलो, एक वक्त के कोयले तो बचे. एक सद्-गृहिणी को सब कुछ देखभालकर ही घर चलाना चाहिए.

लकड़ी का यह कसूर क्या कम था कि उसमें एक बेहूदा नारी-आकृति को गीता ने भी देखा.

अब किसी न किसी को तो जलना ही था. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस चित्र का कोई मनपसंद शीर्षक, पोस्टकार्ड पर अपने नाम-पते सहित 29 फरवरी, 84 तक इस पते पर भेज दें—**संपादक : सारिका (तस्वीर बोलती है : 349), 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002.** चुने गये तीन शीर्षकों पर क्रमशः 50, 30 और 20 रुपये के नकद पुरस्कार दिये जायेंगे. आप कितने भी शीर्षक भेज सकते हैं, लेकिन हर पोस्टकार्ड पर नीचे प्रकाशित 'तस्वीर बोलती है' बतौर कूपन चिपकाना आवश्यक है. एक कार्ड पर केवल एक ही शीर्षक भेजें.

छाया : योग जाँय, 3025 सेक्टर 29 डी., चंडीगढ़-160020

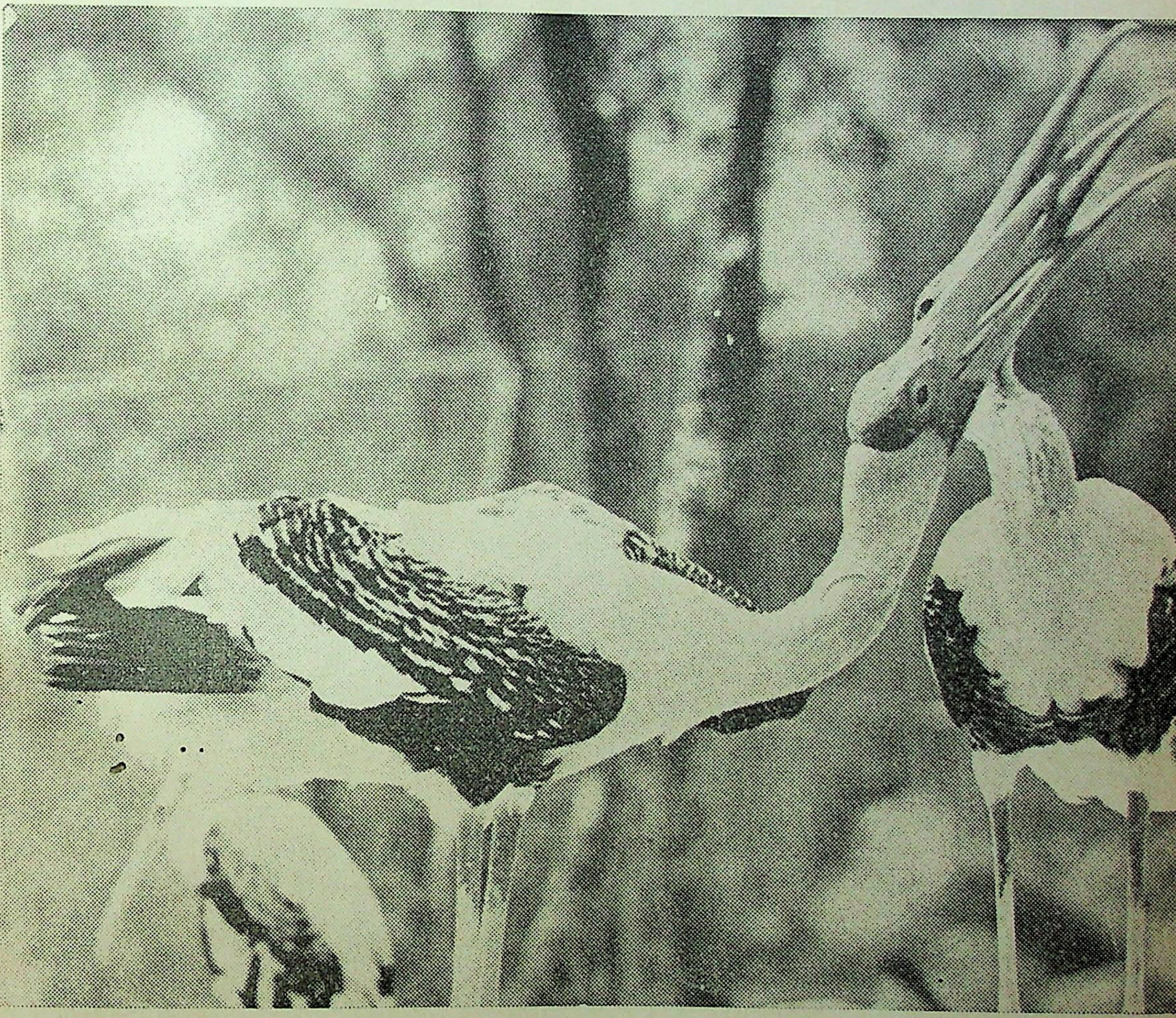

तस्वीर बोलती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• गौरीशंकर नागदंश

जंगल में माचिस

चित्रांकन : हरिप्रकाश त्यागी

एक ऊंचाई, एक प्रतिष्ठा और एक स्थापित जिंदगी के लिए पुरुषों के असंख्य जंगल से गुजरने वाली फूलतोड़नी एक रोज जेल में चीख-चीख कर यह चिल्लाती कैसे बरामद हुई कि मैंने जंगल में माचिस लगा दी है.... मैंने......

उस रात फूलतोड़नी अपनी मां से चिपटकर बहुत रोई, जिसमें पिछले सारे शिकवे-गिले तेज धूप में रखी बर्फ की सिल्ली की तरह गल गये. लेकिन दूसरे दिन सारे पनचक्की गांव में यह खबर जंगल की आग की तरह फल गई कि फूलतोड़नी घर लौट आयी है. फिर तो औरतें झुंड बनाकर फूलतोड़नी को देखने पहुंचने लगीं गोया भागी हुई लड़कियों का चेहरा बदल जाता हो.

रात को पनचक्की गांव के बड़े कदंब के पेड़ के नीचे पंचायत बैठी. लोगों ने कहा फूलतोड़नी को गांव से निकालो नहीं तो सब जवान लड़कियों का चरित्तर भ्रष्ट हो जायगा. कुछ लोगों ने फूलतोड़नी का जात और भात दोनों काटने की सिफारिश की. फूलतोड़नी को कदंब के पेड़ से बांधकर इक्यावन करची (बांस की हरी छड़ी) मारने की बात भी उठी लेकिन थाने पुलिस के भय ने यह प्रस्ताव पास नहीं होने दिया. अंत में गांव भर के चुल्हिया-नेवाड़ (जिसमें किसी भी ग्रामीण के यहां चूल्हा नहीं जले उन सबों का भोजन उक्त कार्यक्रम में ही हो) भात पर फैसला हो गया. पंचों ने फूलतोड़नी को क्वांरी मान लिया, फूलतोड़नी फिर क्वांरी हो गई.

लेकिन जब फूलतोड़नी सचमुच क्वांरी थी और अपनी मां के साथ बोर्डर पार के गांव रौतहट (नेपाल) की दाल मील में दाल चालने जाया करती थी, तो लोग फूलों से नखरेवाली दप्प-दप्प गोरी इस लड़की के नाम के बारे में तरह-तरह की भ्रांतियां सुनते, कोई कहता फूल तोड़ते वक्त इसकी मां को दर्द उठा था और फूलतोड़नी जन्मी थी, कोई कहता इसके नाम का अर्थ है जिसका जी चाहे तोड़ लो. इन्हीं अर्थों के बीच फूलतोड़नी से जुड़ी दो चीजें पूरे मील एरिया में मशहूर हो गई थीं—दाल चालने की और नजर चलाने की.

उन्हीं दिनों गोनाही का एक सजीला पैंकार (सौदागर) अपने पहाड़ी टट्टू के सर पर लगी लाल कलगी सहलाता दाल की खरीदारी करने मील आया करता था. उसकी नजरों के सामने पड़ने के लिए क्वांरी क्या तीन-तीन बच्चोंवाली दाल चालनियां अपनी साड़ी का पल्लू ठीक करने लगतीं लेकिन पैंकार विलासी सिंह की नजर हर बार पैंकारी में दाल की बोरियों के साथ-साथ एक जोड़ी नजरों का भाव भी मोलने लगती. जवानी की सीढ़ियां चढ़ आई फूलतोड़नी भी उन नजरों का इंतजार करती ठीक वैसे ही जैसे कभी-कभी किसी मछली को फंसानेवाले मछेरे का इंतजार होता है.

फिर एक रात फूलतोड़नी अकेली गाछी में निकली और दूसरी सुबह, सारे पनचक्की गांव में बात फैल गई कि फूलतोड़नी गोनाही के उसी पैंकार के साथ भाग गयीं.

फूलतोड़नी दस दिनों तक सीतामढ़ी की धर्मशालाओं, सस्ते होटलों में ठहरती हुई एक रात विलासी सिंह के साथ उस के गांव गोनाही पहुंच गयी. विलासी सिंह की मां ने लालटेन की मद्धिम रोशनी में फूलतोड़नी को ऊपर से नीचे तक देखा. दरअसल वह फूलतोड़नी में वह चीज तलाश करना चाह रही थी जिसने उसके नजरबाज और दिलफेंक बेटे को बांध लिया था. लेकिन विलासी सिंह के पिता धरीक्षण सिंह को एक ही चिंता खाये जा रही थी, धर्म भ्रष्ट होने की. कि बेटे ने लड़की भगाई भी तो ओछी जात की.

फूलतोड़नी का दिहाती संस्कार-वाला मन बार-बार उद्वेलित होकर यही सोचता कि उसने पिछले जन्म में जरूर ही मन से शिवजी की भक्ति की रही होगी तभी तो विलासी सिंह जैसा दूल्हा मिला था. उसने अपनी सहेलियों के पलदारी करने, बीड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रांकन : हरिप्रकाश त्यागी

बनाने, जुआ खेलने, दारू पीकर मारामारी करनेवाले दूल्हों को ही देखा था अब तक.

लेकिन फूलतोड़नी के भाग्य में विलासी सिंह का सुख ज्यादा दिनों तक नहीं लिखा था. विजयदशमी के पर्व पर रौतहट बाजार में खेले जाने वाले छर्रा काठी में प्रतिद्वंद्वी की तलवार विलासी सिंह के पेडू में धंस गयी. सीतामढ़ी के चड़ी बाजार में प्यार से पहनी गई लहठी फूलतोड़नी को इतनी जल्दी फोड़ देनी पड़ेगी, उसे कत्तई विश्वास नहीं था.

रूढ़िग्रस्त गोनाही गांव का ही एक खपरैल घर था विलासी सिंह का भी. इस घर में रहनेवाले सभी लोगों की नजर में फूलतोड़नी घंटे दो घंटे में डायन हो गई. विलासी सिंह के परिवारवालों की नजर में, विलासी सिंह को, उसके चलते-बढ़ते कारोबार को फूलतोड़नी चबा-खा गई. तब फूलतोड़नी एक रात फिर भागी लेकिन अपने गांव पनचक्की लौटने के लिए.

उन दिनों प्रौढ़ शिक्षा का बड़ा हल्ला था. बूढ़े तोते रात को गैसबत्ती की रोशनी में रामागति-तीतिया पढ़ते थे. विधवा फूलतोड़नी को वहीं मुखिया चरित्तर चौधरी ने बूढ़े छात्रों को पानी पिलाने, गैसबत्ती में हवा भरने, पढ़ाई खत्म होने पर स्लेट, खल्ली, गैसबत्ती और बैठने की चट्टियां उठाकर ऑफिस की कोठरी में बंद करने तथा दिन में अपने यहां बर्तन-वासन के लिए रख लिया था.

प्रौढ़ शिक्षा योजना के तहत पनचक्की स्कूल में पढ़ाने आये प्रौढ़ निर्मललाल को फूलतोड़नी अच्छी लगती. वे अपना काम स्वयं करने का आदेशयुक्त उपदेश देकर प्रौढ़ छात्रों की सेवाओं से फूलतोड़नी को जहां तक होता बचाये रखते. वे फूलतोड़नी को भी बैठाकर पढ़ाने लग गये और हरफ-हरफ लिखती फूलतोड़नी अपना नाम लिखना जान गई. राजनैतिक सुधार के लिए महिलाओं को बहुतायत रूप में राजनीति में लाना तय किया गया. पनचक्की सुरक्षित विधानसभा सीट के लिए किसी अनुसूचित जाति की महिला की तलाश होने लगी. निर्मललाल इसी बहाने फूलतोड़नी को राजधानी पटना ले गये. पटना के एक होटल में फूलतोड़नी जब सुबह को उठी तो उसने अपने बदन में बड़ा तीखा एहसास पाया मानो उसके ऊपर से कई इंजन गुजर गये हों. उसने निर्मललाल के तकिए के नीचे कई अंग्रेजी गोलियां भी देखीं लेकिन वह पता नहीं लगा सकती थी कि उनमें बेहोशी की गोली कौन-सी है.

निर्मललाल एक-दो मंत्रियों और कुछ विधायकों के आश्वासन पर बिल्कुव आश्वस्त हो गये कि पनचक्की विधान सभा क्षेत्र से टिकट फूलतोड़नी देवी को ही मिलेगी. उनके सामने हजार रुपये महीना कमाने वाली विधायिका घूमने लगी. जिंदगी भर संस्थाओं के सहारे जीने और महिलाओं के मामले में अकेलेपन का एक तल्ख अनुभव रखनेवाले निर्मललाल को फूलतोड़नी देवी में एक विलक्षणनेत्री की संभावना दीखने लगी.

बेटी की चर्चा, अच्छे लोगों की आमद-रफ्त ने फूलतोड़नी देवी के माता-पिता की आंखों में चमक पैदा की वहीं उनमें यह विश्वास भी पदा कर दिया कि यह सब निर्मललाल के निर्मल मन की पैदावार है.

फूलतोड़नी देवी अपने नये पति के साथ पटना साउथ ब्लॉक के विधायक फ्लैट में आ गयी. पनचक्की गांव के लोगों का पटना से कम ही वास्ता पड़ता लेकिन फूलतोड़नी देवी के नये पति निर्मललाल मंत्रियों का वास्ता फूलतोड़नी देवी से जोड़ने की फिराक में लगे रहते. एक वरिष्ठ मंत्री जगनलाल जिनके सुकृत्यों से उनकी तीन पत्नियां उन्हें छोड़ चुकी थीं, फूलतोड़नी देवी के फ्लैट में बराबर अड्डा मारने लगे. निर्मललाल के लिए मुख्यमंत्री के किचेन कैबिनेट का आदमी मंत्री जगनलाल ही वह सीढ़ी थी जिस पर चढ़कर फूलतोड़नी देवी सुरक्षित स्थानवाले मंत्री पद को पा सकती थी.

काले जामुन-सी फूलतोड़नी देवी सुविधाओं के झरने के नीचे रोज नहाती हुई काली गुलाब बन चुकी थी और इस गुलाब को अपनी अचकनों में निर्मललाल से भी ज्यादा अविकार से मंत्री जगनलाल टांक सकता था.

विधानसभा के सत्र चलने के दिनों मुंगेर के एक गिरोह के हाथ पटने में पकड़ी गयी बसमतिया को महिला विधायिका फलतोड़नी देवी की सुरक्षा में रख दिया गया. फूलतोड़नी देवी ने बसमतिया से अकेले में बातें कीं.

एक ऊंचाई, एक प्रतिष्ठा और एक स्थापित जिंदगी के लिए पुरुषों के असंख्य जंगल से गुजरनेवाली फूलतोड़नी देवी को बसमतिया का दुःख कहीं-न-कहीं से अपना दुःख लगा. उसने बसमतिया के बारे में कुछ ऐसा सोच लिया, जैसे वह अपनी छोटी बहन के बारे में सोचने बैठी हो.

उस दिन वह विस्कोमान की मैनेजिंग कमेटी की मीटिंग से गई रात लौटी तो उसने पति निर्मललाल को सोफे पर ही औंधा पड़ा पाया. फूलतोड़नी देवी ने महसूस किया कि दूसरे कमरे में किसी की चीख को असफल बनाने की कोशिश की जा रही है. फूलतोड़नी देवी ने दरवाजा खोला और जो देखा वह लोमहर्षक था. मंत्री जगनलाल और नग्न अवस्था में विरोधरत बसमतिया.

दूसरे दिन अखबारों की हेड लाईन का समाचार सनसनीखेज था. विधायिका फूलतोड़नी देवी द्वारा मंत्री जगनलाल की हत्या. प्रेसवालों ने यह लिखा था कि जेल के महिला वार्ड में फूलतोड़नी देवी की ऊटपटांग हरकतों से उन्हें पागल भी करार कर दिया जा सकता है. मसलन वे जेल में बार-बार एक ही वाक्य दुहराती जा रही हैं—मैंने जंगल में माचिस लगा दी है. . .मैंने जंगल में. . . ☐

● **द्वारा : कल्याणी बुक डिपो, कल्याणी चौक, मुजफ्फरपुर.**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा-सूत्र

एक वर्ग यह विचार रखता है कि नारी और पुरुष के संबंधों को लेकर पैदा होने वाली लगभग पिचानवे प्रतिशत समस्याएं शुद्ध आर्थिक हैं. दूसरे वर्ग की धारणा है कि इन समस्याओं की जड़ों में यौन की जटिल प्रवृत्ति काम करती है. जाहिर है ज्यादातर लोग समस्या को पेट या शरीर की भूख के साथ जोड़कर देखने की आदत के शिकार हैं. . . जबकि सभी जानते हैं कि एक भूख मन और आत्मा की भी होती है. . . कैसी होती है यह भूख और मानवीय संबंधों में आखिर इसकी जगह क्या है?

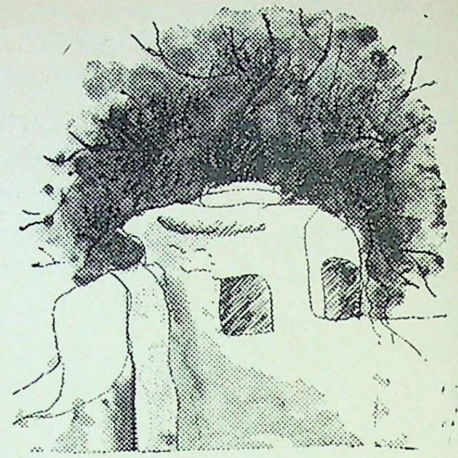

● रेखांकन : अरूपना

मानवीय संबंध और अध्यात्म

▣ राकेश वत्स

सारा परिवार गुमसुम बैठा है. . . साथ वाले कमरे से सिसकियों का कड़वा धुंआ उठ रहा है. . .शोक-दृश्य के नैपथ्य में बज रहे शोक-संगीत की तरह. कभी-कभी नवजात भूखे बच्चे की थरथराती आवाज भी सुनाई देती है. सतायी हुई औरत की छाती के अमृत-घट सूख गये हैं.

लड़की की पीठ पर गर्म लोहे से बने पसभरे काले घाव हैं. बाप बड़ी हिम्मत करके उसे ससुरालवालों के पंजे से छुड़ाकर लाया है. अब तकलीफ-देह सवाल सामने है कि लड़की और उसकी दूधपीती बच्ची के भविष्य का क्या होगा? कैसे कटेगी इस एक जोड़ी औरत जात की जिंदगी?

एक वर्ग यह विचार रखता है कि नारी और पुरुष के संबंधों को लेकर पैदा होने वाली लगभग पिचानवे प्रतिशत समस्याएं शुद्ध आर्थिक हैं. दूसरे वर्ग की धारणा है कि इन समस्याओं की जड़ों में यौन की जटिल प्रवृत्ति काम करती है. जाहिर है कि ज्यादातर लोग समस्या को पेट या शरीर की भूख के साथ जोड़कर देखने की आदत के शिकार हैं जबकि सभी जानते हैं कि एक भूख मन और आत्मा की भी होती है, उसकी गिजा जुटाना भी आदमी के लिए उतना ही अहम है जितना कि पेट और शरीर के लिए.

अर्थाभाव और यौन की अतृप्ति की समस्या का हल तो नारी को किसी न किसी रूप में कमाऊ बनाकर और मर्द की तरह खुली जिंदगी जीने की छूट देकर पाया जा सकता है, लेकिन सम्मान की जिंदगी जीने और अस्मिता की रक्षा करके उसे जानवर होने से बचाए रखने की समस्या का हल इतना आसान नहीं है. इसके लिए औरत को अंतर्मुखी बने रहने देने की सख्त जरूरत है और पुरुष के मन में यह एहसास पैदा करने की भी कि औरत किसी भी नजरिये से आदमी की नैसर्गिक क्षमताओं के सहारे जिंदा नहीं है.

मानसिक स्वतंत्रता या अस्मिता की रक्षा की समस्या ज्यादा जटिल इसलिए भी है कि इसमें नारी के संरक्षक या हित-चिंतक कोई बड़ी भूमिका नहीं निभा पाते. आंतरिक स्वतंत्रता का एहसास जिन चीजों की मांग करता है. वे न तो अर्थ से ही पूरी की जा सकती हैं और न ही यौन साधनों से. उसकी शाकाहारी खुराक है—अपनत्व का भाव या सौहार्द. यह एक ऐसी चीज है जो अर्थ और यौन के अभाव से पैदा होनेवाली बड़ी से बड़ी दरार को भी पाटने की क्षमता रखती है.

प्यार ही है जो अपनी परिपक्व अवस्था में पहुंचकर मानवत्व या इंसानियत का रुतबा हासिल करता है. एक विवाह संस्था तो क्या, इंसानी जिंदगी से वाबस्ता सारे के सारे संगठन इसके बिना खूंखार जानवरों के क्रूर झुंडों के सिवा और कुछ नहीं हैं.

आदमी के अंतर्पक्ष के हामी और उम्र के अंतिम दौर में पहुंचे लोगों का दावा है कि अध्यात्म (विकार रहित धर्म) ही एक ऐसी चीज है, जो आज के सांस्कृतिक दिवालियेपन के मांसल युग में, आदमी को नफरत और स्वार्थ-परता के जहरीले कुंड से बाहर निकालकर, इंसानी जज्बे के तहत जिंदगी जीने के लिए मजबूर कर सकता है. लेकिन हवा और पानी की तरह इस समय अध्यात्म को भी राजनीति के प्रदूषण से बचाने की सख्त जरूरत है.

इन आदर्श किस्म के लोगों से यह सवाल किया जा सकता है कि आज तक आदमी जो इस दौर की बदनाम जिंदगी की तरफ तेजी से कदम बढ़ाता रहा है, उसमें अध्यात्म की कितनी हिस्सेदारी और किस किस्म की भूमिका रही है?

जवाब कोई ज्यादा दूर नहीं है कि आदमी सबसे ज्यादा खूंखार और निर्दयी अध्यात्म के ही नाम पर हुआ है.

इंसानी श्रम और शक्ति का तमाम का तमाम बंटवारा इसी के प्रदूषित रूप की देन है. स्वर्ग का लोभ और नरक का भय अध्यात्म में मिले प्रदूषण के सर्वाधिक खतरनाक विषाणु हैं. □

● **77 बी, शास्त्री कालोनी, अंबाला छावनी, हरियाणा.**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेड़िया

•जसवंतसिंह विरदी

एक बहुत पुरानी कथा थी जिसमें एक भेड़िया मेमनों पर झूठा आरोप लगाकर उन्हें खा जाता है, अब समय के साथ-साथ हालात बदल गये हैं. प्रस्तुत है भेड़िये और मेमनों के संबंधों की नयी लोकतंत्रीय दास्तान.

एक दिन एक भेड़िया छोटी-सी सरिता के निकट खड़ा हुआ चटखारे ले-लेकर पानी पी रहा था, प्रसन्न चित होकर. सूर्य की धूप से पानी चमक रहा था और सरिता की धारा उस धूप के प्रभाव से दूर तक चमकती हुई दिखाई देती थी.

'ठीक ही कहते हैं, इस देश में दूध की नदियां बहती होंगी.' भेड़िये ने सोचा. फिर उसने दूर तक ऊंचे उभरे हुए फलों के वृक्षों को देखा तो वह प्रसन्न हो गया, परंतु पूरी तरह नहीं.

'गत वर्ष से एक भी मेमना खाने के लिए नहीं मिला.' उसने सोचा. फिर अगले क्षण ही उसने महसूस किया जैसे कुछ मेमने उसके निकट ही कहीं पानी को जूठा कर रहे हैं. उसने गौर से, सूंघकर देखा.

सरिता के ऊपरवाले भाग में भेड़िये से कुछ ही दूरी पर मेमने पानी पी रहे थे.

अभी वह सोच ही रहा था कि एक मेमने ने दूसरे को सावधान करने के लिए कहा, "अरे भेड़िया."

"तो क्या है." दूसरा बोला.

"मगर देखो तो."

"हां, देख लिया."

"मगर. . ."

"चुप रहो."

मेमने कुछ क्षणों के लिए चुप हो गये और फिर भेड़िये के अस्तित्व को भूलकर एक-दूसरे पर पानी उछालने लगे. भेड़िये की ओर आ रहा पानी कुछ मटमैला हो गया था. इससे भेड़िये को बहुत क्रोध आया. वह तेज चाल से मेमनों की ओर लपका.

"अरे लौंडो! यह क्या कर रहे हो?" उसने जोर से कहा.

मेमने बोले, "जी, पानी पी रहे हैं."

"प्यास लगी है."

"प्यास लगने का यह मतलब हुआ कि सरिता का पानी ही पी डालो?"

"हां जी!"

"क्यों? पानी तुम्हारे बाप का है?"

"जी हां."

उसे गुस्से से घूरते हुए देखकर एक ने कहा, "जी, हम मेमने हैं."

"मुझे मालूम है."

"हमने यह सरिता का पानी भी गंदा कर दिया है."

"वह भी मैं देख रहा हूं."

"यह पानी भी हमारी ओर से आपकी ओर जा रहा था." एक और ने हंसकर कहा.

"हां ऽऽ. . ."भेड़िये ने रोष से कहा. मेमने खामोश हो गये.

उस समय दोनों ओर एक तनावभरी स्थिति कायम हो गयी थी और वे सभी जंगल के वृक्षों में लगे हुए फलों-फूलों को घूर रहे थे, प्रकृति के वरदान की ओर देख रहे थे. फिर एक मेमने ने कहा, "जी, अब इस जंगल में बहुत रौनक हो गयी है."

"क्यों?" भेड़िया गरजकर बोला.

"हम बहुत हो गये हैं."

"हूं. . ." भेड़िया गुर्राया, मगर मन में वह सोच रहा था, "चुनाव का दिन निकल जाने दो. . ."

फिर उसने उन्हें, कहा "तुम लोग बहुत बड़े हो गये हो."

"खूब पानी पीते हैं."

"और फल?"

"उन्हें भी खा जाते हैं."

भेड़िये का मन हुआ, किसी एक मेमने के गदराये हुए शरीर को छूकर देखे, परंतु वह एक दूरी पर ही खड़ा रहा. उसके मुंह में पानी भर आया था.

अब फिर जब एक-दो मेमनों ने सरिता का पानी गंदा करना शुरू किया तो एक-दो बड़े मेमने कड़ककर बोले, "खर-मस्ती बंद करो."

"क्यों?"

"देखते नहीं, भेड़िया साब?"

"हां, देखते हैं. . ."

"फिर?"

"फिर क्या?"

"पानी में से बाहर निकलो!"

"नहीं निकलते."

• छाया एवं कोलाज: धर्मवीर जयनर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तुम लोग कुछ और बड़े हो जाओ बेटा.' भेड़िये ने मन ही मन कहा. मगर उसने अभी तक उन्हें कुछ नहीं कहा था, जबकि एक मेमना मासूम-सा भाव बनाकर बोला, "जी, हम आपका पानी जूठा कर रहे थे."

"फिर?"

"जी, आपने कहा ही नहीं कि हम आपका पानी क्यों जूठा कर रहे हैं."

"तो?" भेड़िया मुस्करा दिया.

"और जी, हमें इंकार करना था कि हमने पानी जूठा नहीं किया. . ."

"फिर?"

"फिर आपको कहना था कि हमने आपको गत वर्ष गालियां दी थीं. . .. और हमें कहना था कि गत वर्ष तो हम पैदा भी नहीं हुए थे. . . वसे हमें पैदा हुए कई वर्ष हो गये हैं. . ."

"तो यह बात. . . ?"

"हां जी, फिर आपको कहना था कि अगर हमने आपको गालियां नहीं दीं तो हमारी मां ने दी होंगी."

"मगर. . ." भेड़िया कुछ कहता-कहता रुक गया.

एक और मेमने ने कहा, "हमारी मां किसी को भी गालियां नहीं देती, मगर फिर भी जब आप हमें घूरकर देखते तो हम मान जाते. . ."

"फिर?"

"फिर?. . . आप हमें खा जाते."

कई मेमने जोर से हंस दिये. एक ने कहा, "अरे, क्या हुआ तुम्हें?"

"हम लोग तुम्हारी बात पर हंस रहे हैं. . ."

"बात गलत तो नहीं. . ."

"ठीक भी नहीं लगती. . ."

"हमारे पूर्वज यही कहानी सुनाया करते थे. . ."

"कब की?"

"बहुत पहले की. . ."

"मगर अब तो. . ."

"अब भी सब कुछ उसी तरह हो रहा है. .. यह सरिता का पानी. . . ये जंगल के फल और फूल. . . यह सब कुछ हमारा नहीं है. . ."

"क्यों?"

"इस सब कुछ पर शक्तिशाली का ही अधिकार है. . ."

"मगर. . ." भेड़िया कुछ कहते-कहते रुक गया. मन में वह सोच रहा था, "मैं जीतकर यह कानून नहीं रहने दूंगा जिसमें गाय और शेर एक ही घाट पर पानी पीते हैं."

"मगर क्यों?"

"शक्तिशाली होने के कारण. . ."

भेड़िया उनकी बातें अनसुनी करने की कोशिश कर रहा था. वह इस तरह दिखाने का प्रयत्न कर रहा था जैसे कि वह दूर फैली हुई प्रकृति की रूप-छवि को निहार रहा हो. जंगल में फैली हुई सुगंधि जैसे उसे आनंदमय अवस्था में ले जा रही हो.

कुछ समय तक विचार करने के बाद भेड़िये ने उनसे कहा, "मैं आपके पास इसलिए आया था कि तुम्हें कोई कष्ट तो नहीं है?"

"जी, नहीं."

"कोई है तो बता दो." वह जोर से बोला.

"बिलकुल नही." वे विनम्र भाव से बोले.

"सोच लो."

"हम तो अब कुछ सोचते ही नहीं. . ."

"अच्छा, मजे करो." भेड़िये ने जोर से कहकहा लगाकर कहा और लौटने लगा. मगर अभी वह वापस चला ही था कि एक मेमने ने कहा, "जी, कल आपका एक विज्ञापन पढ़ा था."

भेड़िया मुड़कर बोला, "हां, मैं जंगल का बादशाह बनने के लिए चुनाव लड़ रहा हूं. . ."

"मगर आप तो पहले ही. . ."

"आप सब लोगों में से अधिक की सहमति होनी चाहिए, तब ही कोई बादशाह रह सकता है. . ."

"तो फिर वह शक्ति द्वारा अधिकार बनाये रखने वाली बात. . .?"

"वह अब समाप्त हो गयी है. . ."

"क्यों जी?"

"जंगल में नया राज्य स्थापित हो गया है, जहां गाय और शेर एक ही घाट पर पानी पी सकते हैं. . ."

"यह तो अच्छा नहीं हुआ."

"हां . . . मगर. . ."भेड़िया कुछ कहता हुआ रुक गया. मन में वह सोच रहा था, 'मैं जीतकर यह कानून नहीं रहने दूंगा जिसमें गाय और शेर एक ही घाट पर पानी पीते हैं. . .'

लौटने से पहले भड़िये ने मुस्कराकर उनसे पूछा, "अच्छा, यह बताओ, तुम लोग मुझे पसंद करते हो?"

"हां जी." सभी ने कहा.

"क्यों?"

"आपका रंग बहुत बढ़िया है."

"आपका मुंह बहुत चौड़ा है. . ."

"आपके दांत बहुत बड़े हैं. . ."

"आपकी आंखें भी. . ."

"आप शक्तिशाली भी बहुत हैं."

भेड़िया फूलकर दुगना हो गया. एक जोरदार कहकहा लगाकर जब लौटने लगा तो एक छोटे मेमने ने कहा, "हमने तो सोचा था कि आप हमें खा जायेंगे."

"हां, मैं तुम्हें खा ही लेता. . ."

"फिर क्या हुआ?"

"मगर अब नहीं खाऊंगा."

"क्यों जी?"

"अभी कानून आज्ञा नहीं देता."

"तो आपकी उदर-पूर्ति कैसे होगी?"

"मैं घास-फूस खा लूंगा."

"कब तक?"

"तुम्हें पता ही है. . ."

"जी नहीं, हम तो अभी बच्चे हैं."

"फिर भी तुम्हें सब कुछ पता है. . ."

"जी नहीं. . ."

"तुम झूठ बोलते हो. . ."

"जी नहीं. . ."

भेड़िया क्रोध में आ गया, "अच्छा मैं तुम्हें अभी बताता हूं. . . और वह जल्दी में एक मेमने की ओर लपका तो सभी मेमने भाग गये.

फिर, दूर से ही, एक ने कहा, "आपके विज्ञापन में तो लिखा हुआ था कि आप भी अब अहिंसावादी बन गये हैं."

"मुझे खेद है पुत्रो." लौटते हुए, भेड़िये ने कहा, स्वभाव को बदल सकना बहुत कठिन काम होता है. . . मुझे क्षमा कर देना. □

● गुरजीत नगर, जालंधर-144022

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...और भुलाये न बनें

अविस्मरणीय सपने, घटनाएं, संस्मरण प्रस्तुत करता केवल पाठकों का अपना स्तंभ.

नाचणे गये हैं

▣ गार्गी बक्शी

कई वर्ष पूर्व मेरे भाई साहब जोधपुर (आई. ओ. डब्लू रेलवे) ट्रांसफर पर गये थे. जब वह पहले दिन आफिस पहुंचे तो आफिस खाली था. कोई अफसर, कर्मचारी उपस्थित न था. . . बाहर बैठे चपरासी से पूछा, "सब लोग कहां गये हैं?" चपरासी ने जो राजस्थानी था बताया, "साब नाचणे गये हैं." हमारे भाई को बड़ा आश्चर्य हुआ. यहां आफिस टाइम में भी लोग नाचते हैं. इसी प्रकार दो, तीन दिन और गुजर गये.

काफी दिन बाद भाई साहब के दोस्त ने घर आकर बताया कि कल तुम्हें नाचणे जाना है, साहब ने कहा है, और भाभी जी को भी ले चलो.

अगले ही दिन भाई साहब ने अपने साहब से कहा, "मेरा यहां से ट्रांसफर कर दीजिये."

"क्यों, क्या बात हो गई?"

भाई साहब ने कहा, "यहां हर कोई नाचने जाता है यहां तक कि आप भी. मुझे नाचना आता नहीं. इसीलिये बेहतर होगा. . ." भाई साहब ने वाक्य पूरा भी नहीं किया था कि साहब यकायक हंस पड़े. कुछ देर बाद हंसी थाम कर बोले, "अरे भाई शर्मा जी, नाचने से घबरा गये, आपको तो बुलाया ही इसीलिये गया है यहां. 'नाचणा' यहां एक गांव है, जहां हम सब को सर्वे के लिये जाना पड़ता है. जहां हमारा वर्क चल रहा है. आप 'नाचणा' को नाचना यानि डांस समझ बैठे." अब हंसने की बारी भाई साहब की थी. □

तुम जीते मैं हारा...

▣ राजकुमार जैन

हमारे एक परिचित किसी वकील के मकान में काफी समय से किरायेदार हैं. चूंकि किराया कम था, लिहाजा वकील साहब ने किराये में वृद्धि की मांग के लिए परिन्चित को नोटिस जारी कर दिया.

हमारे परिचित भी काफी संजीदा और सुलझे हुए विचारों के हैं. वे वकील साहब का नोटिस लेकर उनके पास ही पहुंचे. बोले, "वकील साहब, एक मुकदमे के सिलसिले में मैं आपको अपना वकील करना चाहता हूं." इस पर उन्होंने अपनी निर्धारित फीस मांगी. परिचित ने उनकी मांगी फीस टेबिल पर रख दी. फीस जेब के हवाले करते हुए वकील साहब ने कहा, "हां, अब बताइये, किस संबंध में आप मुझे वकील करना चाहते हैं. पूरा ब्यौरा दीजिए."

तब परिचित ने उनका वही नोटिस निकालकर टेबिल पर रख दिया. अपना ही नोटिस देखकर वकील साहब थोड़े झल्ला से गये और कहने लगे, "यह तो मेरा पर्सनल मामला है. इसमें भला मैं आपका वकील कैसे बन सकता हूं?"

हमारे परिचित ने मुस्कराते हुए कहा, "अब तो आप ही हमारे वकील हैं. आप जो फैसला करेंगे, वह मुझे स्वीकार्य होगा."

वकील साहब अवाक् थे. फीस लौटाते हुए उन्होंने कहा, "भाई मेरे, यह तर्क तो बड़े-बड़े वकील भी नहीं दे सकते. तुम जीते मैं हारा. . ."

हमारे परिचित आज भी वकील साहब के मकान में ही किरायेदार हैं और किराया वहीं है. □

वे उदास आंखें . . .

▣ उमा शर्मा

बात काठमांडू की है. जहां हम कुछ सहेलियां एक साथ हर इतवार पशुपतिनाथ मंदिर के दर्शन करने जाते थे.

अंदर जाने से पूर्व मांगने वालों का तांता टूट पड़ता.

परंतु मेरी नजर एक गठरीनुमा व्यक्ति के मैले हाथ पर पड़ती. मैं कुछ न कुछ दे देती. यदि न देती तो उसने कभी आग्रह नहीं किया—रोका नहीं. गिड़गिड़ाया नहीं. हमेशा एक लबादा ओढ़े वह हाथ एक बार आगे बढ़ाकर रुक जाता.

करीब दो वर्ष बीत गये और मैं सोचती ये नकाबपोश कौन है?

हम फौजियों की क्या जिंदगी आज यहां तो कल वहां. बदली आ गई और जाने का दिन भी आ गया. सुबह-सुबह ही मैंने ड्राइवर को पशुपतिनाथ चलने को कहा. उस भिखारी के अलावा मैंने कभी किसी दूसरे भिखारी को कुछ न दिया था.

एक ओर फैला, कुछ न कहने वाला हाथ मुझपर एक छाप छोड़ चुका था.

मैं सीधी जाकर वहीं खड़ी हो गई, जहां वह हाथ फैलाए बैठा था और जाकर कहा, "आज मैं तुम्हें तभी दूंगी, जब तुम ये नकाब और लबादा हटाओगे. मैं यहां से जा रही हूं."

यही कोई दो मिनिट की खामोशी के बाद क्या देखती हूं कि एक नौजवान जिसके तन पर नहीं के बराबर कपड़े थे, जिसके एक कंधे से बांह गायब थी, मेरी तरफ उदास आंखों से देख रहा था.

जीवन में इतनी गहरी उदासी, बेचारगी, विवशता मैंने नहीं देखी थी. मेरे मुंह से शब्द न निकला. दुख से आंखें नीची हो गईं. बिना कुछ कहे जो भी मेरे हाथ में था थमा दिया. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबूत • चंचल

ग पे उ की मात्रा, ल के बगल डंडा अउर बड़की ई. . . गुलाबी जब दस्तखत करके तनी तो लगा एक जंग जीत लिया. अंगूठे में चुपड़ आयी स्याही सूखकर जम जाये, इससे पहले ही अंगूठे को साफ कर लेने की गरज से सबसे पहले उसे बालों में रगड़ा, देखा, और संतोष न होने पर उसे फिर पिछवाड़े घिसने लगी. लेकिन तत्काल संभल गयी. और शायद इसलिए भी कि यह जवान लड़कियों के लिए अच्छा शऊर नहीं है. लेकिन अब तो जो होना था, हो ही गया था. फिर भी उसने अंगूठे को आंख के सामने करते हुए नेताजी से पूछा ही डाला, "नेता साहब! अब तो अनुदान मिल जाई न!"

"क्यों नहीं मिलेगा. . .ऐसे ही थोड़े ही नेतागिरी कर रहा हूं. . .हां, थोड़ी मसक्कत जरूर करनी पड़ेगी. . ."

"मसक्कत काहे की?" पूछने के साथ ही गुलाबी की आंखें चौड़ी हो गयीं. शायद वह मसक्कत पर चौंकी थी, क्योंकि उसने सुन रखा है कि सुराज के बाद नेता ही सरकार होते हैं. और सरकार का मतलब सरकार है. जिसके लिए मसक्कत फालतू है. सवाल नेताजी की समझ में आ गया. पहले तो उन्होंने मुंह बिचकाया. ऐसे जैसे देश की जनता आज भी अपढ़ है. और वह वोटर के ऊपर कुछ भी नहीं है. सरकार, सरकार की बारीकी, उसके दांव-पेंच, काम करने के तरीके, आज भी जनता की समझ से बांहर हैं. और हर बार बताना पड़ रहा है. नेताजी इत्मीनान से बोले, "सरकार चूतिया है क्या जो ऐसे ही अनुदान बांटती फिरे. अभी तो सबूत देना पड़ेगा कि घर बाढ़ में डूब गया. . .सामान बह गया. इतने का नुकसान हुआ. . .बहुत कुछ करना पड़ता है गुलाबी. आया समझ में! बहुत झमेला होता है. हां. तुमने पता नहीं बताया."

"हमें का मालूम."

"फिर?. . .तुम रहती कहां हो?"

"बगलवाली गली में."

"बगलवाली गली में! यह भी कोई पता हुआ?"

बात न सुलझते देख पेरिस सैलून वाले नन्हें मियां ने उस्तरे को पट्टी पर घिसते हुए पूरी जानकारी दी. . . "नेताजी! कहां. . . आप इसके चक्कर में पड़ते हो. अभी हाल ही में तो आयी है. इसका नाम भी तो वोटर लिस्ट में नहीं है. उहां लाला वाली झोंपड़ी है न! उसी के आगे स्कूल की दीवार से सटाकर एक झोंपड़ी खड़ी कर रखी है. इसका कुछ भरोसा है. मुंसीपाल्टी वाले आयेंगे और झोपड़ी-फोपड़ी बाहर फेंककर चले जायेंगे. . .चल भाग. . .अनुदान लेगी. . ."

"छोटका बुआ त कहत रहिन कि, नेता साहेब से मिलि लेऊ अनुदान मिलि जाई."

"छोटका बुआ के. . . में अनुदान रखा है न जो मिलि जाई?" और नन्हें मियां फिर उस्तरे को घिसने लगे.

लेकिन नेता की चिंता बढ़ गयी. थोड़ी देर गंभीर मुद्रा में बैठे एक टक गुलाबी को निहारते रहे. तेल चुपड़े बाल, खाली मांग, लाल फीता, मैल की सिलवट से घिरी गर्दन, काला मैला ब्लाउज और उसमें से उभरकर आता गोरा हिस्सा. नेताजी वहीं टिक गये. और गंभीर मुद्रा में बैठे सोचते रहे. आंखें सामने कहीं जाकर पथरा गयी लगती थीं. उनके दाहिने हाथ में वह कलम थी जिस पर गुलाबी की उंगलियों के ताजा निशान थे. वह कलम नेता की खसखसी दाढ़ी में उलझी, खुजली शांत करने में लगी थी. बायां हाथ पाकिट की जेब में डाले नेताजी पद्मासन में बैठे एक पैर को लगातार हिलाये चले जा रहे थे. क्योंकि उनके सामने बहुत बड़ी समस्या थी देश की और देश . . . 'नदियों का' है. अब इसमें दूध कत्तई नहीं बहता, बहता है तो निखालिस पानी वह भी दूषित. और बाढ़ इन नदियों की नियत्ति है, साल में एक बार तो आनी ही आनी है. और बाढ़ आने का मतलब होता है कुछ लोग, कुछ पदार्थ, कुछ जमीन इसमें डूबे. जान माल का खतरा बढ़े. यह सब हो जाना भी चिंता का विषय नहीं है. चिंता का मूल विषय देश का जनतंत्र है जिसमें लोग डूबते हैं, माल असबाब का नुकसान होता है और इसकी चिंता सरकार को करनी पड़ती है. रेडियो पर, दूरदर्शन पर, बाढ़ के मनोरम दृश्य दिखाये जाते हैं. अखबारों में तस्वीरें छपती हैं. हर साल बाढ़ आती है, उसी तरह हर साल घर डूबते हैं! जान-माल का नुकसान होता है. और इसके लिए सरकार को हर साल जन कल्याण, जनहित के लिए कुछ न कुछ करना ही पड़ता है तो जाहिर है कि उसके लिए राहत कोष बनेंगे, और उन डूबने वालों की लिस्ट बनेगी जो डूबते हैं और वोटर भी हैं. . सरकार किसी भी हालत में उनकी मदद करती है जो दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नेताजी, इस चुनाव में आपकी जीत निश्चित है. अपन तो एक बा जानते हैं कि पुलिस जिसकी मदद कर दे सो जीत जाता है. . . अब आपै बतावो, इहां कउन साला है जो पुलिस के चंगुल में नहीं फंसा है. . .' जनता, पुलिस और नेता के वास्तविक संबंधों सहित आज के समूचे हालात को उजागर करती कहानी––

हैं, और गुलाबी का नाम इसी खाने में दर्ज हो रहा है. नेताजी की चिंता का विषय गंभीर है, जिसके लिए वे एक टक कहीं देखे जा रहे हैं. नेताजी की गंभीरता और उनके एक टक देखते रहने से गुलाबी अचकचायी–और नेताजी को वापस ले आने के लिए पूछ बैठी, "फिर?"

"फिर क्या. वही तो सोच रहा हूं. . .कुछ न कुछ तो करना ही पड़ेगा,. . .ठीक है. शाम को मिलना, कोई जुगत निकालूंगा. . .!" कहते हुए नेताजी खद्दर के जाकिट पर इधर-उधर हाथ फेरने लगे. आखिरकार बीड़ी निकालकर सुलगाते हुए चौकी से उठे और जनहित में कहीं स्थानांतरित हो गये.

गुलाबी उन्हें कुछ दूर तक जाते हुए देखती रही और जब वे झोपड़पट्टी से निकलकर बड़ी इमारतों के घेरे में कहीं ओझल हो गये तब गुलाबी ने एक बार फिर अंगूठे को देखा. बालों में ले जाकर उसे रगड़ा और वापस अपनी झोंपड़ी की तरफ मुड़ गयी. गुलाबी मोहल्ले में आ गयी. यह समाचार देने के लिए कि. . .नेताजी जुगत निकालने गये हैं. शाम को फिर आयेंगे. सुनकर छोटका बुआ पसर गयीं.

"एक बात बताई गुलाबी. इ नेता हो न! बहुत अच्छा मनई हौ!"

"छोटका बुआ, इ नेता का करेथि."

"नेतागीरी! अउर का?"

"ओहिमा तनखाह का मिलै थ?"

"तनखाह? अेनका हुंह! तनखाह का कउन जरूरत? ये जेहिका चाहें हजार दुई हजार तनखाह देवावंई!"

"त अेनकर खरचाखोराकी कइसे चलैथ?"

"बस अइसै."

"अइसे क मतलब?"

"मतलब! ओनंही से पूछ! जुमा-जुमा दुई दिन भवा शहर आये अऊ पर जमई लगा? इ शहर हौ शहर. समझी! उ नेता हौ नेता. पुलिस जमादार सब ओहिके सलाम करथे. अपन उ मुंशीपाल्ली वाला इंसपेक्टर आवथ न. उहो सलाम करथ.. . "छोटका बुआ और गुलाबी के बीच चलनेवाली बातचीत जो नेता से शुरू हुई थी मुहल्ले पर आकर टिक गयी.

गुलाबी जबसे शहर आयी है और छोटका बुआ के मुहल्ले में रहने की जगह ढूंढ़ी है, उसी दिन से यह संवाद चल रहा है और गुलाबी हर बार इन्हीं सवालों का जवाब देती है. हर बार दोनों इन बातों में नम होकर अपने-अपने को हल्का करती हैं. और इसी समय दोनों एक साथ 'गांव' भी हो जाती हैं, गुलाबी जब मुलुक की कहानी बताती है तो वह अकेली नहीं होती. छोटका बुआ जिन्हें पांच साल पहले गांव छोड़कर अपने मरद के साथ शहर आना पड़ा था, वे भी शहर से निकलकर गांव के अतीत में खो जाती हैं.

"त गुलाबी! उहां मुलुक में तोहार खोज-खबर लेई वाला केऊ नाई बा."

"अगर इहै होत बुआ! त आज इहां झक मारई हम काहे आइत. मुआ अब का कही. महतारी बात बचपनई में मरि बिलाई गये. हमार एक पूर के चाचा हो अंई वोई पालि पोसि के बड़ई कइैनि. लेकिन अब आपन अपनई होत है. विवाह करई के बदेपगले के मथ्थे मढ़ि दहैनि. अब बतावे बुआ हम का करित ओकरे साथ सुमरे बारी के साथ शहर आई गये. कुछ काम कई के पेट पालिलेब. ओहि पागले से त भले हरब बाकी त देखतई बावू! सोचे इ अनुदान मिलि जाये त कम से कम रहई-सोवई बदे एक जगह त होई जाये. अब तोहसे का छिपाई सेठा, इनके इहां, जहां काम करते रहे ससुरी इतनी छिनार हौ कि पूछ मत. अक्खा एक महीना होई ग. जब पगार मांगई गये त बोली, इ गिलास टूटी, तीन पतीला पिचका. एक एतना चालिस रुपया में से काटि के तेरह रुपिया दहैसि. ऊपर से हर रोज मरद के साथ लगाइ के हमार नाम. . ."

"मरद के साथ. . . ?"

"हां! उ लाला हौ न परचूनवाला. . . मुआ तोंद निकालि के गदहा माफिक फूला हो. देखि के घिनि आवथै. ललाइन छिनार के समझ में इ आवै थे कि ओकर अमारा से नाजायज संबंध हो. अउर मुआ. जहां देखी. . . उहीं खींच निपोरे. ही ही करई लागी."

"ई उमरि अइसन हो थे गुलाबी. अऊ मरद. . . सब. . . "फिर बातचीत औरत और मर्द के रिश्तों पर अटक जाती है. और जब यहां पर बहस आती है तो पूरा मुहल्ला नत्थी हो जाता है. लगता है छोटका बुआ और गुलाबी को छोड़कर बाकी हर एक का हर दूसरे से नाजायज संबंध है.

अक्खा दिन गुलाबी मुहल्ले में घूमती रही. बाढ़ से मिलनेवाले अनुदान की फिराक में हर जगह बात की. लेकिन घूम-टहलकर इसी नतीजे पर पहुंची कि असली बात तो नेताजी ही बतायेंगे और शाम होते ही वह लालावाले खंभे के पास चक्कर काटने लगी. इंतजार करना पड़ा लेकिन नेताजी आ ही गये, खादी का कुर्ता, उसी का झक पाजामा, ऊपर पीले रंग की सदरी डाले नेताजी बीड़ी पीते हुए दिखाई पड़े. उसके साथ लाला भी था जो कुछ देर खड़े होकर बतिपाता रहा और फिर लौटकर अपनी दूकान पर चला गया. गुलाबी बढ़कर नेताजी के पास पहुंची और वहीं खड़ी हो गयी.

"हां गुलाबी! देखो मैंने सब इंतजाम कर लिया है. बस तुम्हें सबूत देना पड़ेगा कि तुम यहीं रहती हो."

"सो कइसे!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सुनो तो सही. जो पाजामा सिलाता है न! मूतने की जगह बना लेता है. इसके लिए तुम्हें कुछ नहीं करना है बस ऊ पुलिस चौकी में जाकर एक ठो रपट दर्ज करानी है."

"रपट काहे की? पुलिस चौकी मां?"

"घबड़ावो मत! मैं साथ रहूंगा. बस कुछ ऐसे ही दर्ज करा दो. मैंने चौधरी दरोगा से बात कर ली है. यह सब सबूत के लिए करना पड़ेगा. तुम्हारी रिहाइश का परमानेंट पता लिख दिया गया तो बस समझो काम फत्तेह."

"फिर!"

"फिर क्या उसमें तुम्हारा नाम पता सब दर्ज हो जायेगा. सो उसकी पक्की नकल लेकर घर आई जाव. दूसरा सबूत मैं दे देता हूं. एक रसीद काट देता हूं."

"रसीद काहे की?"

"सियासत तुम्हारे समझ में नहीं आयेगी.वह भी सरकारी. बहुत चूतियापा करना पड़ता है. यह रसीद है बाढ़ राहत कोष के लिए. इह सब पैसा प्रधानमंत्री के पास जायेगा. बाढ़ सहायता के लिए एक बार जो नाम इस रसीद पर आया तो समझो कि प्रधानमंत्री तक पहुंच के ही दम लेगा. तो यह सबूत हुआ कि नहीं. . .बोलो. . .?" और नेताजी ने बीड़ी जलाते-जलाते अपनी आंख गुलाबी की आंख से हटाकर नीचे कहीं टिका दी और गुलाबी ने सहमकर आंचल ठीक किया. साथ ही साथ सहमति में आंख मटकाकर सहमति व्यक्ति कर दी, लेकिन एक बुनियादी सवाल उठ ही गया.

"त इ पुलिस सबूत प्रधानमंत्री से बड़ा होत है?"

"तू नहीं समझेगी. यही सब समझ में आ जाता तो हम क्या खाक छानने के लिए खद्दर लटकाये घूमते. . .?"

कुछ नेताजी की बात, कुछ अनुदान पाने की गरज और सबसे ज्यादा संभावित बरसात से बचाव की झलक ने गुलाबी को चुप करा दिया. इसी बीच नेताजी उपयुक्त समय देखकर जेब से रसीद निकालकर कलम खोजने के लिए जेब दर जेब हाथ घुमाने लगे.

"हां! कितने की रसीद काटें गुलाबी."

"हमरे पास अबहीं त कुलि दो रुपिया बा. . ."

नेताजी फिर चिंतित दिखाई पड़े. थोड़ा सोचा. दूर कहीं पेड़ की फुनगी के ऊपर निगाह जमाये रहे. फिर अचानक चौंक कर बोले, "कोई बात नहीं लावो. . .बाकी मैं देख लूंगा. . .और सुनो. . .इसे संभालकर रखना, यह बहुत बड़ा सबूत है. इस पर तुम्हारे घर का स्थायी पता लिख दिया है. . ." कहते हुए नेताजी ने रसीदवाला हाथ सामने फैला दिया और गुलाबी फुकती में पड़ा सिकुड़ा नोट निकालने लगी. उस समय नेताजी नोट की जगह देखने लगे, जहां ऊपर ब्लाउज और नीचे पेटीकोट की गांठ थी.और वही कहीं से जब नोट निकल आया तो झट गुलाबी ने नोटवाला हाथ नेता की तरफ बढ़ा दिया और एवज में सफेद रंग की रसीद लेकर देखने लगी.

"रख लो इसे. . .संभालकर रखना. . .वक्त पर काम आयेगा." और वक्त पर काम आनेवाली रसीद वहीं चली गयी जहां से पैसा निकला था.

लेकिन गुलाबी को दूसरे और उस पक्के सबूत के बारे में फिकर हो आयी जो ज्यादा कारगर होता है. पुलिसवाला सबूत. "नेता जी! उ जो पुलिस चउकी वाला बताइ रहे थे. . . सो. . ." नेताजी ने बीड़ी जलायी. . .खींचा. . .धुआं बाहर निकाला. . .दाढ़ी में खुजली की और उसी हाथ को जाकिट के जेब में डालते हुए बोले, "सुनो! एक काम करो! किसी मनचले आवारा लड़के से दोस्ती है."

"अवारा!"

"हां! हां! आवारा! यही कोई जो छोटा-मोटा काम करता हो, रिक्सा चलाता हो. किसी दूकान पर माल-वाल ढोने का काम करता हो. . .वही कोई. . .थोड़ो फैशन-वैसन करता हो. . .उसी के बारे में पुलिस को यही बताना है कि इसने तुम्हें छेड़ा है. . .छेड़ा है. . .यानी कुछ अश्लील इशारे करता हो. . ."

नेताजी ने सवाल को पुख्ता किया, "बोलो! कोई है? जल्दी बताओ. . .यह सब काम फटाफट करना है. मेरे पास टैम बिल्कुल नहीं है. अभी कारपोरेशन का चुनाव होनेवाला है. . .लोगों से मिलना-जुलना है. . .वोट बहुत मसक्कत का काम है समझी. . .लेकिन यह तो तुम्हारी दशा देखकर मैंने सोचा कुछ कल्याण हो जाये. . ."

गुलाबी ने उसी मुद्रा में हौले-से जवाब दिया, "वो टाटवाले खन्ना हैं न उनका लड़का. . .मुन्ना. . ."

"कौन? रतनलाल खन्ना. . .? उनका लड़का. . ." नेताजी चौंकने के साथ तड़पे. . ."तुम्हारा दिमाग तो ठीक है न. . .? वो तो अपनी ही पारटी के हैं. विधान सभा का चुनाव लड़नेवाले हैं. . . मैं तो उन्हीं के सहारे यह सब काम कर रहा हूं. . .खबरदार कभी जो दुबारा इस तरह से बोला. . ."

गुलाबी को लगा कि कुछ सच बोल गयी है शायद इसी से बनता काम बिगड़ने जा रहा है. गुलाबी ने फिर जोर देने की कोशिश की, "लेकिन. . ."

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं. . . गुलाबी, तुम समझती नहीं. . पुलिस में तुम यह नाम लिखाओगी. . .? जानती हो क्या होगा. . .न पुलिस रह पायेगी. . .न हम, न तुम. . . और तो और पता चलेगा कि इस इलाके में बाढ़ ही नहीं आयी . . .तुम नहीं जानती हो रतनलाल खन्ना को. . .वह केवल लड़की ही नहीं बेचते, कुर्सियां तक बेच देते हैं."

"कुर्सी?"

"हां, यह सब सियासत है राजनीति. . .तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी. अरे वो और नहीं है. . .वो जो छन्नू है. . . बरगद पारटीवाला. . .!होटल में काम करता है. दिन भर रेडियो लटकाये घूमता रहता है. . .नन्हें मियां बता रहे थे कि उससे तुम्हारी बहुत रफत-जफत है. . ."

"लेकिन. . .!"

"लेकिन-वेकिन क्या. . .? घबड़ाने की बात नहीं है. मैं तो हूं न. होगा थोड़े ही कुछ. . .! वो अपने चौधरी हैं न थानेवाले. . . . दरोगाजी. . .मैंने उनसे बात कर ली है. बस डांट-डपटकर छोड़ देंगे. उसी का नाम लिखा दो. . .हर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

▣ व्यंग्य चित्र : चित्रगुप्त

लगे ना फिटकरी. . . आया समझ में. . . इ शहर है. . . शहर ऐसे ही चलता है. . ."

"वो छन्नू जेल चला गया तो. . ."

"जेल!" नेताजी आकाश की तरफ मुंह उठाकर हंसे, "अरे पगली वह कई बार जेल गया है. सोसलिस्ट है न! जाता ही रहता है. . . कोई फर्क नहीं पड़ता. . . जावो घबड़ावो मत. . . मैं सब ठीक कर दूंगा. . . जेल नहीं जाने पायेगा. . ."

पुलिस चौकी में, सामने के चबूतरे पर जहां हनुमानजी का मंदिर बना है, वहीं रखी. कुर्सियों में नेताजी दरोगा के अलावा मेज पर कुछ जरूरी कागजात हैं और कोका कोला की दो बोतलें हैं.

"नेताजी! इस चुनाव में आपकी जीत निश्चित है. अपन तो एक बात जानते हैं जी कि पुलिस जिसकी मदद कर दे सो जीत जाता है. अब आप बतावो. इहां कउन स्साला है जो पुलिस के चंगुल में नहीं फंसा है. . . मैं बड़े-बड़े लोगों की बात बताता हूं. मिलावट करते हैं स्साले. . . पुलिस जानती है! नंबर दो का धंधा करते हैं वो पुलिस जानती है. बाकी बचे झोपड़ पट्टी वाले. . . वहां तो जिधर इशारा हो जाये. . . नहीं मानेंगे तो जायेंगे कहां. . . स्साले दिन रात शराब पीकर मां-बहन की ऐसी-तैसी करते रहते हैं. . .आधे से ज्यादा तो स्साले गिरहकट हैं. . . जब मरजी में आये डंडा करके पुलिस चौकी में खड़ा कर दूं, . . कहां जाने वाले . . . लेकिन इ गुलाबी का कौन-सा किस्सा है. . ."

नेताजी बोतल का पेय पदार्थ हलक के नीचे उतारने में व्यस्त थे. गुलाबी का सवाल आते ही छिछनी आ गयी.

"बस ऐसे ही है. वो स्साला छन्नू है न. . . आवारा है स्साला. . . आप नहीं जानते होंगे. . . पिछले चुनाव में बहुत टें-टें कर रहा था. . . पूरे झोपड़पट्टी को बहकाकर बरगद की तरफ ले गया था. गुलाबी से छेड़खानी करता है, अश्लील हरकतें करता रहता है. पूरा मुहल्ला परेशान है. . . ये तो अभी आयी है. गांव से आयी है, सीधी सादी है, . . यही कोई बीस-इक्कीस साल की होगी. . ." और बोतल का बचा हुआ पेय पदार्थ अंदर चला गया.

"आपको याद है न! उस बार जब खन्ना के लड़के की शिकायत आयी थी. . . ? वह सब झूठ था. यह तो अपोजीशन की चाल थी कि उसे इसके केस में फंसाकर पार्टी की छवि धूमिल की जाये. उस समय आपको बुरा लगा था न. . . आप ही कह रहे थे कि क्राइम चार्ट दिखाना पड़ता है सो वह काम कर लीजिए. . . कम से कम यह तो होगा कि आपने एक मुजरिम को रंगे हाथ पकड़ा. . . और अखबार में अपने वो शर्माजी हैं. . . दे ही देंगे."

दरोगाजी ने मूंछ पर ताव दिया. 'हूं' कहकर नेताजी की तरफ देखने लगे. फिर धीरे-धीरे से अपना बायां हाथ उठाया और नेताजी के दाहिनी जांघ पर हाथ मारते हुए कहा, "यह हुआ न काम! दीवान जी! नेताजी के लिए सिगरेट मंगवाइए. कितने दिन बाद आये हैं. जीत जायेंगे तब थोड़े ही आयेंगे. . ." नेता जी खीसें निपोरने लगे.

गुलाबी जब पुलिस चौकी पहुंची, उस समय तक सारी कागजी कार्यवाही पूरी की जा चुकी थी. चबूतरे के नीचे छन्नू मुर्गा बनाकर बैठा दिया गया था.

चौकी इंचार्ज चौधरी धनपत जो गस्त में थे झोपड़ी पट्टी से गुजरते समय चीख-पुकार सुनकर रुक गये. मुकाम ये वारदात पर मुजरिम छन्नू वल्द बदलू बेवा गुलाबी के साथ अश्लील हरकत करने पर आमादा था. चौधरी धनपत को देखते ही भागने की कोशिश की लेकिन चौकी इंचार्ज की मुस्तैदी की वजह से मुजरिम छन्नू एन मुकाम पर पकड़ा गया जिसके चश्मदीद गवाह हैं सामाजिक कार्यकर्ता रामहरख व लाला भगवान दीन. तफसीस के समय मुसम्मात गुलाबी ने यह कुबूल किया कि छन्नू आये दिन इस तरह की हरकतें करता रहता है. शराब पीकर गालीगलौज करना और धमकी देना इसका पेशा है. तफसीस से यह भी पता चला कि मुजरिम छन्नू पेशेवर बदमाश है.

दरोगाजी ने गुलाबी को बुलाकर कहा, "यह दस्तखत कर दो. दीवान जी . . ले जावो. . . इन्हें. . . इस साले को भेज दो जेल. . . हां. . . चाकू की बरामदी दिखा देना. . . इस छोकरी को भी हवालात में डाल दो. . . शाम को लौटूंगा. . . तो बयान लूंगा." कहते हुए दरोगाजी नेताजी के साथ उठ गये. गुलाबी ने नेताजी को आवाज लगायी थी लेकिन वे कुछ दूर निकल गये थे.

छोटका बुआ ने बताया कि—

"अक्खा रात औकर बयान भवा. दरोगाजी, दीवान जी. . . पता नहीं कउन-कउन. . . भइया अपने को तो कानून का सिर-पैर कुछ समझ में ना आवत . . . भुला भिन्नसारे जब गुलाबी वापिस आयी न! त ओकर चेहरा उतरा रहा. झोंपड़ियामा घुसी अऊ कुछ देर बात ओहरई निकरि गयी. उहां लालावाली दूकान से होत की कतहूं चलि गयी. भुला हम ई सोचे कि कहीं दिशा फरागत जात होये. . . भुला इ छन्नू वाली बात हलक में ना उतरत! काहे कि दुनों की गजब की पटत रही. . . "कहते-कहते छोटका बुआ की आंख भर आयी और वे नाक झाड़ने खंभे की तरफ बढ़ गयीं. □

● द्वारा : 'पराग,' 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहर का वह हिस्सा आबादी से बाहर था और वहां से डामर की काली सड़क रेंगती हुई पहाड़ों की ओर चली जाती थी. सांझ ढलने में अभी थोड़ी देर थी. दूर-दराज गांव के लोग जो अपनी रोजी-रोटी की तलाश में मुंह धोकर सुबह तड़के अपनी खटारा साइकिलों पर या पैदल ही शहर आ जाते थे, यह समय सड़क पर उनके वापस लौटने का था. सब कुछ सामान्य था. फर्क सिर्फ इतना था कि इस समय सड़क के बीचों-बीच एक लाश पड़ी थी जिसका सिर किसी भारी वाहन से पूरी तरह से कुचला पड़ा था. लाश के इर्द-गिर्द गाढ़ा-सा खून थोड़ी दूर बहने के बाद जम चुका था. देहात के कुछ लोग जिन्हें लाश देखकर थोड़ा डर भी लग रहा था, अपने भोलेपन से उसे करीब से देखने की कोशिश कर रहे थे. संभवतः इसलिए कि कहीं वह उनके आसपास के किसी गांव का तो नहीं था. परंतु लाश अपरिचित थी. जैसे-जैसे शाम घिरने लगी, अंधेरा बढ़ने लगा. भीड़ भी खुद ब खुद छंटने लगी, क्योंकि लाश तो लाश थी और एक लाश से किसी का क्या सरोकार हो सकता था!

लाश के शरीर पर एक अध-बाहों का फटा हुआ मला कुर्ता था जो अब खून के छींटों से रंगा पड़ा था. निचले हिस्से में मलेशिये की पुरानी पैंटनुमा चीज थी, क्योंकि उसे पैंट कहना शहरी बाबू लोगों का मजाक उड़ाना था. चप्पलें वहां थीं नहीं. स्पष्ट था कि या तो वह कोई देहाती था या फिर कोई मजूरी पर काम करने वाला. बहरहाल लाश से सौ गज की दूरी पर सड़क के किनारे एक प्राइवेट कंपनी का खुला ट्रक खड़ा था जिसमें कोई भारी मशीन लदी थी, शायद कहीं

आते हुए लोग

किसी सरकारी प्रोजेक्ट के लिए ले जायी जा रही थी. सड़क के किनारे बनी पुलिया पर पुलिस के दो सिपाही और उनके बीच एक पाजामा-कुर्ताधारी, नोकदार मूंछोंवाला व्यक्ति विराजमान थे और उनसे जरा हटकर एक अन्य सज्जन भी थे जो सूरत-शक्ल से कोई मालदार असामी लग रहे थे. सौ गज पहले सड़क पर लावारिस लाश को देखकर यह समझते देर नहीं लगती थी कि वह बेचारा ट्रक से ही कुचला गया है.

एक-दो ग्रामीणों ने जब साहस कर पुलिस के सिपाहियों के निकट जाकर उनसे सड़क पर हुए हादसे की चर्चा करने के लिए अपनी हकलाती जबान खोलने की कोशिश की तो पुलिस का एक सिपाही घुड़ककर बोला, "अबे सालो, अपना रास्ता नापो! बड़े आये लाश का मुआयना करने वाले! लाश है तो पड़ी रहने दो. तुमको काहे की आफत मची पड़ी है. जिसके घर का होगा आ लेगा कोई ससुरा. . .सड़क पर चलना आता नहीं ससुरों को, दब-दबाकर फिर पुलिस की जान को आफत करते हैं!" सिपाही के तेवर देखकर ग्रामीणों का बचा-खुचा साहस भी जवाब दे गया और फिर सभी आपस में खुसर-पुसर करते अपनी-अपनी राह चलते बने.

अब तक सड़क अंधकार में पूरी तौर पर डूब चुकी थी, कभी-कभार कोई ट्रक सड़क पर गुजर जा रहा था. ट्रक ड्राइवर ने गाड़ी की हैड लाइट जला दी और फिर से पुलिस के सिपाहियों के

किस आदमी की थी वह लाश, जो शहर के बाहर जाने वाली सड़क पर पड़ी थी? जी हां, यह सवाल आप पूछ सकते हैं, पर इससे बड़ा सवाल यह है कि वह लाश सड़क पर पड़ी ही क्यों थी? रोज चेहरे बदलती उस लाश का चेहरा किसी दिन आपके किसी आत्मीय का भी तो हो सकता ह! प्रस्तुत है इन्हीं सवालों से जूझती 'आते हुए लोग' श्रृंखला की पचीसवीं कड़ी——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीच आ बैठा.

"अबे, अब बैठता क्या है? जल्दी से काम कर, नहीं तो थाने चल. हमारा वक्त क्यों जाया कर रहा है?" उनमें से एक बोला.

ड्राइवर ने जवाब दिया, "हुजूर माई बाप, अब जो कुछ हुआ सो हुआ, कुछ ले-देके हमें चलने दो. आप तो साहब सब कुछ हैं, जैसा चाहो वैसा हो."

लंबी नाकवाले सिपाही ने जरा कड़क-कर कहा, "अबे ले-दे की बात करता है! साले, एक बेचारे को जान से मार दिया और कहता है कुछ, ले-दे के छोड़ दो! अबे, आदमी की जान इतनी सस्ती नहीं हुई अभी! चल, गाड़ी में बैठ और थाने चल."

पुलिसवाले की कड़कती आवाज सुन, थोड़ी दूर पर बैठे मालदार आदमी को पसीना छूटने लगा. वह हाथ जोड़े उनके सामने आ गया. "दीवानजी, हुजूर, ऐसी बात नहीं, कोई आदमी की जान की कीमत क्या देगा भला? इसको अक्ल है नहीं दीवानजी, माफ कर दो. आप जो कहो, मैं वही करने को तैयार हूं. पर आप हमें बख्श दो."

दोनों पुलिसवालों ने बीड़ी सुलगायी, एक ओर जाकर आपस में बातें करने लगे. लंबी नाकवाला अपने साथी से कह रहा था, "अबे तू समझेगा नहीं, वो सुसरा ठेकेदार लगे है. जितना ऐंठ सको, ऐंठ लो."

दूसरा कुछ और ही सोच रहा था, "यार, मामला तो ठीक है पर देर भी तो हो रही है. कहीं थाने में खोजबीन हुई तो जवाबदेही होगी, और फिर रात की बात है. कोई बड़ा अफसर इधर से गुजरा तो आयी लक्ष्मी भी चली जायेगी."

इतनी बात करने के बाद दोनों वर्दी-धारी गंभीर मुद्रा बनाये फिर अपनी जगह यथावत बैठ गये.

उनकी अनुपस्थिति में ही मालदार आदमी और ड्राइवर के बीच उनसे पिंड छुड़ाने के बाबत चर्चा हो चुकी थी. ड्राइवर ने बड़े विनीत स्वर में अपने हाथों में पकड़ी एक गड्डी उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा, "हुजूर रख लीजिए, आपके लिए हैं."

लंबी नाकवाले वर्दीधारी ने रौब के साथ गड्डी हाथ में लेते हुए पूछा, "अबे, लगे तो बड़ी हल्की. कितने हैं?"

"हुजूर पूरे तीन हैं, तीन हजार." ड्राइवर ने जवाब दिया.

"तीन हजार! तो पकड़ अपने तीन हजार. अबे इतनी-सी रकम में लाश का मामला दबता है भला! बड़ा आया रिश्वत देने वाला!" उसने ये शब्द जरा कड़क के साथ बोले, "ले पकड़ अपनी गड्डी और चल हमारे साथ."

बात बिगड़ती देख ठेकेदार आगे आया, "हुजूर दीवानजी, इस वक्त इतना ही है पास में. फिर थोड़ा और हो जायेगा."

वर्दीधारी कड़ककर बोला, "अबे, हम कोई तुम्हारे पीछे-पीछे लगे रहेंगे, क्या उघाई वाला समझ लिया हमें? हमारा समय जाया न करो सेठ!" ठेकेदार समझ गया, ये ऐसे छोड़ने वाले नहीं, उसने अपनी बंडी के भीतर बनी लंबी गहरी जेब में हाथ डाला. एक गड्डी और निकाली, "हुजूर अब हो गये पूरे पांच हजार, अब पास कुछ नहीं, मजदूरों की मजदूरी का पैसा था पास में."

दोनों वर्दीधारियों ने एक-दूसरे को अर्थभरी नजरों से देखा और लंबी नाकवाले ने दूसरी गड्डी भी पकड़कर जेब के हवाले कर दी.

ड्राइवर और ठेकेदार ने अब उनसे आगे बढ़ने की इजाजत मांगी तो, लंबी नाकवाले वर्दीधारी ने कहा, "यहां तक तो बात ठीक बन गयी, परंतु तुमने यह तो बताया ही नहीं, ये ससुरा था कौन? कोई सरकारी मुलाजिम तो नहीं कि बाद में खोजबीन हो और आगे गले आफत पड़ जाये."

ठकेदार ने जवाब दिया, "हुजूर, इसे तो हमने वियाड़ी पर साथ लिया था, पता हमें भी नहीं, कहां का रहने वाला है, बोलचाल से तो पहाड़ का लगता था."

पुलिसवाला बुदबुदाया, "चलो यह भी अच्छा रहा. पर सेठ, लाश तो ठिकाने लगानी ही पड़ेगी." उसने ड्राइवर से, जो सारे मामले को रफा-दफा होता देख तनिक राहत महसूस कर रहा था, रोबदार आवाज में कहा, "चल उठा लाश को और डाल गाड़ी में. कहीं रास्ते में नदी-नाला पड़े तो फेंक देना."

ड्राइवर ने बिना कुछ कहे अपने पाजामे को ऊपर खोंसा और घटना-स्थल से ठेकेदार की मदद से लाश उठाकर ट्रक में लाद दी तथा ट्रक में रखे हुए दो गैलन पानी से सड़क पर पड़े खून के धब्बे साफ कर दिये.

उधर दोनों वर्दीधारियों ने चारों ओर नजर डाली. एक बार ओझल होते हुए ट्रक की पिछली लाल बत्ती देखी और आश्वस्त होकर अपनी मूंछों को ताव देते हुए कानून की शरण स्थली की ओर चल दिये.

दूसरी सुबह पौ फटते ही पक्षियों के कलरव के साथ जब दूध वाले, सब्जी वाले व वियाड़ी पर मजदूरी की तलाश में शहर आने वाले तेज कदम बढ़ाते हुए शहर की तरफ आ रहे थे तो उनमें से बहुतों ने आश्चर्य से देखा कि सड़क पर, जहां कल शाम एक लावारिस लाश पड़ी थी और आसपास गाढ़ा खून जमा था, वहां न तो अब लाश थी और न कहीं पर खून का कोई निशान ही. □

● 68, नदी रिसपना मार्ग, ब्लॉक-2, देहरादून 248001

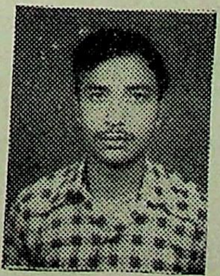

▣ पूरन मनराल

"जीवन को उसके विविध संदर्भों में नजदीक से देखने व अनुभव करने की लालसा. आसपास घटित होने वाले हादसों के मध्य जब कहीं इंसानियत की बातें बेमानी दिखने लगती हैं, तब वही हादसे कलम से कागज पर उतारने का प्रयास करता हूं."

संप्रति भारतीय सैन्य अकादमी में कार्यरत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरारत. . .शरारत. . .

असह्य व्यवहार!

लेंकेस्टर के मिस्टर के. टर्नर का मिजाज उखड़ चुका था. उनकी पत्नी उन्हीं के घर में एक पर-पुरुष के साथ रहती थी. एक दिन मिस्टर के. टर्नर ने अपने ही घर की खिड़की का शीशा तोड़ डाला और अपनी पत्नी के साथ सहवास कर रहे पुरुष को खूब पीटा! मिस्टर के. टर्नर आगबबूला हो गये थे.

किसी ने कारण पूछ ही लिया तो मिस्टर के. टर्नर ने कहा, 'ये लोग मेरे कुत्ते के साथ बड़ा दुर्व्यवहार कर रहे थे. . . और मेरे लिये यह असह्य था. . !

टु द प्वाइंट!

ऑस्ट्रेलिया की 'मदर' मेगजीन में एक वाचक के पत्र का अंश. . .

सामान्यतः आप के पत्र में छपे लेख संक्षिप्त और 'टु द प्वाइंट होते हैं मगर नवंबर 1978 के अंक में छपे 'सुन्नत' विषयक लेख में बहुत सारे प्वाइंट्स कवर नहीं हुए.

सरकारी रिपोर्ट!

ब्रिटेन की सरकार द्वारा प्रस्तुत एक रिपोर्ट में कहा है कि देश में 85 वर्ष

से ऊपर की आयु वाले स्त्री-पुरुष में से आधे से ऊपर लोग झुककर अपने पैर के अंगूठे का नाखून काट नहीं सकते. . .

फेंसी ड्रेस पार्टी!

मुख्य मार्ग के लेंप-पोस्ट पर ग्रेहाम टेली चढ़ गया. उसने गोरिल्ला वन-मानुष की ड्रेस पहनी हुई थी. पुलिस ने उसे गिरफ्तार किया तब वह गोरिल्ले की तरह लेंप-पोस्ट पर ही बैठा था.

"मैं फेंसी ड्रेस उत्सव को बड़ा गंभीर समझता हूं. फेंसी ड्रेस में 'पुलिस' तो कोई भी लल्लू-पंजू बन जाता है. मेरे पास जब एक आदमी खंभे पर चढ़कर आया और कहने लगा कि चलो पुलिस-स्टेशन. . . तब मुझे लगा कि

यह मजाक कर रहा है. मैंने तो उसे सिर्फ इतना ही कहा कि इस तरह पुलिस की ड्रेस पहनकर खंभे पर चढ़ जाने से तुझे इनाम नहीं मिलेगा. . ."

ग्रेहाम टेली को 25 पाउंड का दंड हुआ.

उसने जवाब में कहा, मैं दंड के 25 पाउंड के करंसी नोट नहीं दूंगा. . . पचीस पाउंड के केले दे जाऊंगा. . .!

जुल्म की व्याख्या. . .

अफ्रीका के जांबिया राज्य की जेलों में हो रहे जुल्मों के बारे में चर्चा चल रही थी.

लुसाका के सेंट्रल जेल में व्यवस्था का अभाव है— एक तर्क हुआ. कुछ कैदी भाग गये हैं. कुछेक ने शिकायत की कि हम लोगों पर शारीरिक जुल्म किया गया है.

एक वक्ता ने कहा 'देश के दस हजार कैदियों के लिये सिर्फ दो हजार संत्री हैं. सामान्यतः पांच बंदियों के लिए दो संत्री चाहिये.'

दूसरे वक्ता ने कहा, 'कैदियों पर हो रहे जुल्म की बात गलत है. . .'

प्रथम वक्ता ने कहा, 'उन्हें पीटा गया है.'

दूसरे वक्ता ने उत्तर दिया, 'कोई भी कैदी यह कैसे कह सकता है कि उसे पीटा गया है? जिस वक्त वह मुंह खोले तब आप उसके सभी दांत गिन सकते हैं. . .'

खुशकिस्मती

ब्रेडफोर्ड में हरबर्ट गुडशिप साइकल पर जा रहा था तभी एक 'वैन' का धक्का लगा. . .वह उछल पड़ा.

मगर टेलिफोन में 'नाइन-नाइन-नाइन' डायल करने की जरूरत पड़ी नहीं. क्योंकि अकस्मात ऐक्सीडेंट ब्रेडफोर्ड जनरल हॉस्पिटल के दरवाजे में हुआ था. . .

और वैन भी उसी हॉस्पिटल की एंबुलेंस-वैन थी. . .

कुछ लोग सचमुच खुश-किस्मत होते हैं.

बैक टु नॉर्मल!

अमरीका के स्पिन-दिएगो युनियन पत्र की एक रिपोर्ट से. . .

अध्ययन करने से पता चला है कि डॉक्टर और सर्जन फिर से काम पर आ गये हैं और ऑपरेशन शुरू करने के बाद मृत्यु-प्रमाण बढ़ कर पहले की तरह नॉर्मल हो गया है. □

▣ प्रस्तुति : चंद्रकांत वक्षी

▣ रेखांकन : अल्पना शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाही उपन्यास : दसवीं किस्त

आप पढ़ चुके हैं कि

बड़े घर की एक लड़की साधारण घर के एक यूनिवर्सिटी टॉप लड़के की पत्नी बनी. सात बरस बीत गये. परिस्थितियां बिगड़ीं, उसने पत्नीत्व के अधिकार से वंचित कर दिया. पत्नी का अंत हुआ और एक नव-रमणी का आविर्भाव, देह-व्यापार करने वाली एक संवेदनशील मानुषी. देह को वह मूलधन मानती है और इसे खर्च करने में विश्वास नहीं करती. दरवाजे पर बोर्ड 'कन्सलटेंट' का लगा है. पुरुषों से मिलने की फीस हजार रुपया लेती है. विभिन्न प्रकार के लोग उसके पास आते हैं और उसके जीवन दर्शन के कायल होकर लौटते हैं इस बार उसकी मुलाकात हो रही है वेश्याओं की एक सभा से.

दशार्क

• जैनेंद्र कुमार

अगले रोज शाम को सात बजे के करीब वे ही तीन जनी रंजना को अपनी सभा में लेने के लिए आ पहुंचीं. अगुआ जो उनकी मालूम होती थी, उसने अपना नाम बताया मेहंदी बाई, और कहा कि यह सकीना है, और वह मालती. मेहंदी की अवस्था चालीस की होगी, सकीना और मालती तीस के फेरे में दिखती थीं. सकीना बल्कि कम ही हो?

मेहंदी बाई ने पूछा, "आप हमारे बाद कल कहां गयी थीं?"

"क्यों? तुम्हें कुछ मालूम हुआ है क्या?"

"हां, सुना है किसी नंगे बाबा के दर्शन के लिए गयी थीं."

"गयी तो थी. तुमको यह अच्छा नहीं लगा!"

"बिल्कुल खराब लगा. आप तो समझदार हैं. आपको ऐसा करना नहीं चाहिए."

रंजना हंसकर रह गयी. कुछ उत्तर नहीं दिया.

"आपको एक सेठ-सेठानी ले गये थे न?"

"हां, थे तो वे सेठ-सेठानी ही."

"ये बड़े छंटे लोग होते हैं."

रंजना ने सुन लिया और चुप रह गयी.

सकीना बोली, "आपको हम अपनी बिरादरी का मानते हैं. पैसा आपके पास अच्छा है. लेकिन आप उन लोगों में नहीं हैं जो हम पर हिकारत का अपना हक मानते हैं. बल्कि सच पूछिए तो उनमें आपके लिए भी नफरत है."

"पर वे तो अपने गुरु के पास ले गये थे. यह तो हिकारत न हुई. . . देखो सकीना, वह छोड़ो. वे नफरत कर सकते हैं, उनमें गरूर हो सकता है, पर हमको वह हक नहीं है."

"क्योंकि हम नीच हैं? बेगैरत हैं?"

"चलो वहां, तुम सब लोगों के बीच में बहस करेंगे. यही बात है, जो मुझे आप लोगों को कहने को हो सकती है. आप लोग आयी कैसे हैं, टैक्सी से!"

• चित्रांकन : हरिप्रकाश त्यागी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हां."

"रोक रक्खी है टैक्सी?"

"हां तो. . . ?"

रंजना ने घंटी दी और जो आया, उससे कहा, "बाहर टैक्सी होगी. मीटर देखकर जो बनता हो, हिसाब कर टैक्सी वापस कर दो . . . आप लोगों ने यह क्या किया? मुझ पर इतना भरोसा नहीं हो सका?"

"आप हमारी मेहमान हैं."

"आपको मालूम नहीं, आपने मुझे याद करके मुझ पर कितना एहसान किया है!"

"आपका तो बहुत नाम है."

"होगा, पर जो ऊपर नामी-गिरामी बनते हैं, उन्हें एहसानमंद होना चाहिए आप लोगों का कि जिनको नीचे रखकर ही वे बड़े बन पाते हैं. उनका बड़प्पन बनाए रख रही हैं आप. और कोई नहीं जानता है कि वह कब तक कायम रहेगा. . . शायद ज्यादा नहीं. . . (दूसरा बटन दबाकर, परिचारिका के आने पर) देखो, चाय यह ठंडी हो गयी. ले जाओ और गरम पॉट बनाकर लाओ. . . हां, आप बतायेंगी कि इस पेशे में आप कैसे आ पड़ी हैं?"

मालूम हुआ कि सकीना को एक रिश्तेदार ने छेड़ा-बिगाड़ा और हमल रहने पर चुपचाप बेच दिया. हमल गिराया गया और वहां से हाथों-हाथ होती चकले में आ गयी. दसवीं का इम्तिहान देने वाली थी कि—मालती का मालिक जुआरी-शराबी था. उसने बीवी को साधन बनाना चाहा. प्रतिरोध में मारा-पीटा. आखिर बस न चला. लेकिन आनेवाले जिस-तिस तरह उसे इस्तेमाल करते रहे. वह बरदाश्त न कर सकी और भाग निकली. भागती कहां? मायके? मायका और भी बंद. क्या-क्या गुजरी, न पूछें. अब वह यहां है. . . मेहंदी के किस्से से मालूम हुआ कि वह शिकार नहीं, शिकारी थी. वह मर्दों को छकाना चाहती थी. शादी हुई, लेकिन पति को सदा उससे दबकर रहना पड़ा. आखिर पति की उसे परवाह न रही और वह एक दौलतमंद के साथ हो ली. वहां से एक दिन माल-मत्ता उड़ाकर चंपत हो गयी. . . उसे अफसोस नहीं हैं, बल्कि गुस्सा है. गुस्सा सबसे. उससे, जिसको समाज कहते हैं, कानून कहते हैं, व्यवस्था कहते हैं. वह इन चीजों को जानती नहीं. लेकिन जानती है कि सबके विरोध में उसे जीना है. क्योंकि सब उसके विरोध में हैं. मां छुटपन में उसे छोड़ गयी थी और बाप कसे जीता था, वही जाने. दस बरस की उमर से जो उसे सोहबत मिली तो वह जानती चली गयी कि जिंदगी क्या है और औरत क्या है. उसने जाना कि रहम नहीं है कहीं, उसको और सबको अपने बूते जीना है. संसार की यह समझ संसार ही उसे सिखाता चला गया. और आज अगरचे वह कोई खास पढ़ी-लिखी नहीं हो पायी है, लेकिन गिरोह की मुखिया बनने में उसे कठिनाई नहीं होती. मात्र उसे नेतृत्व का मंत्र सिद्ध है.

जब सब लोग सामने की रकाबियों प्यालियों से हाथ खींच चुकी थीं. तब रंजना ने कहा, "आइए अब चला जाये." कहकर ड्योढ़ी का बटन बंद किया और दरबान से कहा गया कि गाड़ी तैयार की जाये.

सभा में कोई पचास एक गणिकाएं होंगी. कमरा इतना बड़ा न था और वहां किचकिच मची हुई थी. ये लोग पहुंचीं तो सब खड़ी हो आयीं. और साथ की मेहंदी बाई ने मेज से तश्तरी उठाकर रंजना के आगे की. रंजना ने एक इलायची उठायी और तश्तरी हाथ में लेकर उन तीनों के बाद आगे बढ़ाकर दूसरी महिलाओं को भी पेश की. फिर कहा, "आप सब बैठिए न."

एक तरफ चांदनी पर गलीचा बिछा था और बस एक तकिया था. इन्होंने आदर से रंजना को वहां बिठाया और उसके बाद बाकी सब भी बैठ गयीं. सिर्फ मेहंदी बाई खड़ी रह गयी और उसने कहा, "हम सब लोग चाहते थे और रंजना बाई हमारे बीच में हैं. हमारा पेशा अब तवायफ का नहीं रह गया है; रंडी का बन गया है. लेकिन हम जानती हैं कि हम खुले पेशे में हैं तो हम नीच हैं, पामाल हैं और दुरदराये जाने के काबिल हैं. लेकिन हममें रंजना बाई जैसी भी हैं जिनकी इज्जत है, ऊंची पहुंच है. पर एक नयी चीज भी ईजाद में आयी है, जिसे कॉलगर्ल कहते हैं. यह चीज खानदानी समझी जाती है और बाजार में नहीं दिखाई देती है. . . हम रंजना बाई जी से कुछ जानना चाहते हैं. अभी इस मोहल्ले में वनिता उद्धारक संघ की महिलाएं आयी थीं. उन्होंने हमें इकट्ठा करके बताया कि इस बेइज्जती की जिंदगी से हमें निजात मिल सकती है. उनके संघ ने इंतजाम किया है कुछ घरेलू दस्तकारियां सिखाने का. सीने-पिरोने की क्लास तो कभी से चलती है और उससे बहुत-सी बहिनों ने फायदा उठाया है. उन्हें मशीन मुहय्या की गयी है. और वे आसानी से अब आठ-दस रुपया एक दिन में कमा लेती हैं. उन्होंने कहा कि यह रास्ता हमारे लिए खुला है. . . लेकिन हम जितनी यहां बैठी हैं, हमें वह मंजूर नहीं हुआ. आज के जमाने में आठ-दस रुपये से क्या होता है. उससे रोटी चल जाती है, इसमें भी शक है. फिर उतने में इज्जत बन जाये, यह तो एकदम नामुमकिन है. मैं पूछती हूं, आप लोगों से कि आप इज्जत नहीं चाहती हैं? हाथ उठायें वो लोग जो इज्जत न चाहती हों."

किसी का हाथ नहीं उठा.

मेहंदी बाई ने कहा, "बताइए, मजदूरी में भी इज्जत है? आठ-दस नहीं पंद्रह-बीस रुपये भी दिन के मिल जायें—इज्जत है?"

सब चुप बैठी रह गयीं.

"हम क्या उससे ज्यादा ग्राहक से एक-दो घंटे के लिए निकाल नहीं ले सकतीं? इज्जत पैसों से बनती है तो दस्तकारी वगैरह की बात इज्जत के लिए हमसे क्यों की जाती है?" कहते-कहते मेहंदी बाई जरा रुकीं और फिर सभा में चख-चख हो उठी.

"ठहरिए," जोर की आवाज में मेहंदी बाई ने कहा, "रंजना बाई को हमने बुलाया है. अब विनती है कि वह हमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्यचित्र : चंदर

कुछ बताएं." रंजना खड़ी नहीं हुई. भीड़ के चुप होने में कुछ वक्त लगा.

रंजना ने शांति हो जाने पर कहा, "मैं लेक्चर देने नहीं आयी हूं. आप लोगों से बातचीत जरूर कर सकती हूं. . . मेरे पति मौजूद हैं, बेटा भी है. फिर भी मैं गिरस्ती में नहीं हूं. आपके साथ हूं. घर मेरा ठीक-ठाक था. पति की नौकरी भी अच्छी थी. एक तरह वह अफसर थे. लेकिन यहां दरजे हैं. . . मेरे मां-बाप अमीर माने जाते थे. शादी बहुत धूमधाम से हुई. शादी यों प्यार की भी कह सकते हैं, लेकिन जिनसे हुई, उनके मां-बाप नहीं थे. मेहनत-मजदूरी से वे पढ़े थे और यूनिवर्सिटी में अव्वल आये थे. . . बेटा हुआ तो मां-बाप ने बहुत ठाटबाट से जन्म का जश्न मनाया था. . . इससे मेरे पति के मन में हुआ कि मैं बड़े बाप की बेटी हूं और वह. . . कम हैं. . . मेहंदी बहिन ने इज्जत की बात कही है न. मेरे पतिदेव के मन में भी यही बात उठ पड़ी. उन्हें अपना मान रखना था, इसलिए अपने बित से बाहर मुझे रिझाये रखने को खर्चा करना शुरू किया. मैंने बहुतेरा कहा लेकिन बात तो इज्जत की थी न! ऐसे कर्जा होने लगा. और फिर जुआ आ गया. शराब भी आयी. . . तो समझीं न आप कि इज्जत की बात थी. . . मेहंदी सच कहती हैं, इज्जत पैसे से बनती है. लेकिन पैसे की दुनिया मर्दों की बनायी हुई है और पैसे की इज्जतवाली बात भी उन्हीं की बनायी हुई है. हम औरतों की दुनिया वह नहीं है. न ही होनी चाहिए. हमारी दुनिया प्यार की है. लेकिन मर्दों के झूठ को हमने अपना भी सच बना लिया है. घर होता है न, वह घरनी से होता है. औरत घर की रानी है. दूकान, दफ्तर, बाजार में चला ले मर्द हेकड़ी. लेकिन घर की रानी हम औरतें हैं. ठीक है, पैसे से काम चलता है, राशन-पानी आता है. लेकिन बस पैसा वहीं तक है. आगे का सब काम प्यार-मोहब्बत से चलता है. यह मर्द की चालाकी है कि हम, तुम सबके सिर पर पैसे का भूत उसने लाद दिया है. और जिस बल पर आदमी हममें खिंचा चला आता है, उस प्यार की कीमत, उसकी ताकत हम भूल गयी हैं. . . आप बुरा मत मानना जब मैं कहती हूं कि इसीलिए हम औरतों की टके की कीमत नहीं रह गयी है. पैसा हमें खरीद लेता है, और हमारा तन-बदन मर्दों के खिलवाड़ के लिए बन जाता है, . . मैं आपसे पूछती हूं, आप बताइए कि जो गाहक बनकर मर्द आता है, आप उसे प्यार करती हैं कि नफरत करती हैं. . ."

कहकर रंजना चुप हुई. सभा में भी कुछ देर चुप्पी छायी रही.

"बताइए, प्यार करती हैं कि नफरत करती हैं?"

कोई नहीं बोला तो सकीना ने कहा, "प्यार कैसे कर सकती हैं? बस चले तो हम उसका गला घोट के रख दें."

"और गला नहीं घोंटती आप, उल्टे रिझाती-मनाती हैं. . . . कहिए, नहीं?"

इस पर कई कोनों से कई आवाजें उठीं, लेकिन मालती का बोल सबसे ऊंचा था, "पेट के लिए यह सब हमें करना पड़ता है."

"झूठ कहती हो तुम मालती!" रंजना ने मानो डपट से कहा.

"दूसरी आप सब लोग भी शायद यही कहना चाहती हो न? मगर यह झूठ है. नफरत करने की मजबूरी आपके लिए कौन पैदा करता है? मैं कहती हू, खुद आप. . ."

कोई बीच में बोली, "यह मर्दुए. . ."

लेकिन उसकी आवाज एक साथ उठ खड़े हुए शोर में दब गयी. आशय इस शोर का था कि नफरत करके हम लोग रह जाती हैं, यही गनीमत है. क्या करें? पैसा मिलता है तो पेट पलता है. नहीं तो. . .

रंजना ने शोर होने दिया और वह सुनती रही एक भी उनमें नहीं थी जो न मानती हो कि मर्द नफरत का ही हकदार है, उसी ने हमारा यह हाल किया है.

रंजना ने कहा, "मर्द ने हमारा यह हाल किया है, और हमने?"

"क्या करें? यह पापी पेट. . ."

रंजना ने बीच में ही बात को तोड़ दिया और डांट के कहा, "पेट नफरत करने को कहता है? पैसे से पलता है, ठीक है. पर पेट तो नफरत नहीं करा सकता."

किसी को कुछ समझ नहीं आ रहा था. उन्हें लग रहा था कि यह खाती-पीती, मोटर में चलनेवाली औरत हमें यह क्या कहे जा रही है. भला पूछो कि मरद पैसा देकर हमें खाने-सताने आता है. और हमें उसके लिए रीझ-रिझाअल का नाटक करना पड़ता है तो इस बेबसी के लिए हम उसे कोसें भी नहीं? अपने भाग्य को कोसती हैं लेकिन यह सब हमारी दुर्गत करनेवाला तो वह मरद है.

रंजना ने कहा, "आपकी बात मैं समझती हूं, मानती हूं. आप हममें कितनी हैं जिनकी अपनी दूकान हो. मुझे छोड़ दें तो आपमें दो-चार ही ऐसी होंगी. लेकिन बाकी सब तो बिकनेवाले माल की तरह हैं. तन-बदन हमारा-तुम्हारा नहीं है, उसका है जो खरीदने आता है. . . . मैं पूछती हूं, यह हालत कैसे हुई है? इसलिए हुई है कि हमने आदमी को नहीं चाहा, उसके पैसे को चाहा. आदमी ने यही धोखा हम सबके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघुकथा

एक और बलात्कार

▣ भगवतीप्रसाद द्विवेदी

गांव में कदम रखते ही पिघले शीशे की भांति एक खबर मेरे कानों में आ घुसी कि सुनयना आजकल अस्वस्थ चल रही है. धत तेरे की! क्या सोचकर शहर से चला था और यह क्या सुन रहा हूं. शहर की ससुरी आबो-हवा ही कुछ ऐसी है कि दिल में एक अजीब-सी प्यास जाग जाती है, फिर तो न चाहते हुए भी सुनयना के पास आना ही पड़ता है. वैसे, चाहूं तो उसे शहर में भी रानी बनाकर रख सकता हूं, पर न जाने क्यों, आज तक उससे मेरा तालमेल ही नहीं बैठ पाया. जाहिल बीवी के साथ मैं भला कैसे सामंजस्य स्थापित करूं! पर संस्कार ससुरा रग-रग में घुन-सा इस कदर घर कर गया है कि सुनयना से संबंध-विच्छेद की बात मैं सोच भी नहीं पाता.

मुझ पर नजर पड़ते ही कराहती हुई सुनयना हड़बड़ाकर उठती है और मेरे पैरों की धूल अपनी मांग में भर लेती है. मैं मुंह बिचकाकर उसका हाल-चाल पूछता हूं, नाड़ी टटोलता हूं, फिर उसी वक्त डाक्टर को लिवाने की खातिर चल पड़ता हूं. रास्ते भर यही सोचता रहता हूं कि काश! सुनयना मेरा जल्दी पिंड छोड़ देती और मैं किसी पढ़ी-लिखी शहरी लड़की से शादी कर पाता!

रात में मैं सुनयना के बगल में ही एक दूसरी चारपाई पर लेटा हुआ हूं. ढिबरी बुझा दी है. रात की स्याही गाढ़ी हो चली है. मन की भूख शरीर पर हावी हो रही है.

"सुनयना, सो गयी क्या?" मैं आहिस्ता से आवाज देता हूं.

"ऊं हूं!"

"मुझे कल ही वापस लौटना है."

मगर वह चौंकती नहीं. लगता है, जैसे उसे सब-कुछ पता है. मेरा इरादा भी शायद वह भांप लेती है. तभी तो उसकी जबान से एक मरियल-सा स्वर फूटता है, "इसी पर आ जाइये ना!"

मैं तत्काल पलंग पर पहुंच जाता हूं. अंदर-ही-अंदर कुछ कुलबुलाने लगता है और मेरे हाथ उसके बदन पर केंचुए की मानिंद रेंगने लगते हैं. उसकी देह आग-सी तप रही है. फिर भी विरोध में न उसके हाथ उठते हैं, न आवाज ही फूटती है.

अचानक सुनयना के गले से फूटी हिचकी को सुनकर मेरे हाथ अनायास उसके गालों की तरफ यंत्रवत चले जाते हैं. उसकी आंखों से बहता आंसुओं का सैलाब एक बारगी मुझे अपने साथ बहा ले जाता है. पर जल्दी ही मैं अपनी इस कमजोरी पर काबू पा लेता हूं जैसे अनजान बना सा अपनी हरकतें फिर से शुरू कर देता हूं. □

लिए पैदा किया है कि खुद आदमी से पैसा बड़ा है. इस धोखे में वह खुद मर रहा है. हम मर रही हैं, और. . . सुनिये, मैं आपको बताना चाहती हूं कि दुनिया इसी धोखे में आज पूरी की पूरी अपने को खत्म कर देने के नजदीक आ गयी है."

यह कुछ ऐसी आवाज में कहा गया था कि औरतें सब सकते में रह गयी थीं. उन्हें लगा कि बात कुछ बहुत बड़ी है. क्या है यह उनकी समझ में नहीं आया. पर कुछ है जरूर वह बात कि सबको सुन्न कर गयी. है. इस सकते की हालत को रंजना ने भांपा. उसे यह कुछ सुहाया भी. लगा कि जैसे वह स्वयं और उसके साथ ही सारी सभा किसी ऊंचे संदर्भ पर आ लगी है.

और उसने कहा, "आदमी अकेला पैदा नहीं हुआ. साथ औरत भी बनी. फिर दोनों से यह सृष्टि पैदा हुई. जो कब से चल रही है और अंत तक चलेगी. तब क्या पसा था? लेकिन प्यार था. सुनती हैं आप, प्यार से सिरिष्टि बनती है. मां आप बनती हैं, मर्द तो नहीं बनता. मां बच्चे को पेट में पालती है और फिर उसे जन्म देती हैं. आदमी का वह बच्चा जानवर की तरह नहीं होता कि भाग निकले. . . उसको पालना-पोसना पड़ता है. जानवर आजाद हैं. इंसान प्यार से आजाद नहीं हो सकता है. तो सुनती हैं आप, मैं आपसे कहती हूं कि यह बड़ा जाल-जंजाल पैसों का आदमी ने पैदा किया है और जिसमें वह खुद अब फंसकर हांफ रहा है. उस जाल को आपको तोड़ना है. हमको, हम औरतों को तोड़ना है. प्यार में ताकत है कि वह उसको तोड़ के घर दे. मर्द भटक सकता है, औरत अपने प्यार के धरम से छूट नहीं सकती. छूटे तो सोचो, परलय नहीं आ जायेगी? बच्चे कैसे बनेंगे? क्या होगा दुनिया का? वह चलेगी. . .तो सुनिये, चल रही है सृष्टि हमारे हमारे बल पर. आदमी लड़ता है, लड़े. पर जब तक हम हैं, परलय नहीं आयेगी? . . लड़ाई अगन बम को भी हमें नहीं लील पायेगी. . ."

रंजना थमी. सभा में अजब वातावरण छा गया था. टकियाई रंडियां जो अपने को समझे थीं, वे वे न रह गयी थीं. उसे स्वयं भी लगा कि वह स्वयं से उठ आयी है. लेकिन भावना से नहीं चलेगा, रहना जमीन पर होगा.

और उसने कहा, "आदमी जो आता है, आपको चूसता-चाटता है, क्या समझती हैं वह आपको प्यार करता है? नहीं, नफरत करता है. आप नाटक करती हैं, वह नाटक करता है. दोनों अपने लिए धोखा रचते हैं. और नफरत की गंध भरते-फैलाते हैं, अपने में और बाहर सारे में. वह पैसा देता है. . . आप लेती हैं और इस लेन-देन का नतीजा होता है कि दोनों एक दूसरे को नासते-कोसते हैं. और जहर छा जाता है दुनिया में!" वह फिर ठहरी, सब पर निगाह फेरी और बोली, "आप चाहें तो यह आज भी बंद हो सकता है."

उस कमरे में गिचपिच जमा हुई औरतें रंजना को घेरे उसे देखती रह गयीं. बात जरूर कुछ थी कि वे वे न रह गयी थीं. पर उन्हें समझ न आ रही थी. उनकी उस पर टिकी निगाहों को उसने पहचाना, बोली "जो आता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं पूछती हूं उसको क्यों आप प्यार नहीं कर सकतीं? सुनिये, वह भटका हुआ आया है. दुनिया से उसे धक्के-झटके मिले हैं. घर में उसे नहीं मिला है वह, जो चाहिए उसे. उसे अपनापन भारी हो गया है. भीतर वह बेहद दुखियारा है. अपने को सहार नहीं पा रहा है. कहीं अपने को झोंक रहना चाहता है. क्या आपकी निगाह उसके पैसे से हटकर वहां नहीं जा सकती, जहां उसका दुःख है? पैसा तो उसे छोड़ना ही है. पसा कहीं भागा नहीं जायेगा. पर जिस दुःख को छुवोने के लिए भटका आया है वहां, क्या आप उसे कुछ मरहम नहीं दे सकतीं ? पूछिये जब वह अकेला बंद है आपके साथ कि उसके घर में कौन-कौन हैं? कि कितना कमा लेते हो? और घर का हाल क्या है? घर में अनबन तो नहीं है? पूछिए और मन के बोझ से उसे जरा हल्का होने दीजिये अपने को. पसा आप पे फेंककर हड़बड़ी में, जिस तरह वह अपने को खारिज करता है, वह असल चीज नहीं है. हम और आप जा सकें वहां कि जो पीछे है, और असल है, तो आप घाटे में नहीं रहेंगी." उसकी आवाज एकाएक धीमी हो आयी, मानो सांस लिया और बोली, "नहीं, खोयेंगी आप कुछ नहीं, बल्कि देखेंगी कि नफरत की जरूरत नहीं है. हमदर्दी चाहिए, प्यार चाहिए और आप दे सकती हैं."

औरतें सुन रही थीं. समझने की कोशिश कर रही थीं. लगता था कि कुछ-कुछ समझ में आ तो रहा है. यानि यह कि जो नाटक होता है उसकी जगह असल चीज को लाया जा सकता है. वह असल कि जो औरत-मर्द को एक दूसरे से मिलता है और जिस पर दुनिया टिकी है और फिर भी उन आंखों में अविश्वास था, अचरज था. रंजना ने कहा, "मुझे देखिये. मैं आयी हूं. मेरे यहां पांच जने काम करते हैं. पैसा मेरे पास बहता हुआ-सा आता है. . . मैं क्या करती हूं? क्या काम-धाम करती हूं? क्या बेचती हूं? कुछ भी तो नहीं. . . पापी पेट क्या मेरे पास नहीं है?. . . पर पेट ही हम नहीं हैं. हम सबमें कुछ और भी है. . . मेरी गिरस्ती लड़खड़ा गयी थी. मैं उससे बाहर आ गयी. . . अकेली थी और दुनिया सामने थी. ठीक है कि पढ़ी-लिखी थी कि और कहीं भी काम मुझे मिल सकता था. . . लेकिन मैंने सोचा कि मैं औरत हूं और मेरे पास प्यार की दौलत है. . . उसके सामने पैसे की दौलत हेय है. औरत होकर क्या मैं इतना नहीं जान सकती! बस इस भरोसे निकली और तय किया कि आदमी को जरूरत है औरत की, तो वह प्यार पाने के लिए है. तो मुझसे वह हर आदमी को मिलेगा. . . और आज ये हूं कि मुझे कुछ बेचना नहीं पड़ता और मुझे किसी तरह की कमी नहीं है. मर्द को औरत चाहिए उसके तन के लिए, लेकिन मैं जानती हूं कि उससे ज्यादा चाहिए वह उसके अपने मन के लिए. वहां जहां कि वह अकेला है, स्त्री का प्यार ही पहुंच सकता है. वह जगत तन में ही है उसके पास. . . सोचो. . बीवी के रहते हुए क्यों आदमी जाता है, भटकता हुआ इधर-उधर? हमारे-तुम्हारे पास? उस भटकन की जड़ में है 'मैं'. उसी को बिखेर देना चाहता है, तोड़-ताड़कर फेंक देना चाहता है किसी के आंचल में. मैंने आदमी की उसी भूख को विचार में लिया

"मर्द को औरत चाहिए उसके तन के लिए, लेकिन मैं जानती हूं कि उससे ज्यादा चाहिए वह उसके अपने मन के लिए. मैंने आदमी की उसी भूख को विचार में लिया. . ."

क्योंकि तन की भूख उसी का एक कन है. कुछ और है जो उसे धारे है?. . . क्यों, आप समझ रही है न! मेहंदी बहिन, समझ रही हो न?"

मेहंदी बाई ने कहा, "नहीं. हममें कोई आपकी बात नहीं समझती हैं. . . आप नहीं जानती हैं, दाने के लिए, पैसे के लिए तरसना क्या होता है? जीने के लिए क्या-क्या भोगना पड़ता है. आप कैसे जानेंगी? मां-बाप अमीर थे. पति अफसर और पैसा, वह प्यार में आप पर लुटाया किया. इसी से गिरस्ती में आपकी दिक्कत हुई, यही न. . . ? हम लोगों की कहानी दूसरी है."

रंजना ने सुना. वाणी में उसके व्यथा अभी थी. "कहानी दूसरी होगी," उसने कहा, "मैं दूसरी नहीं हूं. हम सब औरतें हैं. कहानियां अलग-अलग होंगी. औरतपन से एक हैं. औरत प्यार में बसती है, प्यार में जीती है. कहीं कुछ भी और नहीं —कुछ भी और नहीं करना है, मेहंदी. . . मैं सबसे कहती हूं, तुम्हें भी कुछ और नहीं करना है. जो आये उसके दुःख को ढूंढो, उस दुःख को पाओ. और देखोगी कि अभाव तुम्हारा भर गया है और तुमको लग रहा है कि चाहे तवायफ हो, पर अंदर तुम्हारे असल औरत जाग रही है. मैं तो कहूंगी कि तुम गाहक से कह दो कि पैसा खाला को दीजिये, मुमानी को दीजिये, मैं तो यों ही आपकी हूं. . . कहूंगी कि बात करो उससे, उसके घर-बार की, दुख-सुख की और मालूम होने दो उसे कि तुम पैसे की नहीं, उसकी हो. . . आप लोगों ने मुझे अपना समझकर बुलाया. हां, मैं आपकी हूं. आप कुचली हैं, पामाल हैं, बेगैरत हैं, सबकी दुरदराहट की पीकदान हैं. . . लेकिन मैं जानती हूं कि आप थामे हुए हैं ऊपर उस सारी चीज को जिसे तहजीब माना जाता है. . . चलते-चलते आपको याद दिलाती हूं कि पैसे का जो फरेब दुनिया को जकड़े हुए है, उसको आप-हम औरतों का प्यार ही तोड़ सकता है और आगे आनेवाला जमाना शायद उसी का इंतजार कर रहा है. . .

कंठ उसका भर आया था. आवाज भारी हो गयी थी. आगे बोलना जैसे हो ही न सकता हो. कहती हुई अपनी जगह से उठी, "आप सबको बंदगी, आदाब, परनाम!" लेकिन उसने किसी को अपना पांव न छूने दिया. जो झुकी उसको अपने गले लगाया और. . .

अगले अंक में

रंजना की मुलाकात एक पुराने फ्रांसीसी मित्र से . . . अस्तित्ववाद की एक नयी व्याख्या के साथ आप मिलेंगे, एक नयी रंजना से. . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गली हनुमान गढ़ी (अयोध्या): बिरहमन साहिबे ईमान नजर आते हैं

▣ बाला दुबे

राम के भक्तों का गढ़—अयोध्या. मंदिरों का सिलसिला जिसे छोटी-छोटी गलियां पिरोये हुए हैं जैसे किसी बेतरतीब माला में जगह-जगह मनिये लगा दिये हों. एक गली के छोर पर ऊंची पहाड़ी पर स्थित हनुमान गढ़ी जिसकी सीढ़ियां चढ़ते-चढ़ते पहलवान तक हांफ जायें. हनुमान गढ़ी के चारों ओर बरामदे, कोठरियां, फले-फैले आंगन और भुरभुरी मिट्टी भरे अखाड़े. हनुमान के ब्रह्मचर्य-व्रत का संकल्प मन में बसाये भीमकाय वैरागियों का झुंड. गठीले शरीर, सपाट चौड़े सीने, भरी मशक जैसी जांघें, कंधों से जुड़ी सांड जैसी गरदन. दिन भर कुश्ती, लाठी, तलवार का रियाज—भांग ठंडाई के बाद मालपुए-खीर का डटकर भोजन. ऐसा लगता मानो सैकड़ों वीर-भद्र वहां डेरा डाले पड़े हों. शाम के समय घंटे घनघना उठते, झांझ झनझना उठतीं और अपार बल के मद में डूबे हुए वैरागी खुली आवाज से गाते:

'भूत पिशाच निकट नहीं आवें
महावीर जब नाम सुनावें
संकट मिटै हरै सब पीरा
जो सुमरै हनुमत बलबीरा.'

पर दूसरे ही दिन उन्हें ज्ञात हुआ कि उनके मंदिर की शांति भंग करने कुछ भूत पिशाच निकट आने का प्रयास करने लगे हैं.

सन् 1855! शाह गुलाम हुसैन और उनके जमूरे मौलवी मुहम्मद शाह ने दावा किया था कि हनुमान गढ़ी से सटी हुई जगह नमाज पढ़ने के लिये औरंगजेब के जमाने से थी. हालांकि अब उसकी चहार-दीवारी टूट-फूटकर बरबाद हो चुकी है. यह उठता हुआ बबाल देखकर सुल्तानपुर के नाजिम आगा अली ने उन्हें समझाया कि इस मामले को बादशाह वाजिद अली शाह के पास भेजा जा रहा है और जैसा फैसला अवध दरबार करेगा वह बतला दिया जायेगा. शहर कोतवाल अयोध्या मुनइम बेग खां ने भी तहकीकात करने का वादा किया पर 28 जुलाई, 1855 को गुलाम हुसैन ने 300 आदमियों की भीड़ इकट्ठी कर ली और ऐलान कर दिया कि हम आज हनुमान गढ़ी पर ही नमाज पढ़ेंगे. जब वैरागियों ने यह सुना तो वे तालें ठोंककर इकट्ठा हो गये. इस उड़ती हुई खबर को सुनकर ही फैजाबाद से कैप्टिन आर अपनी पल्टन और एक तोप को लेकर अयोध्या आ धमका और बीच में खड़ा हो गया. और उसी दिन कैप्टिन हर्सी भी दोपहर तक आ पहुंचा. दोनों ने यही समझाया था कि अवध के बादशाह का फैसला आ जाने दो तभी कुछ कार्यवाही की जायेगी. पर गुलाम हुसैन के सर पर तो भूत सवार था. तभी यह मश्विरा उठा कि वे पुरानी चहारदीवारी पर एक दरवाजा लगायेंगे. वैरागियों ने जब ऐतराज किया तब मुसलमानों और हिंदुओं में झगड़ा भड़क उठा. भीड़ ने हनुमान गढ़ी पर कब्जा करने के लिये एड़ी चोटी का जोर लगा दिया पर वैरागी पहल-वानों ने उनकी दाल नहीं गलने दी.

वे वापस भाग गये और मस्जिद के हाते में हथियार लेकर जमा होने लगे. कैप्टिन आर और कैप्टिन हर्सी ने मामला सुलझाने का बहुत प्रयास किया पर मुसलमान अपनी जिद पर अड़े रहे कि हथियार नहीं फेंकेंगे. तब वैरा-गियों की आंधी उन पर छा गयी. कोई सत्तर मुसलमान मारे गये. शाह गुलाम हुसैन और भड़काने वाले कुछ हमदर्द दीवार फलांगकर भाग गये. फैजाबाद में यह खबर आग की तरह फैली और एक विशाल भीड़ जमा होकर बढ़ने लगी. तहसीलदार मिर्जा आले अली के आदमियों से भी वे भिड़ गये पर तभी शहर कोतवाल के सिपाही भी आ गये जिन्होंने हमलावरों को भगा दिया.

लखनऊ के रेजीडेंट कर्नल स्लीमन के हाथों बटेर लग गयी. 1 अगस्त, 1855 को वह वाजिद अली शाह के पास पहुंचा था. अमन में खलल की बात जानते हुए वाजिद अली शाह ने हुक्म जारी कर दिया कि सब आफत की जड़ शाह गुलाम हुसैन ही है, लिहाजा उसे फौरन गिरफ्तार किया जाये. फिर वाजिद अली शाह ने अपनी चार बटालियन और बीस तोपें भी भिजवा दीं कि हनुमान गढ़ी पर अगर हमला हो तो उसे नाकारा कर दिया जाये.

वाजिद अली शाह ने जब मौलवी निहालउद्दीन, हफीजुल्ला और अली मुहम्मद को फैजाबाद तहकीकात करने भेजा तो उन्होंने हस्ब मामूल यही कहा कि हनुमान गढ़ी पर पहले एक मस्जिद हुआ करती थी और एक बार बुरहान उल मुलक के वक्त में भी यह चकड़वा उठा था. पर जब रेजीडेंट ने बाकायदा एक कमेटी बनाकर 7 अगस्त को तहकीकात करवायी तो राजा मान सिंह को हनुमान गढ़ी

'मौकापरस्तों का जाल बेखौफ फैलता जा रहा था. न वे बादशाह वाजिद अली शाह से खौफजदा थे न धर्म और ईमान से. दोनों ही पक्षों की ओर से कई राजे-रजवाड़े मदद को तैयार थे. देखते ही देखते झगड़े ने युद्ध का रूप ले लिया और युद्ध से फायदा होने वाला था एक तीसरे ही को, यानि अंग्रेज गवर्नर जनरल को... मगर बादशाह वाजिद अली शाह की इंसाफ पसंदगी ने देखते ही देखते सबके मनसूबों पर पानी फेर दिया था...'

गलियां : जहां इतिहास कैद है !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के महंत बलराम दास, किशन दास, बंसी दास और देवी राम ने बतलाया कि यहां पर कोई मस्जिद नहीं थी. स्वयं कोतवाल मिर्जा मुनइम बेग ने तस्लीम किया कि पिछले 25–30 साल से वे कोतवाल हैं और उन्होंने ना ही कभी वहां मस्जिद देखी और ना ही उसके बारे में कभी सुना. जुम्मन खां मैमार ने बयान दिया कि पिछले 16 साल से वह उसी क्षेत्र में मरम्मत करता आ रहा है पर आज तक उसने वहां मस्जिद कभी नहीं देखी. फिर जब वैरागियों ने वाजिद अली शाह के दादा परदादा मंसूर अली खां सफरदजंग सूबेदार अवध और शुजाउद्दौला, अवध के नवाब वजीर के हाथों लिखी सनदें दिखायीं तो पता लगा कि नवाबों ने न सिर्फ हनुमान गढ़ी बनाने की इजाजत दी थी बल्कि मंदिर के बनवाने में मदद भी दी थी. पहली सनद सफदरजंग ने अभयराम वैरागी को दी थी और दूसरी सनद भी अभयराम वैरागी को शुजाउद्दौला ने दी थी. सनदों पर दस्तखत और शाही सील लगी थी.

फिर यह मामला गवर्नर जनरल की जानकारी में भी आ गया. गवर्नर जनरल पहले से ही अवध हड़पने की भूमिका बना रहा था. इस मामले से उसके हाथ और भी मजबूत होने लगे. उसे मालूम हो गया था कि आस पास के क्षेत्रों में मुसलमान इकट्ठे होने लगे थे और सुहाली में तो अमीर अली ने मंदिरों में शंख बजाने पर मूर्तियों को तालाब में फेंक दिया और पुजारियों को पीटकर गांव से बाहर निकाल दिया. और इसी अमीर अली ने जैदपुर के सैयद मुसलमानों को भी पीटा कि जब तक हनुमान गढ़ी पर मस्जिद नहीं बन जाती तब तक उन्होंने ताजिये निकालने की हिम्मत कैसे की.

अमीर अली फिर नवाब गंज, खेरी की तरफ 2000 की भीड़ लेकर बढ़ा और उसने गनेश दास वैरागी के घर में आग लगा दी और उसकी गाय को तलवार से जख्मी कर दिया. यह सुनकर लखनऊ के वजीरुद्दौला ने 4 अक्तूबर, 1855 को अंग्रेज कैप्टिन बनबरी को एक रेजीमेंट देकर भिजवाया कि किसी भी कीमत पर हनुमान गढ़ी की रक्षा करनी होगी. तीन दिन बाद वजीरुद्दौला अली नकी खां ने तहव्वर खान को भी एक पल्टन के साथ भेजा कि फसादी अमीर अली की भीड़ को आगे बढ़ने से रोका जाय और उन्हें सजा दी जाय.

जब हनुमान गढ़ी के महंत को पता चला कि कई तरफ से बाकायदा 'जिहाद' की आंधी उठती हुई अयोध्या की तरफ बढ़ रही है तो उसने भी गुहार लगायी. फलस्वरूप राजा साहब बांसा, प्यारेपुर, राम नगर, धनेरी और रानी साहब देवरा ने बहुत सारा धन और हथियार भिजवाये. यहां तक कि महाराजा ग्वालियर और जोधपुर ने पैसे के साथ साथ कई फौजी दस्ते भी भिजवाये. उधर बेगम साहब भोपाल जिहादियों की मदद पर थीं.

19 अक्तूबर को मौलवी साहब बांसा से दरियाबाद आ पहुंचे जहां वाजिद अली शाह की फौज उन्हें रोकने को खड़ी थी. एक बार फिर कहा-सुनी से निबटारा करने की कोशिश की गयी पर कुछ बात बनी नहीं. फिर 7 नवंबर, 1855 को मौलवी साहब रुदौली की तरफ मुड़े और तभी कैप्टिन बार्लो की उन्नीस-पाउंडर तोपें गरज उठीं. मौलवी के जिहादियों ने सूखे नाले होते हुए अंग्रेज कप्तान की तोपों पर हमला करना चाहा पर कप्टिन बार्लो के अनुशासित सिपाही धीरज धरे अड़े रहे. बड़ी घमासान लड़ाई हुई और जब कैप्टिन कटेनिया ने ठीक वक्त पर दो कंपनी से धावा बोला तब मौलवी के जिहादियों में भगदड़ मच गयी. अमीर अली मारा गया और उसके पांच सौ जिहादी भी सदा के लिये सो गये. वाजिल अली शाह की फौज के सोलह आदमी मारे गये और चौरासी घायल हुए थे. वाजिद अली शाह की रेजीमेंट के कैप्टिन हुसैन अली, शीतला बख्श, ठाकुर सिंह और गोंडा के ताल्लुकेदार राजा शेरबहादुर दिलेरी से लड़े थे.

लड़ाई जीत कर वे फिर गली हनुमान गढ़ी आये थे जहां सैकड़ों वैरागी मरने-मारने को तैयार खड़े थे. उनकी हिमायत में स्वयं वाजिद अली शाह की पल्टन भी जिहादियों के स्वागत के लिये भरी बंदूकें लिये तैयार डटी हुई थी.

पर जब जीते हुए सेना-नायकों ने उन्हें आकर बतलाया कि फिसादियों को खदेड़कर भगा दिया है तब सब हर्ष से चिल्लाये थे. और उसी दिन वैरागियों ने वाजिद अली शाह के लिये हनुमानजी से दुआ भी मांगी थी. □

• व्यंग्यचित्र : चित्रगुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखबारों की पुस्तकें

टूटे-उजड़े इंसानों की कहानियां कहती दो कथा-कृतियां

▣ **देवेश ठाकुर**

इतिवृत्त (उपन्यास) : जगदंबा प्रसाद दीक्षित, प्रकाशक : संभावना प्रकाशन, हापुड़-245101; उ.प्र. मूल्य : 25 रु.
बर्फ तथा अन्य कहानियां (कहानियां): सत्येन कुमार, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन 8 नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110002, मूल्य : 20 रु.

'इतिवृत्त' जगदंबा प्रसाद दीक्षित का 'कटा हुआ आसमान' तथा 'मुर्दाघर' के पश्चात प्रकाशित तीसरा उपन्यास है. अपने कथ्य और कथानक में यह पूर्ववर्ती दोनों कृतियों से भिन्न है. इसमें दीक्षित ने, अपने पिता की बीमारी का तार पाकर गांव जाने और वहां पिता की मृत्यु के बाद उनका दाह-संस्कार करके फिर शहर में लौट आने को विवश एक सामान्य वर्गीय शिक्षित नवयुवक की यात्रा-कथा कही है. लेकिन यह केवल एक अभागे बेटे की यात्रा-कथा ही नहीं है. इस यात्रा के माध्यम से दीक्षित ने बड़ी बेबाकी और निस्संगता के साथ समकालीन जीवन के बीच आम आदमी के जीवन में व्याप्त चतुर्मुखी शोषण, विषमता और अभाव को तो उभारने का प्रयास किया ही है. साथ ही आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त गांवों के उजड़ने और अपने पेट की भूख भरने के लिए उनके शहर की ओर भाग आकर अपना और भी दयनीय जीवन जीने की विवशता को शब्दांकित करने की कोशिश भी की है. पूरा उपन्यास अभावों की उदासी और उजाड़ से आक्रांत है और जिससे आज के आम आदमी की तस्वीर परत-दर-परत खुलती जाती है.

इस उपन्यास में दीक्षित की कोशिश यह रही है कि वह थोड़े में समकालीन जीवन की असंगति को पूरी संवेदना और प्रभावात्मकता के साथ प्रस्तुत कर दें भाषा पर मजबूत पकड़ के कारण इस कोशिश में थोड़े समय तक दीक्षित का लेखक सफल भी हो जाता है लेकिन उपन्यास के अंत तक आते-आते यह प्रभाव-प्रवणता शिथिल होने लगती है और जागरूक पाठक के दिल-दिमाग से भाषा का जादू क्षीण होने लगता है. इसलिए पठनीय होने के बावजूद पाठक को इससे चिंतन की कोई प्रेरणा नहीं मिल पाती. पाठक को चिंतन की प्रेरणा मिले—इसके लिए दीक्षित ने आरंभ में 'लेखकीय' के अंतर्गत इस उपन्यास की वैचारिक पष्ठभूमि भी प्रस्तुत की है जो उपन्यास की भूमिका न लगकर किसी राजनीतिक ग्रंथ का 'उपोद्घात' अधिक लगती है.

'इतिवृत्त' में प्रस्तुत लेखकीय चिंतना के बिंदुओं को कुछ इस प्रकार रखा जा सकता है : आजादी के बाद राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन में जिन सुधारों और आम आदमी की बेहतर जिंदगी की अपेक्षा बनी थी, वह एक थोथा सपना बनकर रह गयी. दूसरे, सामंती व्यवस्था धीरे-धीरे पूंजीवादी व्यवस्था में बदलती जा रही है और शोषण की प्रक्रिया और भी सूक्ष्म और तीव्र हो गयी है. आज के मशीनी युग ने व्यक्ति की संवेदना को समाप्तप्राय कर दिया है और आदमी से आदमी का रिश्ता दिन-ब-दिन शिथिल होता जा रहा है. अब संतान के पास इतना समय भी नहीं है कि वह अपने मरणासन्न पिता के दर्शनों के लिए शहर से गांव आने का समय निकाल सके. गांव उजड़ गये हैं. वहां की युवा शक्ति काम की तलाश में महानगरों में खाक छानती हुई और भी गली-सड़ी जिंदगी जीने के लिए अभिशप्त हो गयी है. पूंजीपतियों और साम्राज्यवादियों के मुनाफे को बढ़ाने के लिए देश में बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना की जा रही है और यह सब गांवों की आत्म-निर्भर अर्थ-व्यवस्था की कीमत पर हो रहा है. परिणामस्वरूप गांवों में रहनेवाला आम आदमी अपनी जड़ों और मिट्टी से उखड़ता चला जाता है.

निश्चित ही, दीक्षित ने इन सब तथ्यों को रेखांकित करना चाहा है. लेकिन महानगर से गांव तक की यात्रा-कथा में यह सब उतने प्रभाव से नहीं कहा जा सका है, जितने प्रभाव से इस गंभीर विषय की प्रस्तुति अपेक्षित थी. सामान्यतः पूरा उपन्यास गांव, गली, सड़क और इंसानों के उजेड़पन का वर्णन करता चलता है. संवेदनात्मक गहराई उसमें नहीं आ पायी है. न गहराई और न ऐसी मारक और शोषक व्याख्या के प्रति आक्रोश. बीच-बीच में दीक्षित ने हाट-बाजार, शराबियों और रंडियों के नाच के दृश्य भी दिये हैं. रंडी के नाच का वर्णन अनुपात के लिहाज से कुछ ज्यादा ही लंबा हो गया है.

'इतिवृत्त' में भी 'मुर्दाघर' की भांति कोई समाधान नहीं है. लेकिन इसकी भाषा दीक्षित के [illegible] उपन्यासों के मुकाबले अधिक [illegible] है. इसे यों भी कहा जा सकता [illegible] कि दीक्षित ने अपनी पूर्वदीप्ति तथा चेतना प्रवाही शैली का इस कृति में काफी परिष्कार किया है, जिसके कारण यह कृति पठनीय अवश्य बन गयी है.

'समाधान' का प्रश्न मैंने इसलिए उठाया है कि जिस यथार्थ को दीक्षित ने इस उपन्यास में अभिव्यक्ति देनी चाही है, उससे इस उपन्यास का पाठक-वर्ग खूब परिचित है. मार्क्सवादी दृष्टिवाले लेखक की कलम से पाठक इस यथार्थ का पुनर्परिचय ही नहीं, बल्कि इससे आगे इस समस्या के विश्लेषण, निदान और समाधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की भी अपेक्षा करता है. और समाधान इस उपन्यास में कहीं है नहीं. दूसरे, शैली में रूमानियत का अंश कुछ ज्यादा हो जाने के कारण पाठक में इस व्यवस्था के प्रति कहीं विरोध और उत्तेजना का भाव नहीं जगता.

▣

दीक्षित के 'इतिवृत्त' से भिन्न सत्येन कुमार का कथा-संसार एक अलग ही भूमिका पर, स्त्री-पुरुष संबंधों की भूमिका पर व्यक्त हुआ है. 'बर्फ तथा अन्य कहानियां' में सिर्फ छह कहानियां संकलित हैं. इनमें से 'वीरगति' और 'सजा' को छोड़कर शेष चारों कहानियां सामान्यतः स्त्री-पुरुष (पति-पत्नी अथवा तीसरे व्यक्ति) के शरीरिक मानसिक संबंधों को रूपायित करती हैं. 'वीरगति' एक ऐसे व्यक्ति के टूटने की कहानी है जो स्वंय तो सेना में रहा ही है लेकिन जिसने अपने दो बेटों को भी नियमतः सेना में भेजा है. दोनों सैनिक बेटों द्वारा वीरगति पाने के बाद वह अपने तीसरे बेटे को भी सेना में भेज देता है. लेकिन वह भी एक-दिन अपंग होकर लौट आता है और किराये की एक दूकान खोलकर अपनी आजीविका कमाने लगता है. जीवन यापन की इस नयी कोशिश में वह पुलिस अत्याचार का शिकार होता है और गलत ढंग से हवालात भेज दिया जाता है. पिता अपने इस बेटे को हवालात से छुड़ाने में पूरी तरह से टूट जाता है. उसका आत्मसम्मान धूल में मिल जाता है. एक वीर बाप की यह करुण गति ही इस कहानी का कथ्य है.

अन्य कहानियां अभिजात्य परिवेश के बीच स्त्री-पुरुष की आदि आकांक्षा से आपूर्ण हैं. इनमें पुरुष ही स्त्रियों को नहीं भोगते, बल्कि पुरुषों को स्त्रियां भी आदमखोर-सी बनकर भोगती है. 'खेल' की मोना इस आदमखोर प्रवृत्ति का प्रमाण है.

इन कहानियों में उच्च मध्ययुग के सभी उपादान-उपकरण मौजूद हैं. प्यानो की आवाजें, लैंप पोस्ट्स, खूब-सूरत बनी-संवरी खिलखिलाती हुई औरतें, पब्लिक स्कूल, एब्सट्रेक्ट सा ऑप्टिमिज्म, कोठियां, रैस्ट हाउस, गाड़ियां, कैनवस की कुर्सियां, शॉवर बाथ, बचकानी लड़कियों सी खनकती हंसी, खूबसूरत औरतों के अफेयर्स, वाइल्ड पार्टियां, पार्टी गेम्स, पति के मित्र से कुचले जाने की आकांक्षा, चांदनी, जंगली जानवरों और जंगल के बीच शारीरक भूख की तृप्ति, शिकार, चाय की ट्राली, स्पेशल गाइड, खिड़कियों के पर्दे, विजिटिंग कार्ड्स और बात-बात पर अंग्रेजी के उद्धरण—संक्षेप में यह कि वे सारी स्थितियां जो एक 'इलीट' परिवेश को आकार देती हैं—इन कहानियों में मौजूद हैं.

इन कहानियों में पति-पत्नी की रोजाना होनेवाली खटपट के बाद रात की गहराई में उनके जिस्मों का गुंथना है. विवाहित होने के बाद भी पुरुष के अनेक महिलाओं के साथ चलनेवाले अफेयर्स हैं, अपने पति के मित्र से संतान प्राप्त करके, उसे बार-बार भोगने और उसके द्वारा कुचले जाने की जंगली चाह है और है विवाहित पत्नी का अपने मित्र के साथ किसी हिल-स्टेशन पर आकर अपने अकेलेपन से निजात पाने की कोशिश.

जैसा कि मैंने पहले भी कहा है, दीक्षित की भाषा बहुत अधिक सहज और अपने कथानक के अनुकूल है, वहीं सत्येन की भाषा भी अपने परिवेश और पात्रों के अनुकूल है. सत्येन की कहानियां यदि उनकी रूमानी प्रवृत्ति का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं तो दीक्षित का उपन्यास आम आदमी के दुखों, चिंताओं के प्रति प्रतिबद्ध प्रतीत होता है. लेकिन सत्येन की कहानियों में जहां कहानी-कहने की (चाहे वह जिस्मानी कहानी ही क्यों न हो) एक ईमानदार और पारदर्शी दृष्टि दिखलाई पड़ती है, वहां दीक्षित के उपन्यास में पाठक को जबर्दस्ती एक दिशा विशेष में सोचने की प्रेरणा देने की कोशिश साफ झलकती है. ▣

एक व्यक्तिगत केस-हिस्ट्री

▣ बलराम

'देहाश्रम का मनजोगी' पहला उपन्यास है उदीयमान कथाकार प्रबोध कुमार गोविल का और इसकी खूबी यह है कि पाठक से यह अपने आपको पढ़वा लेता है. (हालांकि यह क्षमता प्रायः सभी फुटपाथी उपन्यासों में भी पायी जाती है.) इसके अलावा इसकी एक खूबी और है—राजकमल चौधरी के कुत्सित लेखन के जगह-जगह पर उगे हुए कुकुरमुत्ते. (जिनका स्वागत करने को हिंदी का समकालीन पाठक तैयार नहीं.) कथानायक करण के माध्यम से लेखक ने कैशोर्य के इर्द-गिर्द जिस कथानक को बुना है, वह नितांत असहज (और कहीं कहीं अ[illegible] भी) है और शादी, वह भी एक सर्वथा अनजान और अपरिचित (प्रेम का सवाल ही नहीं है) विधवा लड़की से, करने का कथानायक का फैसला और फिर पिता का अनुमोदन भी) हमारी आज की सामाजिक व्यवस्था में कतई विश्वसनीय नहीं लगता, हालांकि 'ऐसा नहीं होना चाहिए' का भाव पाठक के मन में नहीं उठता. पर ऐसा आज हो कहां रहा है? उपन्यास एकदम व्यक्तिगत 'केस-हिस्ट्री' सा लगता है. समलिंगी और विषमलिंगी सेक्स संबंधों की भूल-भूलैया में भटकता रोमानी उपन्यासों के समानांतर चलता-चलता यह उपन्यास अंततः बंबइया फिल्मों के अधकचरे अंत को प्राप्त होता है और एक उभरते हुए कथाकार के एक गंभीर रचनाकार बन पाने की सारी संभावनाओं पर पानी फेर देता है, खासकर तब और, जबकि एक अच्छे कहानीकार के तौर पर भी लेखक अपना कोई स्थान न बना पाया हो. ▣

▣ देहाश्रम का मनजोगी : प्रबोध कुमार गोविल, प्रकाशक : दिशा प्रकाशन 138/16 त्रिनगर, दिल्ली-35, मूल्य : 25 रुपये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत अजीब कहानी है . . . मैं रंगमंच में आना नहीं चाहती थी. . . इत्तिफाकन एन. एस. डी. में एडमीशन लेकर. . . यहीं की होकर रह गई. . . रंगमंच की महत्वपूर्ण अभिनेत्री सुरेखा सीकरी से सूत्रधार की दिलचस्प मुलाकात–

पिछले अंक में सूत्रधार ने आपकी मुलाकात 'मंडी हाउस' की सभ्यता से करायी थी. इसी 'मंडी हाउस' में तमाम लोग हैं. . . जिन्हें आप बहुत हद तक जानते भी होंगे. . . सुनते भी होंगे...इन्हीं में से एक नाम है–सुरेखा सीकरी. सुरेखा जी पिछले एक दशक से रंगमंच से जुड़ी हुई ऐसी अभिनेत्री हैं जिनके बारे में कोई भी बात गैर जिम्मेदाराना ढंग से कह देने का मतलब है समूचे रंगमंच के साथ बेईमानी करना. मगर इसी शख्सियत का यह कह देना कि 'मैं इंटरवियू नहीं देती'. . . एक बुनियादी सवाल की तरफ इशारा करता है. सुरेखा जो कुछ कर रही हैं. . . और जिस तरह से कर रही हैं. . . इसकी जानकारी 'सारिका' के जरिये पाठकों–दर्शकों तक पहुंच जाये, तो इसमें हर्ज क्या है! . . . पर तभी उसका जुगाड़ू दिमाग आगे आ गया, **जब आप एक प्रोडेक्शन में काम कर रही होती हैं, उस वक्त अभिनय के लिए मिले हुए चरित्र को आत्मसात किस तरह से करती हैं?**

चरित्र के लिए, उसी के मुताबिक बहुत हद तक जीना पड़ता है. लगता है कि जब तक इस चरित्र को हम भीतर से स्वीकार नहीं कर पाते तब तक रंगमंच के दर्शकों के साथ बेईमानी यही कोशिश रहती है कि जब एक प्रोडक्शन से दूसरे प्रोडक्शन में जायें तो पहली चीजों को वहीं छोड़. . . आगे निकल जाएं. कभी-कभी यह होता है. . . पर कभी कभी यह नहीं भी हो पाता.

सूत्रधार परेशान हुआ कि यह भी कोई 'पदार्थ' है कि वहीं छोड़ा और आगे निकल गये. . . आखिर संवेदना का भी कोई रिश्ता होता है! उसे अपनी भावुकता को एक बारगी फिर से झटक देना पड़ा.

कोई उदाहरण देना चाहेंगी आप... जब एक चरित्र से दूसरे चरित्र में जाते वक्त परेशानी महसूस हुई हो!

अजीब दास्तान है मेरी यहां पहुंचने की

सूत्रधार ने यह वाक्य सुना, पर वह मुस्कुराया तनिक भी नहीं. . . हां, उसे अपनी बिरादरी पर तरस जरूर आया. उसने तुरंत पासा फेंकते हुए कहा, 'देखिए, मुझे आपका इंटरव्यू-फिटरव्यू नहीं लेना है. . . मैं तो इत्मीनान से बैठकर कुछ बातचीत करना चाहता हूं आपसे. . . बस्स ऽऽ. . .' और बेचारी सुरेखा सीकरी बैठ ही गयीं बतियाने के लिए. पता नहीं उस वक्त इस अभिनेत्री ने क्या सोचा होगा, पर यह बैठक सूत्रधार के लिए बहुत जरूरी और सुखद रही. . . क्योंकि इसके बाद सूत्रधार यह महसूसने पर विवश हो गया कि रंगमंच के लोगों को, महज रंगमंच पर ही देखकर उन्हें जान लेने की बात सोच लेना एकदम गलत है. उससे अलग-थलग भी उनकी एक भरी-पूरी जिंदगी है जिसे ये लोग परदे के पीछे जीते रहने पर विवश हैं.

दरअसल, सूत्रधार जानना यह चाहता था कि रंगमंच की भाषा में की काफी गुंजाइश रह जाती है. . . और अगर आपने मेरे 'प्ले' देखे हैं तो आपने पाया होगा कि थिएटर के प्रोजेक्शन के जितने भी नियम-कानून हैं. . . उन्हीं के तहत मैंने अलग-अलग ढंग से चरित्रों को जिया है. इसके लिए यह जरूरी नहीं है कि हम मंच पर सुरेखा सीकरी की तरह नजर आयें. . . उसके लिए जरूरी है कि हम जिस तरह प्रस्तुत होना चाहते हैं, वही दिखें.

आपको एक चरित्र से दूसरे चरित्र में जाने में परेशानी नहीं होती? 'मुख्यमंत्री' में आपने एक लेफ्टिस्ट पत्रकार की भूमिका अदा की और 'महाभोज' में आप मुख्यमंत्री की पत्नी हैं. . . यानि जमना बहन. . . . !

जब हमें स्क्रिप्ट मिलती है, तब से मंच तक पहुंचने के बीच बहुत सारी स्थितियां हैं. यह ठीक है, कि जिस चरित्र को हम आत्मसात करते हैं, बहुत दिनों तक उसका असर दिमाग पर बना रहता है, पर एक व्यावसायिक कलाकार होने के नाते हमारी बराबर मैंने बहुत हद तक यही चाहा है कि ऐसा न होने पाये. पर 'बीवियों का मदरसा' और 'लुक बैक एंगर' के साथ ऐसा ही हुआ. अल्काजी साहब की जो ट्रेनिंग थी. . . उसके तहत काम करने का मौका हम लोगों को मिला. वे जिस हद तक चरित्र को प्रभावपूर्ण

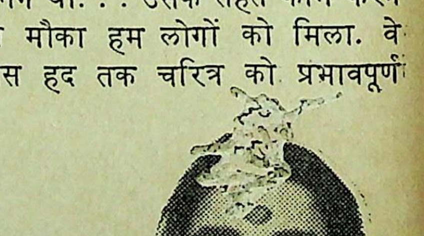

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

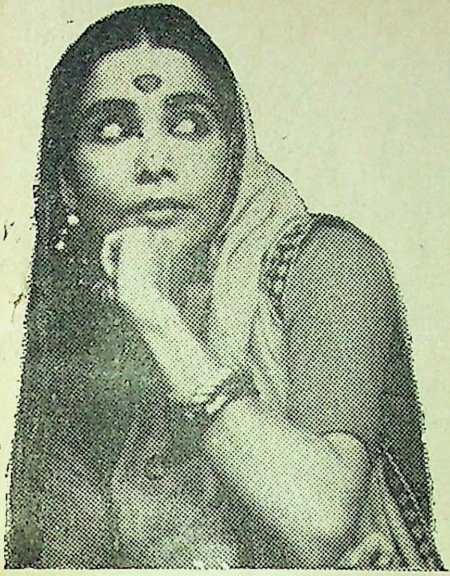

बना देते थे. . . तब लगता था कि दूसरे चरित्र को आत्मसात कर पाने में थोड़ी परेशानी कभी-कभार हो रही है. . . लेकिन इस तरह की कोई खास परेशानी नहीं हुई.

बात जब डायरेक्टर्स की आ ही गयी है तो मैं पूछना यह चाहता हूं कि थियेटर के लिए जवाबदेही चूंकि उसी की होती है, तो कहीं ऐसा तो नहीं कि वह चरित्र के भीतर कहीं खुद को ही खड़ा करने की कोशिश करता हो. . . खासकर अलकाजी के बारे में यह कहा जाता है! मैं यह कहना चाहता हूं कि वही 'रोल' यदि अलकाजी खुद करें तो वे ठीक उसी तरह से करेंगे, ज[illegible]का एक्टर करता है. . .?

हां, यह कहा [illegible] है. लेकिन यह सच उतना नहीं है जितना कहा जाता है. यह भी सही है कि 'अलकाजी' रंगमंच का एक बड़ा आदमी है. . . और शायद ही कोई शख्स उनकी बात टालने की हिम्मत करेगा. वे छूट देते हैं अपने एक्टर्स को. . . पर इस छूट का यह मतलब बिलकुल नहीं है कि एक्टर अपने ढंग से ही सब कुछ कहता रहे. सामूहिकता का एक दर्शन होता है. . . उसी के तहत इन लोगों को जीना होता है. थोड़ा-बहुत इंपेक्ट तो डायरेक्टर का आ ही जाता है. इसे दूसरे शब्दों में यूं भी कहा जा सकता है कि. . . यह 'अलकाजी टाइप्ड' है. लेकिन मेरे खयाल से, बावजूद इसके एक एक्टर को अपनी तरह से जीने का मौका जरूर मिलता है.

लंबे अर्से से अपने थिएटर-जीवन में आपने जिन डायरेक्टर्स के साथ काम किया है. . . कुछ उनके बारे में भी बतायेंगी?

हां, कुछ बहुत अच्छे लोगों के साथ काम करने का मौका मिला. इन सभी की अलग-अलग पहचान है. . . और यह, मेरे खयाल से जरूरी भी होता है. इससे 'टाइप्ड' होने का खतरा नहीं रहता. दर्शक को भी अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग तरह की चीजें देखने को मिल जाती हैं. उदाहरण के लिए **बेनविटज** हैं. . . जिनके साथ अभी हम लोगों ने **'ओथेलो'** किया. **'चेरी का बगीचा'** रिचर्ड सेसनर के साथ किया. **'मुख्यमंत्री'** रंजीत कपूर के साथ किया. **'महाभोज'** अमाल अल्लाना के साथ किया.

हर डायरेक्टर में तमाम खूबियां-खामियां होती हैं. उदाहरण के लिए रंजीत कपूर को ले लीजिए. . . जो उसका 'प्लस प्वांइट' है वही उसका 'माइनस प्वांइट' भी है. यह अपने एक्टर को 'स्पीच' पकड़ाने के बाद 'मूवमेंट' तक फ्री छोड़ देता है. . . कि अपने ढंग से इसे 'कन्सीव' कीजिए और अपने ढंग से 'प्रोजेक्ट' कीजिए. यह अपने-आपको प्रोजेक्ट करने का सबसे अच्छा मौका होता है. . . कि कोई डायरेक्टर उस पर लद नहीं रहा है. . . लेकिन दूसरी तरफ यही खामी भी है. . . जब डायरेक्टर की जवाबदेही होती ही है तो उसे चाहिए कि वह 'मूवमेंट' से लेकर 'स्पीच' तक और 'जैस्चर' से लेकर 'फार्म' तक बीच में आये. जहां कहीं एक्टर को जरा-सा खटका महसूस हो. . . वह आये और समझाये. दूसरी तरफ रिचर्ड सिकनर हैं. उसके साथ, सच कहती हूं, काम करने का सबसे अच्छा मौका मिला. उनका सोचने का अपना तरीका है. हमने पूरी तरह इंजॉय किया. . . जिसे रिलेक्स बोलते हैं. 'स्क्रिप्ट' देने के बाद उन्होंने [illegible] की तरह चलाया. उन्होंने कहा कि आप अपनी तरह से कन्सीव कीजिए. जहां तक आप जाना चाहें आप जायें, कोई सीमा नहीं है. 'ऑडियेंस पार्टिसिपेशन' उसमें आपने देखा ही होगा. 'चेरी का बगीचा' में ऑडियेंस सीधे सेट पर ही पहुंच जाती है. अलकाजी साहब एकदम अलहदा किस्म के थे. बैठकर फॉर्म पर बाकायदा बातचीत करते थे. रामगोपाल बजाज के सोचने के तरीके में जो 'डेप्थ' है, वह बहुत ही खूबसूरत है. वे बाकायदा यह कोशिश करते हैं कि एक्टर के साथ मिलकर काम करें. कभी-कभी यह दिक्कत भी पैदा हो जाती है कि एक्टर डायरेक्टर की समझ को एकदम दूसरी तरह से लेता है. . . पर इसमें कोई खास प्रॉब्लम नहीं होती. हम लोग बातचीत करके सुलझा लेते हैं.

इस दौरान आप लोगों में जो सामूहिक बातचीत होती है. . . वह अमूमन किस तरह की होती है?. . . और मंच पर एक्टर्स के आपसी रिश्ते किस किस्म के होते हैं? यानि कभी किसी एक्टर को अपनी जगह से किसी कारणवश स्लिप होना पड़े. . . या वह पूरी ऊर्जा और प्रभावन्विति के साथ काम नहीं कर पा रहा हो. . .तो?

(सूत्रधार के इस सवाल पर सुरेखा जी थोड़ी देर तक तो हंसती ही रहीं फिर कुछ देर बाद बोलना शुरू किया. . .)

होता है, अक्सर होता है. ऐसे में हम लोगों को उसे अपने ढंग से समझना जरूरी होता है. . . जब कोई अपनी लाइन छोड़ रहा है. . . या डायलॉग भूल रहा है. . . तो सामनेवाला एक्टर उसकी इन चीजों को बैलेंस करते हुए नाटक को आगे बढ़ा ले जाता है. **'बीबियों का मदरसा'** में **राजेश विवेक** हर रोज खुद को अलग-अलग ढंग से प्रस्तुत करता था. . .जो एक एक्टर को मैकेनिकल होने से भी बचाता है. पर कभी-कभी 'क्यू' गलत होने की संभावना रह जाती है. डायलॉग पूरा होने से पहले ही राजेश अपनी लाइन छोड़ देते हैं. . . जिसके पूरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे एक्शन करना था. तो ...ही उठकर उनसे कहती ...पने वह तो कहा ही नहीं, जो आपको कहना था. फिर याद आते ही राजेश दुहराते हैं. . . और मैं वहां से निकल जाती हूं.

'बीबियों का मदरसा' के दौरान एक बार मैंने उत्तरा से कहा कि राजेश ने यह गलती कर दी है. . . तो उसने कहा, रुको मैं अभी समझती हूं उसे. और बस, इसके बाद उत्तरा मारने के अभिनय की जगह सचमुच राजेश को मारने ही लगती है. . . बाद में राजेश को अपनी भूल का एहसास हो आता है. पर इस तरह की हंसी-मजाक के जरिए खास तरह के आत्मीय रिश्ते भी बनते हैं.

'महाभोज' में आपने 'जमना बहन' के रोल को किस तरह 'कन्सीव' किया. . . एक नेता की बीबी का चरित्र?

आस-पड़ोस की महिलाओं को देखा. जो चरित्र जीना हो, उसे खोजना पड़ता है. जमना बहन के रोल को अदा करने से पहले मैंने काफी मेहनत की थी.

'चेरी का बगीचा' करते हुए आपको ऐसा नहीं लगा कि संपत्ति का मोह, पारिवारिक संस्कार और परंपराएं लेकर जब आपने एक विदेशी नाटक किया तो आपको अपना करेक्टर कैसा लगा?

ईमानदारी की बात तो यह है कि यह चरित्र मैंने सही ढंग से जिया ही नहीं दर्शकों ने भले ही पसंद किया. डायरेक्टर की तरफ से भी खासी छूट मिली हुई थी. अब फिर कभी हुआ तो ज्यादा अच्छा कर सकूंगी.

कभी ऐसा भी लगता है आपको कि आपके जीने के तरीके और परिवार में कुछ अजीब-सी स्थिति आ गई है, जहां आप सहज अनुभव नहीं कर पा रही हैं.

(भावुक-सी होकर सुरेखाजी बोल रही हैं) सच बात तो यह है कि कभी-कभी बहुत ही बड़ी समस्या सामने आ जाती है. खासकर, जब मेरा बच्चा छोटा था. . . तब मैंने एक लंबी यातना को पूरा दौर ही झेला है. . . यह तकलीफ भी दरअसल तभी होती है जब हम अपने चरित्र की खोज पूरे 'सेंस ऑफ इन्वॉल्वमेंट' के साथ करना चाहते हैं और अपने इर्द-गिर्द की चीजें उसके आड़े आती हैं.

थिएटर-क्रिटिक और पत्रकारों को लेकर आपकी राय जानना चाहता हूं!

इसकी जो सच्चाई है, वह आप भी जानते हैं और मैं भी जानती हूं. इस पर बहस करने से कोई फायदा नहीं है.

दिल्ली के लोग आर्ट, थियेटर और म्यूजिक पर शौकिया ही लिखना शुरू कर देते हैं. जबकि थिएटर की अपनी भाषा है, अपना फॉर्म है. . . उसकी अपनी टर्मिनॉलोजी है. जब तक इस सबकी जानकारी आपको नहीं होगी, आप लिख कैसे सकते हैं? रंगमंच के पिछड़ने की असली वजह यही है कि थिएटर क्रिटिक्स और पत्रकारों ने 'थियेटर' को कोई तवज्जो नहीं दी.

(दूसरे दिन सूत्रधार फिर ऐन उसी वक्त सुरेखाजी के पास पहुंचा जब वे मनोहर भाई के कमरे में कार्यवाहक निदेशक के रूप में काम कर रही थीं. .. इस बार सुरेखाजी ने अपनी जिंदगी का वह अद्भुत पहलू उजागर किया जिसे बहुत कम लोग जान सके होंगे अब तक. . .)

बहुत अजीब कहानी है यह कि मैं 'रंगमंच' में आना नहीं चाहती थी. लेकिन मेरी मां का कला, साहित्य और संस्कृति की ओर जबर्दस्त रुझान था. आज मैं जो कुछ भी दिखाई दे रही हूं, सब उन्हीं की बदौलत हुआ है. दर-असल, एन. एस. डी. का फार्म तो मेरी मां ने छोटी बहन के लिए मंगाया था. . . पर परीक्षा में 'बिजी' होने की वजह से वह फार्म भर न सकी और मां ने मुझसे फार्म भरवा दिया. मैंने एडमीशन ले लिया और यहीं की होकर रह गयी.

'एक नाटककार की खोज में छः चरित्र' करते हुए आपने रुद्रसेनजी के साथ काम किया. यह अनुभव कैसा रहा? सूत्रधार फिर अपनी औकात पर उतर आया था.

वे अपने साथ कलकत्ते का एक्सपीरिएंस लेकर चले थे. एक पूर्वानुमान के तहत बना-बनाया ढांचा था. . . बदल गये थे तो महज एक्टर्स. जैसा वे चाहते थे, सभी चीजें वैसी ही रहीं. . . पर यह अच्छा नहीं रहा. 'थियेटर' के साथ यह बेमानी है.

कुछ लोग कहते हैं हिंदी में नाटक नहीं लिखे जा रहे . . . इसकी वजह क्या है?

'बेसिक फॉर्म' की समझ नहीं होती. . . ऐसे में रंगमंच, साहित्य और आलोचना वालों को एक साथ बैठकर काम करना चाहिए मन्नूजी के 'महाभोज' का उदाहरण लें. तमाम एक्टर्स इतनी तल्लीनता से बैठकर काम करते रहे कि उसका 'फॉर्म' ही चेंज हो गया. तमाम लोगों में उसे अपनी अपनी तरह से 'कन्सीव' किया और प्रोजेक्ट भी किया.

इसमें तकरीबन नौ महीने का वक्त लगा. इतना समय अमूमन होता कहां है?. . . पर हम लोगों की यह कोशिश बराबर रहती है कि हम लेखक के साथ मिल बैठकर काम करें.

. . . और अंत में जब सूत्रधार ने कहा कि आपके साथ बातचीत खूब बढ़िया रही. . . तो वे तपाक से बोलीं. . . यह 'इंटरवियू' था और यह जारी रहेगा. . . □

आगामी अंक में

सूत्रधार आपकी मुलाकात करवा रहे हैं एक जाने-माने यायावर रंगकर्मी से. . .जिसका सफर कभी अकेले शुरू हुआ था पर आज पूरा काफिला उसके साथ है. . .यानि- एम. के. रैना.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाड़ी की छत पर यात्रा करना गैरकानूनी है

ऐसा करने पर भारतीय रेल अधिनियम की धारा 118(2) के अन्तर्गत 3 महीने की सजा और जुर्माना हो सकता है। छत यात्रा खतरनाक भी है :

- आप अचानक झटके से गिर सकते हैं और
- ऊपरी पुल से टकरा सकते हैं।
- आपको बिजली की उच्च वोल्टेज शिरोपरि तारों से घातक करन्ट लग सकता है।

—मुख्य जन सम्पर्क अधिकारी, उत्तर रेलवे द्वारा प्रसारित

बैनेट, कोलमैन एण्ड कं. लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिये ऋचा जैन द्वारा नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स, 10 दरियागंज, नई दिल्ली-110 002 से मुद्रित व प्रकाशित. पंजी. कार्यालय : डॉ. दादा भाई नौरोजी रोड, बंबई-400 001.
शाखाएं : 7, बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110 002; [illegible]
कलकत्ता-700 069; 63, माउंट रोड, [illegible] कलकत्ता-700 014; कार्यालय : 13/1-2 [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

RAS
G6/TN/MS(C)/499

पंजीयत सं. D-(C)-779
पूर्व शुल्क के बिना डाक में डालने
की अनुमति-लाइसेंस सं. U-89

युवावस्था का सौभाग्य

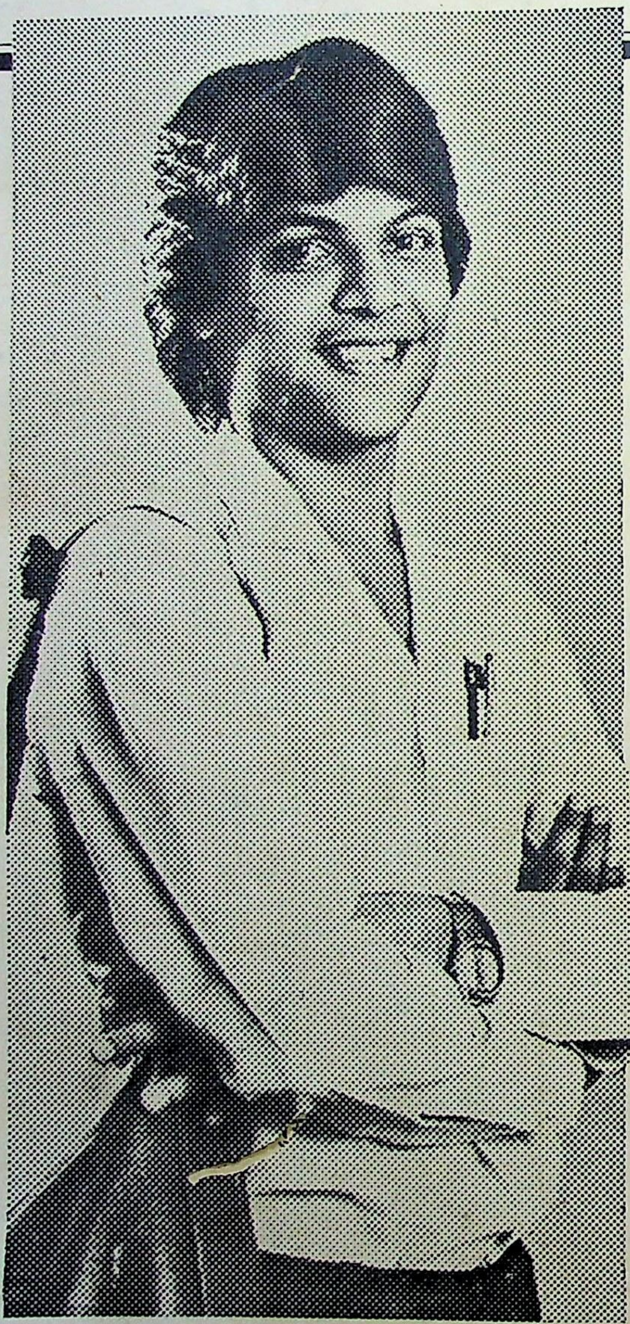

जीवन बीमा की दरें कम

बस, जल्दी ही आपकी जिम्मेदारियां बढ़ेंगी—आपकी शादी होगी व बच्चे होंगे। और उनकी सुरक्षा के लिए देर-सबेर आपको जीवन बीमा पालिसी लेनी ही पड़ेगी। जल्दी करने से आपको कम देना पड़ेगा (नवजवानों के लिए प्रीमियम कम है)।

बीमा कराने का यही समय है, जबकि आपकी सेहत बहुत ही अच्छी है; बीमारी या अधिक उम्र का मतलब होगा— अधिक प्रीमियम। आपका जीवन बीमा एजेन्ट आपको यह बता सकता है कि अन्य बचत या जमा योजनाओं की तुलना में जीवन बीमा पालिसी कहीं अधिक लाभकारी है।

आपकी जरूरतों के अनुसार तरह-तरह की जीवन बीमा पालिसियां हैं, जैसे कि प[illegible] बन्दोबस्ती/आजीवन पालिसी, [illegible] पालिसी, आजीवन पालिसी आ[illegible]का जीवन बीमा एजेन्ट सही पालिसी [illegible]ने में आपकी सहायता करेगा। पूरी जानकारी के लिए अपने जीवन बीमा एजेन्ट से सलाह या निकटतम जीवन बीमा कार्यालय से सम्पर्क कीजिये।

RADEUS/LIC/13

बढ़ती जरूरतों के लिए आज ही बीमा कराइए

भारतीय जीवन बीमा निगम

योगक्षेमं वहाम्यहम्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

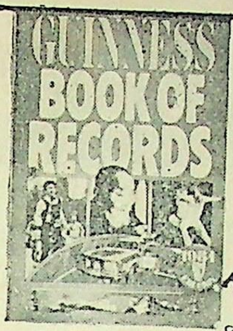

विश्व की 24 भाषाओं में
दुनिया का सबसे अधिक बिकने वाला
विश्वविख्यात संदर्भ-ग्रंथ

अब हिन्दी में भी उपलब्ध!

जिसके बिना आपकी हर जानकारी अधूरी है !

जिसके बिना दुनिया की हर लायब्रेरी अधूरी है !

जिसकी अब तक साढ़े चार करोड़ प्रतियां बिक चुकी हैं !

गिनेस
बुक ऑफ
वर्ल्ड रिकार्ड्स

चार अलग-अलग भागों में तथा सम्पूर्ण एक जिल्द में उपलब्ध !

मूल्य प्रत्येक भाग : 20/- डाकखर्च : 4/-
(कोई दो पर डाकखर्च माफ)

चारों भाग अलग-अलग : 72/-
चारों भाग एक में : 68/-
सजिल्द लायब्रेरी संस्करण : 80/-

साइज : डबल क्राउन (20" x 30"/8)
पृष्ठ संख्या : 546
असंख्य चित्रों व तालिकाओं सहित

In English Price Rs. 100/-

सचित्र

कोई दो या अधिक या पूरे सैट पर डाकखर्च माफ

कीर्तिमानों की अनूठी दुनिया - - - हजारों-हजार ज्ञानवर्द्धक व[illegible]क प्रामाणिक रिकार्डों का एकमात्र भण्डार ! जैसे :-- वि[illegible] लंबे, बौने, मोटे तथा पतले पुरुष, स्त्री या जुड़वां कहां, कब व कौन थे तथा अब हैं ■ सबसे भयंकर भूकम्प, ज्वालामुखी, तूफान या झंझावात कब, कहां आये ■ सबसे बड़े किले, इमारतें, बांध, पुल, सिनेमाघर, नाइट क्लब आदि कौन से तथा कहां हैं ■ हॉकी, क्रिकेट, फुटबाल, टेनिस आदि सैंकड़ों खेलों में कौन-कौन, क्या-क्या रिकार्ड-होल्डर हैं।

ऐसे ही दुनिया के सभी क्षेत्रों की महत्त्वपूर्ण घटनाओं, स्थानों, व्यक्तियों, वस्तुओं से संबंधित हजारों रिकार्डों का अपूर्व भण्डार।

किस भाग में किस विषय से संबंधित रिकार्ड्स हैं

भाग I ■ मानव जीवन ■ मानव उपलब्धियां ■ मानव संसार (पृष्ठ 1 से 144 तक)

भाग II ■ जीव-जगत ■ प्राकृतिक जगत ■ ब्रह्मांड एवं अंतरिक्ष ■ विज्ञान जगत (पृष्ठ 145 से 256 तक)

भाग III ■ कला एवं मनोरंजन ■ भवन एवं संरचनाएं ■ मशीनों की दुनिया ■ व्यापार जगत (पृष्ठ 257 से 416 तक)

भाग IV ■ खेल जगत (दुनिया भर के सभी खेल व खिलाड़ियों संबंधी रिकार्ड) (पृष्ठ 417 से 546 तक)

गिनेस बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स — 1984 का अंग्रेजी संस्करण भी उपलब्ध। मूल्य : 100/- पृष्ठ : 350 (सचित्र कलर में)

Vandana/PM/H-57

अपने निकट के बुक स्टाल एवं ए. एच. व्हीलर के रेलवे तथा बस अड्डों पर स्थित बुक स्टालों पर मांग करें

वी. पी. पी. द्वारा मंगाने के लिए लिखें

पुस्तक महल, खारी बावली, दिल्ली-6

नया शो-रूम : 10-B नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

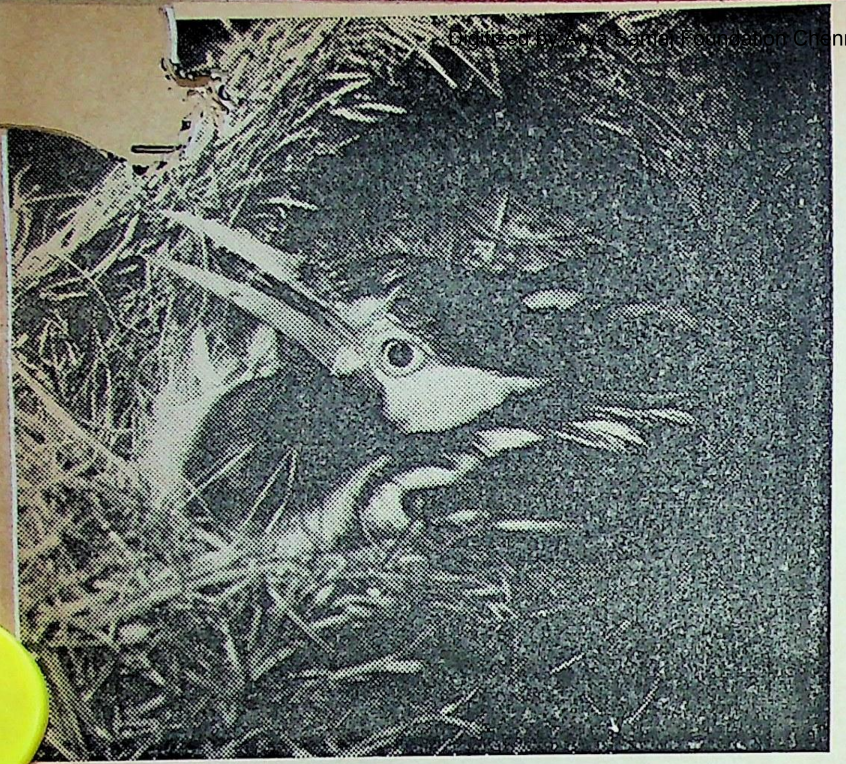

छायाः ज्ञान दीक्षित

दिल्ली हो या गुवहाटी, अपना खून, अपनी माटी!

हम अक्सर आवाज बुलंद करते हैं कि हम एक हैं, फिर भी क्या वजह है कि अखंड भारत कभी यहां से तो कभी वहां से खंड-खंड होता नजर आता है?——इस राजनीतिक मसले का जवाब देश की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में प्रस्तुत कर रही हैं——

मंजूर एहतेशाम, सुरेंद्र सुकुमार, जगदीश चंद्र पांडेय, अब्दुल बिस्मिल्लाह और मनमोहन कुमार की सशक्त कहानियां

▣ विशेष

पीढ़ियां : आमने-सामने

प्रख्यात लेखक, संपादक तथा जनवादी लेखक संघ के अध्यक्ष भैरवप्रसाद गुप्त के संग बैठकर साहित्य और साहित्यकारों से जुड़े अनेक सवालों पर हुई——रमेश उपाध्याय, काजी अब्दुस्सत्तार तथा प्रदीप मांडव आदि की बातचीत कि सन् 1936 से शुरू हुई प्रगतिशील आंदोलन की यात्रा में पड़ाव कौन-कौन-से थे और मंजिल अब कहां है!

फिल्मोत्सव

हाल ही में बंबई में संपन्न हुए अंतरराष्ट्रीय फिल्मोत्सव : 1984 के अंतर्गत प्रदर्शित देशी-विदेशी फिल्मों को साहित्यिक सामाजिक भावभूमि पर परखती नजर से लिखा गया——प्रख्यात कवि तथा समीक्षक कुंवर नारायण का विचारशील एवं विचारोत्तेजक आलेख.

● छाया कोलाजः संजीव

अगला अंक

▣ युवालेखन प्रतियोगिता

——**नर्मदेश्वर** की कहानी

▣ मेरे सात जनम

——प्रख्यात लेखक **हंसराज रहबर** की आत्मकथा का अगला क्रम

▣ मथुरा दास की डायरी

——डायरी का अगला पन्ना, जो न हंसाता है, न रुलाता है, न छेड़ता है बल्कि सब कुछ करवाते हुए मजबूर कर देता है कि हम सोचें और करें!

▣ तुलसीदास चंदन घिसें!

——'**नैतिकता का मोल**' यानी पुरस्कार का चंदन कैसे घिसा जाये और किसके माथे कब और क्यों तथा किससे पूछकर लगाया जाये. . .आदि मामलात पर **हरिशंकर परसाई** की नजर.

▣ गलियांः जहां इतिहास कैद है

——जाने-माने मगर गुमनाम हो चुके हादसों को खोज-खोजकर लायी हुई दास्तानों में समेटता और सुनाता **बाला दुबे** का स्थायी स्तंभ.

▣ दशार्क

——**जैनेंद्र कुमार** के धारावाही उपन्यास की अगली किस्त.

▣ तस्वीर बोलती है

——ज्ञान दीक्षित का चित्र

▣ भरतमुनि के वं

——बज्जू भाई उर्फ **रामगोपाल बजाज** से नाटक की दुनिया से जुड़े सवालों समेत सूत्रधार की मुलाकात.

आपकी बात, शरारत, कथा-सूत्र, लघु-कथा, ग़ज़ल, आसपास बिखरी कहानियां और भुलाये न बने, पखवारे की पुस्तकें, हलचल आदि सभी स्थायी स्तंभों सहित.

सारिका

16 फरवरी, 1984

पढ़ने का बेहतर जरिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar